INSTITUTE OF DISTANCE EDUCATION
Rajiv Gandhi University

# BAHIN201
# सामान्य हिंदी-दो (I)

## BA (HINDI)

## 3RD SEMESTER

Rajiv Gandhi University
www.ide.rgu.ac.in

# सामान्य हिंदी –दो (I)

बी.ए. (हिंदी)

(तृतीय सत्र)

MAHIN-201

**RAJIV GANDHI UNIVERSITY**
Arunachal Pradesh, INDIA – 791 112

# BOARD OF STUDIES

| | |
|---|---|
| **Prof. Shyam Shankar Singh, (Head)**<br>Dept. Of Hindi<br>Rajiv Gandhi University | **Chairman** |
| **Prof. Chandan Kumar**<br>Dept. Of Hindi<br>Delhi University | **External Member** |
| **Prof. Dilip Medhi**<br>Dept. Of Hindi<br>Guwahati University | **External Member** |
| **Prof. Oken Lego**<br>Dept. of Hindi<br>Rajiv Gandhi University | **Member** |
| **Dr. Arun Kumar Pandey**<br>Dept. of Hindi<br>Rajiv Gandhi University | **Co-ordinator** |


## Authors

**Dr. Urvija Sharma , Dr. Seema Sharma, Dr. Ashutosh Kumar Mishra & Dr. Amrendra Tripathi**



Revised Edition 2021



All rights reserved. No part of this publication which is material protected by this copyright notice may be reproduced or transmitted or utilized or stored in any form or by any means now known or hereinafter invented, electronic, digital or mechanical, including photocopying, scanning, recording or by any information storage or retrieval system, without prior written permission from the Publisher.

"Infomation contained in this book has been published by Vikas Publishing House Pvt. Ltd, and has been obtained by its Authors from sources believed to be reliable and are correct to the best of their knowledge. However, IDE-Rajiv Gandhi University, the publishers and its Authors shall be in no event be liable for any errors, omissions or damages arising out of use of this information and specifically disclaim any implied warranties or merchantability or fitness for any particular use"

Vikas® is the registered trademark of Vikas® Publishing House Pvt. Ltd.
Vikas® PUBLISHING HOUSE PVT LTD
E-28, Sector-8, Noida: 201301 (UP)
Phone: 0120-4078900 Fax: 0120-4078999
Regd. Office: 7561 Ravindra Mansion, Ram Nagar, New Delhi - 110055
Website: www.vikaspublishing.com Email: helpline @vikaspublishing.com

# विश्वविद्यालय : एक परिचय

राजीव गाँधी विश्वविद्यालय (पूर्व में अरुणाचल विश्वविद्यालय) अरुणाचल प्रदेश के प्रमुख उच्च संस्थानों में से एक है। स्वर्गीय श्रीमती इंदिरा गांधी ने जो तत्कालीन प्रधानमंत्री श्री व फरवरी 1984 को रोनो हिल्स पर विश्वविद्यालय की नींव रखी थी यही विश्वविद्यालय का वर्तमान कप विद्यमान है। आरंभ से ही राजीव गांधी विश्वविद्यालय श्रेष्ठता हासिल करने और उन लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए प्रयासरत है जो

आरंभ से ही राजीव गाँधी विश्वविद्यालय श्रेष्ठता हासिल करने और उन लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए प्रयासरत है जो विश्वविद्यालय अधिनियम में निहित है। 28 मार्च 1985 में विश्वविद्यालय को विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा सेक्शन 2 (F) के अंतर्गत अकादमिक मान्यता प्रदान की गई।

26 मार्च, 1994 में विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के सेक्शन 12.V के अंतर्गत इसे वित्तीय मान्यता मिली। तब से, राजीव गांधी विश्वविद्यालय ने देश के शैक्षिक परिदृश्य में अपना (तत्कालीन अरुणाचल विश्वविद्यालय) विशिष्ट स्थान बनाया है। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा गठित विशेषज्ञों की एक उच्च स्तरीय समिति द्वारा देश के उन विश्वविद्यालयों में राजीव गांधी विश्वविद्यालय को भी चुना गया जिनमें श्रेष्ठता हासिल करने की संभावनाएं व सामर्थ्य है।

9 अप्रैल 2007 से विश्वविद्यालय को मानव संसाधन विकास मंत्रालय, भारत सरकार की एक अधिसूचना के माध्यम से केंद्रीय विश्वविद्यालय का दर्जा दिया गया।

यह विश्वविद्यालय रोनो हिल्स की चोटी पर 302 एकड़ के विहंगम प्राकृतिक अंचल में स्थित है जहां से दिक्रोंग नदी का अदभुत दृश्य देखने को मिलता है। यह राष्ट्रीय राजमार्ग 52-A से 6.5 कि.मी . और राज्य की राजधानी ईटानगर से 25 किकी दूरी पर स्थित है। दिक्रोंग पुल के द्वारा कैंपस राष्ट्रीय .मी . राजमार्ग से जुड़ा हुआ है।

विश्वविद्यालय के शैक्षिक व शोध कार्यक्रम इस प्रकार तैयार किए गए है कि वे राज्य के सामाजिक, आर्थिक व सांस्कृतिक विकास में सकारात्मक भूमिका निभा सकें। विश्वविद्यालय स्नातक स्नातकोत्तर एमकार्यक्रम .डी .एच .फिल व पी . एड का कोर्स भी चलाता है। .भी संचालित करता है। शिक्षा विभाग बी

इस विश्वविद्यालय से 15 कॉलेज संबद्ध है। विश्वविद्यालय पड़ोसी राज्यों, विशेषकर असम के छात्रों को भी शैक्षिक सुविधाएं प्रदान कर रहा है। इसके

विभिन्न विभागों व इससे जुड़े कॉलेजों में छात्रों की संख्या में निरंतर वृद्धि हो रही है।

यूजीसी व अन्य फडिंग एजेंसियों की वित्तीय सहायता से संकाय सदस्य भी शोध गतिविधियों में सक्रिय रूप से भाग ले रहे हैं। आरंभ से ही विभिन्न फडिंग एजेंसियों द्वारा विश्वविद्यालय के विभिन्न शोध प्रस्तावों को स्वीकृत किया गया है। विभिन्न विभागों ने अनेक कार्यशालाओं, संगोष्ठियों व सम्मेलनों का आयोजन भी किया है। अनेक संकाय सदस्यों ने देश व विदेश में आयोजित सम्मेलनों व संगोष्ठियों में भाग लिया है देश विदेश के प्रमुख विद्वानों व विशिष्ट व्यक्तियों ने-1 विश्वविद्यालयों का दौरा किया है और अनेक विषयों पर अपने वक्तव्य भी प्रस्तुत किए है।

2000-2001 का अकादमिक वर्ष विश्वविद्यालय के लिए सुदृढीकरण का वर्ष रहा। वार्षिक परीक्षाओं से सेमेस्टर प्रणाली में परिवर्तन व्यवधानविहीन रहा और परिणामत छात्रों के प्रदर्शन में भी विशेष सुधार देखा गया बोर्ड ऑफ पोस्ट ग्रेजुएट स्टडीज़ द्वारा बनाए गए विभिन्न पाठ्यक्रमों को लागू किया गया यूजीसी इंफोनेट कार्यक्रम के तहत ERNET इंडिया द्वारा VSAT सुविधा प्रदान की गई ताकि इंटरनेट एक्सेस प्रदान की जा सके।

मूलभूत संरचनागत सीमाओं के बावजूद विश्वविद्यालय अकादमिक श्रेष्ठता बनाए रखने में सफल रहा है। विश्वविद्यालय अकादमिक कैलेंडर का अनुशासित रूप से पालन करता है परीक्षाएं समय पर संचालित की जाती है और परिणाम भी समय पर घोषित होते हैं विश्वविद्यालय के छात्रों को न केवल राज्य व केंद्रीय सरकार में नौकरी के अवसर प्राप्त हुए है बल्कि वे विभिन्न प्रतिष्ठित संस्थाओं उद्योगों व संस्थानों में नौकरी के अवसर प्राप्त करने में सफल रहे हैं। अनेक छात्र NET परीक्षाओं मैं भी सफल हुए हैं। अनेक छात्र परीक्षाओं में NET | भी सफल हुए हैं

आरंभ से अब तक विश्वविद्यालय ने शिक्षण, पाठ्यक्रम में नवीन परिवर्तन लाने व संरचनागत विकास में महत्वपूर्ण प्रगति की है |

# आईडीई एक परिचय

हमारे देश में उम शिक्षा प्रणाली को सीमित सीटों सुविधाओं और बुनियादी संसाधनों की कमी के कारण अनेक सामना करना पड़ रहा है। विषयों से जुड़े शिक्षाविद मानते है कि शिक्षा की प्रणाली से अधिक महत्वपूर्ण और जानना है। दूरस्थ शिक्षा प्रणाली इन सभी बुनियादी समस्याओं और समाजिकआर्थिक - बाधाओं को दूर करने का यह प्रणाली ऐसे लाखों लोगों की गुणवत्ता युक्त शिक्षा पाने की मांग की पूर्ति कर रही है जो अपनी रखना चाहते है मगर नियमित रूप महाविद्यालयों में प्रवेश नहीं ले पाते। यह प्रणाली उच्च शिक्षा प्राप्त करने की इच्छा रखने वाले बेरोजगार कार्यरत पुरुष और महिलाओं के लिए भी मददगार सिद्ध होती है। दूरस्थ शिक्षा प्रणाली उन लोगों के लिए भी उपयुक्त माध्यम है जो सामाजिक, आर्थिक अथवा अन्य कारणों से शिक्षा और शिक्षण संस्थानों से दूर हो गए या समय नही निकाल पाये। हमारा मुख्य उद्देश्य उन लोगों को उच्च शिक्षा की सुविधाएं प्रदान करना है जो मान्यता प्राप्त विश्वविद्यालय नियमित तथा व्यावसायिक शैक्षिक पाठ्यक्रमों में प्रवेश नहीं ले पाते विशेषकर अरुणाचल प्रदेश के ग्रामीण व भौगोलिक रूप से दूरदराज स्थित क्षेत्रों में व सामान्यतया उत्तरपूर्वी - भारत के दूरस्थ स्थित क्षेत्रों में रान2008 में दूरस्थ शिक्षा केंद्र का नाम परिवर्तित कर दूरस्थ शिक्षा संस्थान रखा गया दूरस्थ शिक्षार्थियों के लिए शिक्षा (आईटीई) के अवसरों का विस्तार करने के प्रयास जारी रखते हुए आईडीई ने2013-14 के शैक्षणिक सत्र में पांच स्नातकोत्तर विषयों शिक्षा अंग्रेजी), हिंदी, इतिहास और राजनीति विज्ञानको शामिल किया है।

दूरस्थ शिक्षा संस्थान में विश्वविद्यालय के पुस्तकालय के पास ही शारीरिक विज्ञान संकाय भवन पहली मंजिल का निर्माण किया गया है। ) विश्वविद्यालय परिसर राष्ट्रीय राजमार्ग 52 ए के एनईआरआईएसटी बिंदु से 6 किलोमीटर की दूरी पर स्थित है। विश्वविद्यालय की बसें एनईआरआईएसटी के लिए नियमित रूप से चलती रहती है।

**दूरस्थ शिक्षा संस्थान की अन्य विशेषताएं**

.1 **नियमित माध्यम के समकक्ष**-पात्रता, अर्हताएं, पाठ्यचर्या सामग्री, परीक्षाओं का माध्यम और डिग्री राजीव गांधी विश्वविद्यालय और विश्वविद्यालय के विभागों के समकक्ष हैं।

2. **स्वयं शिक्षण अध्ययन सामग्री -(एसआईएसएम)**छात्रों को संस्थान द्वारा तैयार और दूरत्व शिक्षा परिषद नई दिल्ली द्वारा अनुमोदित (डीईसी) स्वयं शिक्षण अध्ययन सामग्री प्रदान की जाती है। यह सामग्री प्रदेश के समय आईडीई और अध्ययन केंद्रों में उपलब्ध कराई जाती है। यह

सामग्री हिंदी विषय के अलावा सभी विषयों में अंग्रेजी में ही उपलब्ध कराई जाती है।

3. **संपर्क और परामर्श कार्यक्रम (सीसीपी)** कार्यक्रम के प्रत्येक पाठ्यक्रम में व्यक्तिगत संपर्क द्वारा लगभग 7-15 दिनों की अवधि का परामर्श शामिल है। बीए के .पाठ्यक्रमों हालांकि व्यावसायिक पाठ्यक्रमों और एम .ए. के लिए सीसीपी में उपस्थिति अनिवार्य .लिए सीसीपी अनिवार्य नहीं है। होगी।

.4 **फील्ड प्रशिक्षण और प्रोजेक्ट** -व्यावसायिक पाठ्क्रमों में फील्ड प्रशिक्षण और संबंधित विषय में प्रोजेक्ट लेखन का आवश्यक प्रावधान होगा।

5. **परीक्षा एवं निर्देश का माध्यम** -परीक्षा और शिक्षा का माध्यम उन विषयों को छोड़कर जिनमें संबंधित भाषा में लिखने की जरूरत हो, अंग्रेजी होगा।

6. **विषय परामर्श संयोजक** -पाठ्य सामग्री को तैयार करने के लिए आईडीई विश्वविद्यालय के अंदर और बाहर विषय समन्वयकों की नियुक्ति करती है। विश्वविद्यालय द्वारा नियुक्त परामर्श समन्वयक पीसीसीपी के अनुदेशों को प्रभावी रूप से लागू करने के लिए विश्वविद्यालय के विभिन्न विभागों से जुड़े रहते हैं ये परामर्श समन्वयक परामर्श कार्यक्रम के सुचारु रूप से संचालन तथा विद्यार्थियों के एसाइनमेंट्स का मूल्यांकन करने के लिए संबंधित व्यक्तियों से संपर्क कर आवश्यक समन्वय करते हैं। विद्यार्थी भी इन परामर्श समन्वयकों से संपर्क कर अपने विषय से संबंधित परेशानियों और शंकाओं का समाधान प्राप्त कर सकते हैं।

## SYLLABI-BOOK MAPPING TABLE

## 'सामान्य हिंदी-दो (I)

| Syllabi- BAHIN-201 | Mapping in Book |
|---|---|
| **इकाई : 1**<br>परिचय ; हिंदी साहित्य के अध्ययन की पूर्वपीठिका; हिंदी साहित्य इतिहास लेखन परंपरा ; हिंदी साहित्य इतिहास का काल-विभाजन; सीमा निर्धारण एवं नामकरण | **इकाई : 1** **हिंदी साहित्य का इतिहास -I** |
| **इकाई 2 :**<br>परिचय ; जयशंकर प्रसाद सामान्य परिचय :; पाठ्य कविताएँ ; आलोचनाप्रसाद की - काव्यगत विशेषताएँ; प्रसाद के काव्य में जागरण के स्वर; सुमित्रानंदन पन्त सामान्य : परिचय; पाठ्य कविताएँ ; आलोचना – पन्त काव्य में प्रकृति ; छायावादी काव्य भाषा और पन्त | **इकाई : 2** **छायावादी कवि I –** |
| **इकाई : 3**<br>परिचय ; नागार्जुन सामान्य परिचय :; पाठ्य कविताएँ; आलोचना – जनकवि नागार्जुन; काव्यगत चेतना ; अज्ञेय सामान्य परिचय :; पाठ्य कविताएँ ; आलोचनाप्रयोगवाद और - अज्ञेय | **इकाई : 3** **आधुनिक कवि I –** |
| **इकाई : 4**<br>परिचय ; पत्र लेखन ; प्रभावी पत्र लेखन ; पत्र लेखन के प्रकार | **इकाई : 4** **व्यवहारिक हिंदी I –** |
| **इकाई : 5**<br>परिचय ; अनुवाद सामान्य परिचय :; अनुवाद : अर्थ एवं स्वरुप; अनुवाद के क्षेत्र ; अनुवाद के स्वरुप ; अनुवाद के प्रकार ; अनुवाद के गुण ; अंग्रेजी से हिंदी में अनुवाद | **इकाई : 5** **अनुवाद I –** |

# विषय-सूची

## परिचय

**इकाई 1 : हिंदी साहित्य का इतिहास – I**

1.0 परिचय

1.1 हिंदी साहित्य के अध्ययन की पूर्वपीठिका

1.1.1 हिंदी साहित्य इतिहास लेखन परंपरा

1.1.2 हिंदी साहित्य इतिहास का काल-विभाजन

1.1.3 सीमा निर्धारण एवं नामकरण

**इकाई 2 : छायावादी कवि – I**

2.0 परिचय

2.1 जयशंकर प्रसाद : सामान्य परिचय

2.1.1 पाठ्य कविताएँ

2.1.2 आलोचना- प्रसाद की काव्यगत विशेषताएँ

2.1.3 प्रसाद के काव्य में जागरण के स्वर

2.2 सुमित्रानंदन पन्त : सामान्य परिचय

2.2.1 पाठ्य कविताएँ

2.2.2 आलोचना – पन्त काव्य में प्रकृति

2.2.3 छायावादी काव्य भाषा और पन्त

**इकाई 3 : आधुनिक कवि – I**

3.0 परिचय

3.1 नागार्जुन : सामान्य परिचय

3.1.1 पाठ्य कविताएँ

3.1.2 आलोचना – जनकवि नागार्जुन

3.1.3 काव्यगत चेतना

3.2 अज्ञेय : सामान्य परिचय

3.2.1 पाठ्य कविताएँ

3.2.2 आलोचना- प्रयोगवाद और अज्ञेय

**इकाई 4 : व्यवहारिक हिंदी – I**

4.0 परिचय

4.1 पत्र लेखन

4.1.1 प्रभावी पत्र लेखन

4.1.2 पत्र लेखन के प्रकार

**इकाई 5 : अनुवाद – I**

5.0 परिचय

5.1 अनुवाद : सामान्य परिचय

5.2 अनुवाद : अर्थ एवं स्वरुप

5.3 अनुवाद के क्षेत्र

5.4 अनुवाद के स्वरुप

5.5 अनुवाद के प्रकार

5.6 अनुवाद के गुण

5.7 अंग्रेजी से हिंदी में अनुवाद

# इकाई 1 हिंदी साहित्य का इतिहास –I

**1.0**

किसी भी साहित्य का अपना एक 'इतिहास' होता है। अतीत के यथार्थ स्वरूप का अनुशीलन ही इतिहास है। भारत यथार्थ की अपेक्षा आदर्श को अधिक महत्व देता रहा है। अतः इस देश में इतिहास लिखने की प्रवृत्ति कम रही। किंतु किसी भी देश के साहित्य के सम्यक मूल्यांकन में इतिहास की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। दूसरे शब्दों में, इतिहास की जानकारी के बिना साहित्य के क्रमिक विकास को समझा नहीं जा सकता। यह इतिहास ही है जो साहित्य की विभिन्न रचनाओं, परंपराओं और प्रवृत्तियों का विश्लेषण करता है, साथ ही आगे की दिशा निर्देशित करता है। किसी भी साहित्य की प्रेरक शक्ति और बदलती हुई प्रवृत्तियों को समझने में इतिहास की सहायता लेनी पड़ती है।

यह प्रश्न स्वाभाविक है कि 'इतिहास' एवं 'साहित्य के इतिहास' में क्या अंतर है। सामान्य अवधारणा के अनुसार, "इतिहास वह होता है जिसमें देश की राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक स्थिति का वर्णन होता है। यह वर्णन अतीत में घटित घटनाओं से संबद्ध होता है।" यहां हमारा अभिप्राय 'साहित्य के इतिहास' से है जिसके अंतर्गत साहित्य विशेष का इतिहास प्रस्तुत करते समय भी तत्कालीन समाज की मदद ली जाती है, क्योंकि साहित्य भी समाज का ही प्रतिबिंब है। समाज साहित्य रूपी दर्पण में स्वयं को पहचानता है। इतिहास न केवल अतीत से हमें परिचित कराता है, बल्कि वर्तमान के परिप्रेक्ष्य में अतीत का मूल्यांकन भी करता है। साहित्य का इतिहास लिखते समय इतिहासकार न केवल

सामग्री का संकलन करता है वरन् उसे कालखंडों में विभक्त करके उनका नामकरण भी करता है। विभिन्न पद्धतियों पर विमर्श भी साहित्य के इतिहास लेखन का केंद्रबिंदु होता है। इस क्रम में लेखक को अनेक कठिनाइयों का सामना करना होता है, यथा – साहित्य का आरंभ कब से माना जाए, साहित्य एवं साहित्यकार की प्रवृत्तियों को एक कालखंड में विभक्त करना भी उसका विषय होता है।

हम हिन्दी साहित्य के इतिहास में 'काल–विभाजन व नामकरण' की समस्या पर विचार करेंगे। किसी भी विषयवस्तु का बौद्धिक एवं वैज्ञानिक अध्ययन करने के लिए उसे किन्हीं काल्पनिक पक्षों, खंडों, वर्गों या तत्वों में विभक्त कर लिया जाता है जिससे कि उसके विभिन्न अवयवों को सम्यक रूप मे ग्रहण किया जा सके। ऐसा न केवल सैद्धांतिक क्षेत्र में, अपितु व्यावहारिक क्षेत्र में भी किया जाता है।

जब हम हिन्दी साहित्य को देखते हैं तो पाते हैं कि भारत की राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक परिस्थितियों का हिन्दी साहित्य पर गहरा प्रभाव पड़ा। हिन्दी साहित्य को नई–नई दिशाएं, नए–नए रूप और आयाम प्राप्त हुए। हिन्दी साहित्य में ही नहीं, समूचे भारत की प्रमुख भाषाओं के साहित्य में परिवर्तन और नवीनता के लक्षण 19वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में ही दिखाई देते हैं। आचार्य शुक्ल ने 1900 ई. (1843) से हिन्दी साहित्य का आरंभ माना है।

वास्तव में 'आधुनिक' शब्द सापेक्षिक है। जहां 'आधुनिक' शब्द काल सापेक्षता को व्यक्त करता है वहीं यह नवीनता, वैज्ञानिक दृष्टि, बौद्धिकता और तर्क–वितर्क की प्रवृत्ति का भी सूचक है। आज जीवन और साहित्य में 'आधुनिक' से यही तात्पर्य है। साहित्य के इतिहास– लेखकों ने हिन्दी साहित्य के इतिहास के उस काल को 'आधुनिक' कहा है, जिसमें हमारे देश का संपर्क पश्चिमी सभ्यता, संस्कृति, भाषा, जीवन–पद्धति, राजनीति, शासन–व्यवस्था, विज्ञान से हुआ।

लगभग दो सौ वर्षों के ब्रिटिश शासन ने भारत में परिवर्तन के ऐसे दृश्य उपस्थित कर दिए, जिनकी कल्पना भी नहीं की गई थी। हिन्दी जगत ने पश्चिमी जगत के जीवन मूल्यों वाली सभ्यता–संस्कृति, भाषा और भौतिक विज्ञान की शक्ति को चुनौती के रूप में खड़ा पाया। हिन्दी जगत ने इन नई परिस्थितियों को देखा, समझा, संघर्ष भी किया और उनसे समझौते का मार्ग भी अपनाया। भारतीय चिंतकों एवं साहित्यकारों ने अनेक सामाजिक, धार्मिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक आंदोलनों द्वारा आधुनिक भारत एवं आधुनिक हिन्दी साहित्य के निर्माण में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

प्रस्तुत इकाई में हिन्दी साहित्य के इतिहास की पूर्वपीठिका, हिन्दी साहित्येतिहास लेखन की परंपरा, हिन्दी साहित्य के इतिहास का काल–विभाजन, सीमा निर्धारण एवं नामकरण तथा आधुनिककालीन काव्य जैसे भारतेन्दु युग, द्विवेदी युग, छायावाद, प्रगतिवाद, प्रयोगवाद, स्वातंत्र्योत्तर कविता आदि का परिचय एवं प्रवृत्तियों का उल्लेख किया गया है।

## 1.1 इकाई के उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप–

- हिन्दी साहित्य के इतिहास की पूर्वपीठिका को जान पाएंगे,
- हिन्दी साहित्येतिहास लेखन की परंपरा को समझ पाएंगे,
- हिन्दी साहित्य के काल–विभाजन, सीमा निर्धारण एवं नामकरण की व्याख्या कर पाएंगे,
- आधुनिककालीन काव्य की विशेषताओं से परिचित हो पाएंगे,
- भारतेन्दु युग व द्विवेदी युग का परिचय एवं प्रवृत्तियों को जान पाएंगे,
- छायावाद, प्रगतिवाद एवं प्रयोगवाद का तुलनात्मक अध्ययन कर पाएंगे,
- स्वातंत्र्योत्तर कविता के परिचय एवं प्रवृत्तियों की समीक्षा कर पाएंगे।

## 1.2 हिन्दी साहित्येतिहास के अध्ययन की पूर्वपीठिका

'इतिहास' संस्कृत भाषा के तीन शब्दों से मिलकर बना है–इति + ह + आस। 'इति' का अर्थ होता है 'ऐसा ही', 'ह' का अर्थ है 'निश्चित रूप से' और 'आस' का अर्थ होता है 'था'। इस प्रकार, इतिहास का शाब्दिक अर्थ हुआ – निश्चित रूप से ऐसा ही हुआ था, अर्थात जो घटनाएं भूतकाल में घटित हुई हैं, उन्हीं के क्रमबद्ध तथा विवेचनात्मक वर्णन को 'इतिहास' कहा जाता है।

व्यापक अर्थ में, इतिहास वह सामाजिक शास्त्र है जो हमें भूतकाल के लोगों के राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक तथा सांस्कृतिक जीवन का परिचय कराता है। यह वर्णन क्रमबद्ध वैज्ञानिक विवेचन होता है। वैज्ञानिक दृष्टि से इतिहास में घटनाओं, परिस्थितियों या क्रियाकलापों और रचनाओं की व्याख्या कालक्रमानुसार होती है, किंतु इसका अर्थ यह भी नहीं है कि यदि हम किसी भी विषय की घटनाओं या रचनाओं का विवरण कालक्रमानुसार कर दें तो वह 'इतिहास' की संज्ञा का अधिकारी हो जाएगा। वस्तुतः इतिहास का लक्ष्य घटनाओं या रचनाओं का विवरण प्रस्तुत करना मात्र नहीं होता, अपितु वह उनमें घटित या रचित होने के कारणों एवं आधारभूत तथ्यों की खोज करता है। दूसरे शब्दों में, वह ऐतिहासिक घटनाओं या रचनाओं के उद्गम स्रोतों या प्रेरणास्रोतों की व्याख्या तर्कसम्मत ढंग से करता है। इतिहास का संबंध अतीत की घटनाओं से है, मूलरूप से उन घटनाओं से जो वास्तविक एवं यथार्थ हों। इसमें किसी भी तथ्य, तत्व और प्रवृत्ति का वर्णन, विवेचन और विश्लेषण कालक्रम की दृष्टि से किया जाता है। इतिहास में घटनाएं होती हैं, तथ्य होते हैं, पर यह अपने–आप में इतिहास नहीं है। यह इतिहास का साधन मात्र है। इतिहास में तथ्यों के आधार पर युगविशेष का मूल्यांकन होता है। वस्तुतः इतिहास तथ्य और दृष्टिकोण, अनुसंधान और व्याख्या का सामंजस्य प्रस्तुत करता है। इतिहासकार तथ्यों का संकलन करके अपने तथा युग के दृष्टिकोण के अनुरूप व्याख्या करता है। इस प्रकार, शोध और व्याख्या में क्रिया–प्रतिक्रिया का संबंध रहता है।

इतिहास केवल अतीत ही नहीं है, वरन वर्तमान का पुनर्मूल्यांकन भी है। यह भविष्य की कल्पना भी है। इस प्रकार, यह वर्तमान और भविष्य का सेतु भी है। दूसरे शब्दों में, यदि यह कहें कि इतिहास मात्र बीते दिनों का लेखा–जोखा नहीं, अपितु वर्तमान का संवाद भी होता है, इस प्रकार सदैव प्रासंगिकता सिद्ध करता है।

## साहित्य का इतिहास

साहित्य के इतिहास में साहित्य की विकासमान परंपरा, उसके उद्‌भव से आज तक की स्थिति का क्रमबद्ध अध्ययन किया जाता है। इस संदर्भ में आचार्य रामचंद्र शुक्ल का कथन उल्लेखनीय है – "जबकि प्रत्येक देश का साहित्य वहां की जनता की चित्तवृत्ति का संचित प्रतिबिंब होता है, तब यह निश्चय है कि जनता की चित्तवृत्ति के परिवर्तन के साथ–साथ साहित्य के स्वरूप में भी परिवर्तन होता चला जाता है। आदि से अंत तक इन्हीं चित्तवृत्तियों की परंपरा को परखते हुए साहित्य परंपरा के साथ उनका सामंजस्य दिखाना 'साहित्य का इतिहास' कहलाता है।" (हिन्दी साहित्य का इतिहास, आचार्य रामचंद्र शुक्ल, पृ. 10.)

जिस प्रकार इतिहास साहित्य से प्रभावित होता है, ठीक उसी प्रकार साहित्य भी इतिहास से प्रभावित होता है। श्रेष्ठ साहित्य का इतिहास वही है, जिसमें साहित्य के इतिहास को देश के इतिहास का एक अंग–रूप समझकर साहित्य की प्रवृत्तियों तथा अन्य प्रवृत्तियों के साथ संगति बिठाई जाए और बाह्य प्रभावों तथा अन्य प्रेरक शक्तियों के साथ आंतरिक भावों और जीवन–रस का दिग्दर्शन कराया जाए। उसमें कवियों के काल संबंधी विवेचन के साथ–साथ उनके काव्य–सौंदर्य का विश्लेषण भी होना चाहिए।

साहित्य का इतिहास अतीत में लिखे गए साहित्य या साहित्यकार का ब्यौरा मात्र नहीं है। जिस प्रकार इतिहास आज राजाओं के जीवन–चरित्र एवं राजनीतिक घटनाओं का संकलन मात्र नहीं है, उसी प्रकार साहित्य का इतिहास मात्र रचनाओं और रचयिताओं का परिचय–ग्रंथ नहीं है। किसी भी साहित्य के इतिहास को समझने के लिए उससे संबंधित जातीय परंपराओं, राष्ट्रीय और सामाजिक स्थिति एवं सामाजिक परिस्थितियों का विवेचन–विश्लेषण ज़रूरी है। इसका कारण यह है कि किसी भी देश का साहित्य उस देश के सामाजिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक वातावरण को प्रतिबिंबित करता है। साहित्य की प्रवृत्तियां समाज की प्रवृत्तियों का प्रतिबिंब होती हैं। इस संदर्भ में आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी का मत उल्लेखनीय है – "साहित्य का इतिहास ग्रंथों और ग्रंथकारों के उद्‌भव और विलय की कहानी नहीं, वह कालस्रोत में बहे बीते हुए जीवंत समाज की विकास कथा है। ग्रंथकार और ग्रंथ उस प्राणधारा की ओर इशारा करते हैं। वे ही मुख्य नहीं हैं, मुख्य है वह प्राणधारा, जो नाना परिस्थितियों से गुजरती हुई आज हमारे भीतर अपने–आप को प्रकाशित कर रही है। साहित्य के इतिहास में हम अपने–आप को पढ़ने का सूत्र पाते हैं।

वस्तुतः साहित्य की प्रगति, परंपरा, निरंतरता और विकास को व्याख्यायित करना ही साहित्य के इतिहास का लक्ष्य है। साहित्येतिहास साहित्य की विकासशील प्रक्रिया का उद्‌घाटन करता है और इस क्रम में नये और पुराने के संघर्ष को भी रेखांकित करता चलता है। साहित्य के इतिहास लेखन में अतीत को ठीक से परखने और समझने के लिए वर्तमान की सही समझ ज़रूरी है।

साहित्य के इतिहास में कृतियों का मूल्यांकन भी होता है। उसके विचार पक्ष और कला पक्ष पर विचार किया जाता है। साहित्य का इतिहास केवल रूप और वस्तु का इतिहास नहीं होता, वह रचना में व्यक्त रचनाकार की सृजनशील चेतना का भी इतिहास होता है। मगर साहित्य के इतिहास में एक ओर जनता की चित्तवृत्ति, परंपरा, नये–पुराने के संघर्ष का मूल्यांकन होता है तो दूसरी ओर, रचना और रचनाकार की सृजनात्मक क्षमता को भी वर्तमान पर कसा जाता है।

साहित्य का इतिहास मानव चिंतनधारा के विकासक्रम को निरूपित करने के साथ–साथ अभिव्यंजना–शिल्प के क्रमिक विकास को भी दर्शाता है। उसमें युगविशेष के व्यक्तित्व का उद्घाटन होता है। जहां एक ओर जातीय जीवन की प्रामाणिक झांकी देखने को मिलती है, वहीं दूसरी ओर साहित्यिक मूल्यों का मूल्यांकन भी होता है। यह एक ऐसी विधा है, जिसमें शोध, इतिहास, समीक्षा सबके तत्व सम्मिलित होते हैं।

## साहित्येतिहास लेखन के विविध पक्ष

किसी भी साहित्य का इतिहास लिखते समय इतिहासकार को कई चरणों से गुजरना पड़ता है। इसमें स्रोत–सामग्री का संकलन प्रमुख है। तत्पश्चात वह विशिष्ट रचनाकारों और रचनाओं की पहचान करता है। परंपरा के वैज्ञानिक अनुशीलन के उपरांत काल–विभाजन व नामकरण की समस्या पर विचार करता है। इस हेतु वह विभिन्न प्रवृत्तियों का अवलोकन व विश्लेषण करता है। तदुपरांत वह युगविशेष और प्रवृत्ति के अंतर्संबंध का विश्लेषण करते हुए वर्तमान संदर्भ में उनका मूल्यांकन करता है। इस प्रकार उसे निम्न चरणों से गुजरना होता है–

- **सामग्री–संकलन** – किसी भी साहित्य का इतिहास लिखने के लिए सामग्री–संकलन अति आवश्यक है। यह इतिहास लेखन की पूर्व पीठिका के रूप में काम करता है। तथ्य आधारभूत स्रोत के रूप में काम करते हैं। तथ्यों की खोज के क्रम में वह पुराने साहित्य और साहित्यकार संबंधी अनुसंधानों, कृतियों के प्रामाणिक और सुसंगठित संस्करणों, आकार, ग्रंथ सूची, शिष्ट और लोकसाहित्य की समुचित विवरणी और सामाजिक, राजनीतिक एवं सांस्कृतिक स्थितियों के प्रामाणिक इतिहास–ग्रंथों से गुजरता है।
- **काल–विभाजन और नामकरण**– इतिहास लेखक पूरे इतिहास को विभिन्न कालों और युगों में विभक्त करके काल–विभाजन करता है। यद्यपि काल का प्रवाह अविच्छिन्न है तथा भूत, वर्तमान व भविष्य एक–दूसरे में अनुस्यूत रहते हैं, किंतु काल–विभाजन से तत्कालीन साहित्य व समाज की दशा व दिशा निर्धारित की जा सकती है। काल–विभाजन का लक्ष्य अंततः इतिहास की विभिन्न परिस्थितियों के संदर्भ में उसकी घटनाओं एवं प्रवृत्तियों के विकासक्रम को स्पष्ट करना होता है। साहित्य की अंतर्निहित चेतना के क्रमिक विकास, उसकी परंपराओं के उत्थान–पतन एवं उसकी विभिन्न प्रवृत्तियों के दिशा–परिवर्तन आदि के कालक्रम को स्पष्ट करना ही काल–विभाजन का लक्ष्य होता है।

साहित्य का काल–विभाजन करते समय साहित्यिक आधार पर किया काल–विभाजन सर्वश्रेष्ठ होता है। इस संदर्भ में आचार्य नलिन विलोचन शर्मा का कथन दृष्टव्य है– "यदि हम मानते हैं कि मनुष्य के राजनीतिक, सामाजिक, बौद्धिक या भाषा–वैज्ञानिक विकास से संयुक्त रहते हुए साहित्य का स्वतंत्र विकास होता है और दूसरा पहले का निष्क्रिय प्रतिबिंब नहीं है, तो हम अनिवार्यतः इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि साहित्यिक युग विशुद्ध साहित्यिक मानदंड के सहारे निर्धारित होने चाहिए।" (साहित्य का इतिहास दर्शन, आचार्य नलिन विलोचन शर्मा, पृ. 57)

इसी प्रकार डॉ. मैनेजर पांडेय ने कहा है– "साहित्य का इतिहास वर्तमान की चेतना के परिप्रेक्ष्य में ही अतीत की सार्थकता की व्याख्या करके वर्तमान के लिए उसे उपयोगी और प्रासंगिक बनाता है।" (साहित्य और इतिहास दृष्टि, मैनेजर पांडेय, पृ. 1–2)

अतः काल–विभाजन और नामकरण यथासाध्य साहित्यिक आधार पर किया जाना चाहिए, यद्यपि यह साहित्यिक आधार परिवेशगत परिस्थितियों से पूर्णतः असंयुक्त नहीं हो सकता।

## 1.2.1 हिन्दी साहित्येतिहास लेखन परंपरा

हिन्दी साहित्येतिहास लेखन के लिए रुझान उन्नीसवीं शती के आरंभ से हुआ। यद्यपि इससे पूर्व भी यदा–कदा रचनाकारों के जीवनवृत्त व कृतित्व का परिचय देने की परंपरा रही, किंतु इसे पूरी तरह इतिहास–लेखन की संज्ञा नहीं दी गई। चौरासी वैष्णवन की वार्ता, दो सौ वैष्णवन की वार्ता भक्तमाल, कविमाला, कालिदास–हजारा आदि ऐसे ही ग्रंथ हैं।

यदि हिन्दी साहित्य पर दृष्टि डालें तो हिन्दी साहित्य का सबसे पहला इतिहास एक फ्रांसीसी विद्वान गार्सा द तासी ने *इस्त्वार द ला लितरेत्युर ऐंदुई ऐ ऐंदुस्तानी* नामक ग्रंथ लिखा था। उसका पहला भाग सन् 1839 में और दूसरा भाग सन् 1847 में छपा था। इसमें अंग्रेजी वर्णक्रम में लगभग सत्तर कवियों और कवयित्रियों का विवरण है (संदर्भ : हिन्दी साहित्य का सुबोध इतिहास, बाबू गुलाब राय, पृ.सं. 03)। किंतु इसमें काल–विभाजन, युगीन–प्रवृत्तियों और परंपरा के विवेचन का कोई प्रयास नहीं किया गया है। अतः इसे 'इतिहास' की अपेक्षा 'वृत्त संग्रह' कहना अधिक संगत रहेगा।

इसके पश्चात जो महत्वपूर्ण ग्रंथ निकला वह शिवसिंह सेंगर का 'शिवसिंह सरोज' है। इसका रचनाकाल 1883 है। इसमें कवियों की संख्या में वृद्धि हुई। इसमें लगभग एक हजार कवियों की कविताएं सम्मिलित हैं। मूलतः यह एक काव्य संग्रह है, किंतु इसमें अनेक कवि व कविताओं को इकट्ठा करने का महत्वपूर्ण कार्य किया। बाद के कवियों के लिए यह स्रोत का काम करता है। परंतु यह दोनों संग्रह जीवनी रूप में ही रहे। इनमें विभिन्न कालों का विवेचन नहीं था।

जार्ज ग्रियर्सन ने पहली बार *द मार्डन वर्नेक्युलर लिटरेचर ऑफ हिंदुस्तान* में कवियों व लेखकों का कालक्रमानुसार वर्गीकरण किया। साथ ही साथ उनकी प्रवृत्तियों को उद्घाटित करने का प्रयास किया। ग्रियर्सन ने तत्कालीन युग के सांस्कृतिक परिवेश और प्रेरणास्रोतों के उद्घाटन का भी प्रयास किया। वस्तुतः इसे हिन्दी साहित्य का पहला इतिहास ग्रंथ कहा जा सकता है। उन्होंने पथप्रदर्शक की भूमिका का निर्वहन किया।

क्रमबद्ध इतिहास के रूप में सबसे पहला ग्रंथ *मिश्रबंधु विनोद* (तीन–भाग) का प्रकाशन 1913 ई. में हुआ एवं चौथा भाग 1934 ई. में प्रकाशित हुआ। इसमें काल–विभाजन के साथ नागरी प्रचारिणी सभा की खोज के फलों का पूर्ण समावेश कर दिया गया। इसमें लगभग पांच हजार कवियों का उल्लेख है। यह ग्रंथ सूचनाओं का अपार भंडार है, जो आगामी साहित्यकारों के लिए बहुत उपयोगी रहा। हिन्दी का सर्वाधिक व्यवस्थित इतिहास आचार्य रामचंद्र शुक्ल द्वारा रचित "हिन्दी साहित्य का इतिहास" है। उन्होंने युगीन परिस्थितियों के संदर्भ में साहित्य के विकास–क्रम की व्याख्या करने का प्रयास किया है। शुक्ल जी ने जनता की चित्तवृत्ति के साथ–साथ साहित्य का संबंध जोड़ते हुए उसके क्रमिक विकास और परिवर्तन का आलेख प्रस्तुत किया है। इसके अतिरिक्त उसमें विशेष कवियों के काव्य–गुणों व उनके महत्व का भी सोदाहरण विवेचन किया है।

श्यामसुंदर दास का *हिन्दी भाषा और साहित्य* भी उल्लेखनीय है। इसमें उन्होंने कवियों के विकास का कलाओं के विकास के परिप्रेक्ष्य में अध्ययन प्रस्तुत किया है, साथ ही ऐतिहासिक परिस्थितियों पर विशेष ध्यान दिया है। जहां आचार्य शुक्ल ने युगीन परिस्थितियों पर बल दिया, वहीं हजारी प्रसाद द्विवेदी ने परंपरा को इतिहास–लेखन का आधार बनाया। द्विवेदी जी ने परंपरापरक दृष्टिकोण को स्थापित करके हिन्दी साहित्य के अध्येताओं के लिए एक व्यापक और संतुलित इतिहास–दर्शन की भूमिका तैयार की।

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के बाद अनेक इतिहास लेखकों का पदार्पण हुआ। इनमें रामकुमार वर्मा, धीरेंद्र वर्मा, डॉ. नगेंद्र, रमाशंकर शुक्ल, डॉ. भगीरथ मिश्र, डॉ. रामबहोरी शुक्ल का नाम उल्लेखनीय है। राम विलास शर्मा की इतिहास दृष्टि उक्त लेखकों से अलग रही है। वह मार्क्सवादी धारा के कवि रहे हैं। उन्होंने हिन्दी भाषा के गठन, निर्माण और विकास का प्रामाणिक विवेचन किया है। हिन्दी भाषा और साहित्य के जातीय स्वरूप की पहचान और विशेषताओं के विकास का प्रश्न उनके इतिहास लेखन में प्रमुख रूप से उभरकर सामने आया है। काशी नागरी प्रचारिणी सभा द्वारा हिन्दी साहित्य का एक वृहत इतिहास सघन भागों में प्रकाशित हुआ।

अस्तु इतिहास लेखन बहुत लोकप्रिय नहीं रहा, तथापि कई लेखकों ने इस दिशा में गंभीर प्रयास किए। जहां शुक्ल जी ने युगीन परिस्थितियों पर बल दिया, वहीं द्विवेदी जी ने परंपरा पर अपना मूल्यांकन किया। किंतु दोनों ही पूरक रहे। भविष्य के इतिहास लेखक इसका उपयोग कर संतुलित इतिहास लिख सकते हैं। साहित्य के इतिहास में नामों और तिथियों की अपेक्षा प्रवृत्तियों और परिस्थितियों का अध्ययन अधिक आवश्यक है, क्योंकि उनके द्वारा ही विकासक्रम के सोपानों और स्तरों को सुगमता से समझा जा सकता है।

## 1.2.2 हिन्दी साहित्येतिहास का काल–विभाजन, सीमा निर्धारण एवं नामकरण

इतिहास को स्पष्ट रूप से समझने के लिए काल–विभाजन और नामकरण आवश्यक है। साहित्येतिहास भी इसका अपवाद नहीं है। किसी भी चीज का व्यवस्थित अध्ययन करने के लिए यह आवश्यक है। इसके बिना दिशाहीनता की स्थिति उत्पन्न हो सकती है। वस्तुतः काल–विभाजन से साहित्य के विकास की दिशा, विकास को प्रभावित करने वाले तत्वों,

विभिन्न परिवर्तनों और मोड़ों का पता चलता है। (हिन्दी साहित्य के इतिहास की भूमिका, प्रो. रामसिंह तोमर, इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, पृ. 22)

काल–विभाजन एवं नामकरण करने की आवश्यकता इस कारण से भी है, क्योंकि साहित्य सतत प्रवाहमान है तथा प्रत्येक समय की परिस्थितियां बदलती रहती हैं, अतः उन परिस्थितियों के अनुसार नामकरण आवश्यक है। इसी क्रम में उस बदलाव को काल से विभक्त किया जाना आवश्यक होता है।

## काल–विभाजन एवं नामकरण का आधार

उपर्युक्त पृष्ठों से स्पष्ट है कि साहित्य की अंतर्निहित चेतना के क्रमिक विकास, परंपराओं के उत्थान–पतन और विभिन्न प्रवृत्तियों के उदय को स्पष्ट करना ही काल–विभाजन और नामकरण का उद्देश्य है। साहित्य समाज का ही राष्ट्रांकन है। अतः समाज की राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक परिस्थितियों का साहित्य में आना स्वाभाविक है। साहित्येतिहास का काल–विभाजन एवं नामकरण भी इससे अप्रभावित नहीं रहता है। किंतु यह कहना अत्युक्ति है कि केवल समाज ही साहित्य का आधार है, क्योंकि कवि की कल्पना और प्रतिभा भी कोई चीज़ है। साहित्य अथवा साहित्यकार किसी का अनुचर नहीं है, अतः साहित्य की मूल चेतना अपनी अक्षुण्णता बनाए रहती है। अस्तु साहित्य के इतिहास का युग विभाजन और नामकरण का आधार साहित्यिक प्रवृत्ति और चेतना ही होनी चाहिए।

काल–विभाजन एवं नामकरण हेतु एक निश्चित आधार नहीं है। कभी शासक और शासनकाल को आधार बनाया जाता है, तो कभी किसी साहित्यकार, राष्ट्रीय, सामाजिक, सांस्कृतिक अथवा साहित्यिक प्रवृत्ति को काल–विभाजन और नामकरण का आधार बनाया जाता है। किंतु यदि हम साहित्य के काल–विभाजन की चर्चा करते हैं तो साहित्यिक प्रवृत्ति या मूल साहित्यिक चेतना ही इसका आधार होनी चाहिए। इसमें विवाद नहीं होता है। इसके लिए आवश्यक है कि किसी एक साहित्यिक प्रवृत्ति की प्रधानता हो, यथा– भक्तिकाल, जिसमें भक्ति की प्रधानता रही, अतः अन्य कोई नाम उपयुक्त ही नहीं रहा। कभी किसी राष्ट्रीय, सांस्कृतिक चेतना का प्रभाव पूरे कालखंड साहित्य पर पड़ता है; जैसे पुनर्जागरण, कभी किसी व्यक्ति विशेष (साहित्यिक या राजनीतिक) का प्रभाव रहता है; जैसे भारतेंदु, द्विवेदी युग आदि।

अतः काल–विभाजन और नामकरण करते समय कई आधार रहते हैं। इसमें एकरूपता का आग्रह ठीक नहीं है। यह विवेकसंगत एवं तर्कसंगत होना चाहिए। उपयुक्त काल–विभाजन वही है जो साहित्य की परंपरा को सही रूप में व्यक्त कर सके। युगों की सीमा का निर्धारण मूल प्रवृत्तियों के शुरू होने और अस्त होने पर आधारित होना चाहिए। जहां से साहित्य की मूल चेतना में परिवर्तन दिखाई दे, वहीं से नए काल का प्रारंभ माना जाएगा।

## हिन्दी साहित्य में काल–विभाजन की समस्या

हिन्दी साहित्य में काल–विभाजन के समय अनेक समस्याएं उपस्थित होती हैं। इनमें सर्वप्रथम यह प्रश्न आता है कि हिन्दी साहित्य का आरंभ कब से माना जाए। इस संबंध में सबसे पहला प्रयास करने का श्रेय जार्ज ग्रियर्सन को है। पर जैसा कि उन्होंने स्वयं अपने

ग्रंथ की भूमिका में स्वीकार किया है. उनके सामने अनेक ऐसी कठिनाइयां थीं जिससे वे कालक्रम एवं काल–विभाजन के निर्वाह में पूर्णत: सफल नहीं हो सके। वे लिखते हैं, "सामग्री को यथासंभव कालक्रमानुसार प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है। यह सर्वत्र सरल नहीं रहा है, और कतिपय स्थलों पर तो यह असंभव सिद्ध हुआ है। अतएव वे कवि जिनका समय मैं किसी भी प्रकार स्थिर नहीं कर सका अंतिम अध्याय में वर्णानुक्रम से एक साथ दे दिए गए हैं।"(हिन्दी साहित्य का प्रथम इतिहास : किशोरीलाल गुप्त, पृ. 48.)

जॉर्ज ग्रियर्सन ने हिन्दी साहित्य का आरंभ सातवीं शती से माना है। परंतु दूसरे इतिहासकार इससे सहमत नहीं हैं। आचार्य शुक्ल का मत है कि पुरानी हिन्दी का जन्म तो सातवीं शती के आस–पास हो गया था तथा उसमें सिद्धों, जैनियों एवं नाथपंथियों ने काव्य भी लिखा था, पर उनके काव्य में अपने–अपने धर्म–संप्रदाय की शिक्षाएं दी गई हैं। उनमें काव्यगुणों का अभाव है। इसलिए आचार्य शुक्ल इन्हें मात्र 'सांप्रदायिक शिक्षा' मानकर इन्हें काव्य के रूप में स्वीकार नहीं करते हैं। इस प्रकार, वे दसवीं शताब्दी से ही काल–विभाजन स्वीकार करते हैं। इस मत के समर्थकों में आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी है। डॉ. रामकुमार वर्मा तथा डॉ. नगेंद्र सातवीं शती के समर्थक हैं।

यह विवाद का विषय है कि हिन्दी भाषा और अपभ्रंश का पारस्परिक संबंध क्या है। भाषा वैज्ञानिकों का मत है कि प्राकृत भाषा से अपभ्रंश से आधुनिक भारतीय भाषाओं जिनमें हिन्दी प्रमुख है, का विकास हुआ। इस प्रकार हिन्दी का जन्म अपभ्रंश से हुआ। परंतु दूसरा मत है कि अपभ्रंश हिन्दी का ही एक रूप है। उदाहरण के लिए, आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने अपभ्रंश को 'प्राकृताभास हिन्दी' माना है, जबकि राहुल सांकृत्यायन ने अपभ्रंश को पुरानी हिन्दी की संज्ञा देते हुए अपभ्रंश के सारे कवियों को हिन्दी के कवियों के रूप में स्वीकार किया है। हिन्दी साहित्य का आरंभ सातवीं शती से मानने पर सरहपाद ही हिन्दी के पहले कवि सिद्ध होते हैं। इस प्रकार विद्वानों के दो वर्ग हैं–

1. एक वर्ग में वे विद्वान हैं जो हिन्दी साहित्य का आरंभ सातवीं शती से मानते हुए हिन्दी और अपभ्रंश को एक ही मानते हैं।
2. दूसरे वर्ग में वे विद्वान हैं जो अपभ्रंश को हिन्दी से अलग मानते हुए, हिन्दी का आरंभ दसवीं शती से मानते हैं।

ध्यातव्य है कि वर्तमान में हिन्दी और अपभ्रंश भाषा के विषय में निश्चित हो चुका है कि ये दोनों भाषाएं एक नहीं हैं। यद्यपि अपभ्रंश हिन्दी सहित उत्तर भारत की कई भाषाओं की जननी है, किंतु अधिकांश विद्वानों का मत है कि दोनों अलग–अलग भाषा हैं। दसवीं से चौदहवीं शताब्दी तक का साहित्य अपभ्रंश से भिन्न भाषा का साहित्य है। वस्तुत: इसमें हिन्दी की आधुनिक बोलियों के पूर्वरूप की झलक मिल जाती है। इसी कारण हिन्दी साहित्य के इतिहास लेखक दसवीं शताब्दी से हिन्दी साहित्य का आरंभ स्वीकार करते हैं।

## काल–विभाजन के प्रयास

इस दिशा में काल–विभाजन का प्रथम प्रयास जॉर्ज ग्रियर्सन को जाता है। तत्पश्चात मिश्रबंधुओं, रामचंद्र शुक्ल, हजारी प्रसाद द्विवेदी तथा गणपति चंद्र गुप्त ने प्रयास किया। सर्वप्रथम ग्रियर्सन द्वारा किए गए काल–विभाजन पर दृष्टि डालेंगे–

(1) चारण–काल (2) पंद्रहवी शती का धार्मिक पुनर्जागरण (3) जायसी की प्रेम कविता (4) ब्रज का कृष्ण–संप्रदाय (5) मुगल दरबार (6) तुलसीदास (7) रीति–काव्य (8) तुलसीदास के अन्य परवर्ती (9) अट्ठारहवीं शताब्दी (10) कंपनी के शासन में हिंदुस्तान (11) महारानी विक्टोरिया के शासन में हिंदुस्तान।

इस प्रकार, उनका ग्रंथ इन ग्यारह कालखंडों में विभक्त है, जो वस्तुत: युग–विशेष के द्योतक कम हैं, अध्यायों के शीर्षक अधिक हैं। इसके अतिरिक्त कालक्रम का प्रवाह भी इसमें अविच्छिन्न रूप से नहीं चलता; यथा, चारण–काल के बाद एकाएक वे पंद्रहवीं शती में पहुंच जाते हैं, पूरी चौदहवीं शताब्दी को वे इतिहास से निकाल देते हैं। कालों का नामकरण भी किसी एक आधार पर नहीं है। कहीं किसी धार्मिक संप्रदाय को इसका आधार बताया गया है तो कहीं किसी शासक–विशेष को और कहीं शताब्दी का ही उल्लेख मात्र है। साथ ही तथ्यों की दृष्टि से इसमें सबसे बड़ी भ्रांति यह है कि सातवीं शती से लेकर तेरहवीं शती तक के समय को इसमें हिन्दी साहित्येतिहास का एक युग माना गया है। अस्तु, ग्रियर्सन का यह प्रयास प्रारंभिक प्रयास मात्र है, जिसमें विभिन्न न्यूनताओं, असंगतियों एवं त्रुटियों का होना स्वाभाविक है।

तत्पश्चात, मिश्रबंधुओं ने 1913 ई. में काल–विभाजन का नया प्रयास, जो प्रत्येक दृष्टि से ग्रियर्सन के प्रयास से अधिक प्रौढ़ और विकसित कहा जा सकता है, उनका विभाजन निम्नवत है–

| | | |
|---|---|---|
| 1. आरंभिक काल | – | 1. पूर्वारंभिक काल (600–1343 वि.) |
| | | 2. उत्तरारंभिक काल (1344–1444 वि.) |
| 2. माध्यमिक काल | – | 1. पूर्व माध्यमिक काल (1445–1560 वि.) |
| | | 2. प्रौढ़ माध्यमिक काल (1561–1680 वि.) |
| 3. अलंकृत काल | – | 1. पूर्वालंकृत काल (1681–1790 वि.) |
| | | 2. उत्तरालंकृत काल (1791–1889 वि.) |
| 4. परिवर्तन काल | – | (1890–1925 वि.) |
| 5. वर्तमान काल | – | 1926 वि. से अब तक। |

मिश्रबंधुओं ने 'मिश्रबंधु विनोद' में काल–विभाजन को व्यवस्थित करने का प्रयत्न किया है। मिश्रबंधुओं ने व्यवस्था के नाम पर हिन्दी के कालखंडों को उपकालखंडों में विभक्त किया है। इससे भ्रम पैदा हो गया है। मध्यकाल को दो भागों में विभक्त करना उचित नहीं है। विभिन्न कालखंडों के नामकरण में भी एक जैसी पद्धति नहीं अपनाई गई है, जहां अन्य नामकरण विकासवादिता के सूचक हैं, वहां 'अलंकार–काल' आंतरिक प्रवृत्ति पर आधारित है। उक्त दोषों के होते हुए भी, मिश्रबंधुओं का प्रयास प्रौढ़ और महत्वपूर्ण है, इसमें कोई संदेह नहीं।

आचार्य शुक्ल ने काल–विभाजन किया, जो निम्न है–

1. आदिकाल (वीरगाथाकाल) संवत् 1050 से 1375
2. पूर्व मध्यकाल (भक्तिकाल) संवत् 1375 से 1800

3. उत्तर मध्यकाल (रीतिकाल) संवत् 1700 से 1900

4. आधुनिक काल (गद्यकाल) संवत् 1900 से 1984

आचार्य शुक्ल के काल–विभाजन और मिश्रबंधुओं के काल–विभाजन में कई विशेषताएं सामने आएंगी। इसमें इन्होंने पूर्वारंभिक काल 1050 वि. से माना है। इन्होंने भेदोपभेदों की संख्या को दस से घटाकर चार तक सीमित कर दिया। इससे इनके काल–विभाजन में अधिक सरलता, स्पष्टता एवं सुबोधता आ गई। अपनी इस विशेषता के कारण वह आज तक बहुमान्य एवं बहुप्रचलित हैं। शुक्लोत्तर इतिहासकारों में से अनेक ने आचार्य शुक्ल के काल–विभाजन की तीव्र आलोचना तो की तथा उनके दोषों को भी स्पष्ट किया, किंतु उसे संशोधित करके नवीनता लाने में किसी को भी सफलता नहीं मिल सकी। डॉ. रामकुमार वर्मा का काल–विभाजन उल्लेखनीय है–

1. संधिकाल (750 – 1000 वि.)

2. चारणकाल (1000 – 1375 वि.)

3. भक्तिकाल (1375 – 1700 वि.)

4. रीतिकाल (1700 – 1900 वि.)

5. आधुनिक काल (1900 से अब तक)

डॉ. वर्मा के काल–विभाजन में प्रारंभिक कालों के नामों में परिवर्तन है। यथा संधिकाल एवं चारणकाल, किंतु ये नाम दोषवृद्धि सूचक अधिक प्रतीत होते हैं। 'संधिकाल' उस भ्रांति का रूप है जिसमें हिन्दी साहित्य का आरंभ सातवीं शती से माना गया है, अतः इसे शुक्ल जी के काल–विभाजन का परिष्कृत रूप नहीं माना जा सकता। डॉ. श्यामसुंदर दास ने जो काल–विभाजन किया, वह भी शुक्लानुसार ही है, परंतु आधुनिक काल को 'नवीन विकास का युग' कहा है।

डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी ने शुक्ल जी द्वारा दिए गए 'वीरगाथाकाल' को 'आदिकाल' ही कहा। डॉ. रामबहोरी शुक्ल एवं डॉ. भगीरथ प्रसाद मिश्र का 'हिन्दी साहित्य का उद्भव और विकास' ग्रंथ भी प्रकाश में आया है। आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र ने अपने 'हिन्दी–साहित्य के अतीत' में भी रीतिकाल के नामकरण एवं अंतर्विभाजन के क्षेत्र में नया प्रयास करते हुए भी शेष बातों में पूर्ववर्ती परंपरा का निर्वाह किया है। राहुल सांकृत्यायन ने आदिकाल को 'सिद्ध सामंत युग' की संज्ञा दी।

अतः स्पष्ट है काल–विभाजन के इन सभी प्रयत्नों में आचार्य शुक्ल और हजारीप्रसाद द्विवेदी का मत सर्वाधिक मान्य है। आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने प्रवृत्तियों को आधार बनाकर कालों का सुव्यवस्थित विभाजन किया है। डॉ. धीरेंद्र वर्मा तथा अन्य सहयोगियों द्वारा संपादित भारतीय हिन्दी परिषद के इतिहास में केवल तीन युगों की कल्पना की गई है– आदिकाल, मध्यकाल, आधुनिक काल। उनका मानना है कि मध्यकालीन चेतना एक ही रही है। संतकाव्य, प्रेमाख्यानक काव्य, रामकाव्य, कृष्णकाव्य, वीरकाव्य, रीतिकाव्य की धाराएं पूरे मध्यकाल में प्रवाहित होती रहीं। किंतु यह पूर्णतः उचित नहीं है, यह है कि सत्रहवीं शताब्दी के आते–आते मुख्य प्रवृत्ति बदल गई थी। भक्ति के स्थान पर अलंकरण और शृंगार विलास की प्रधानता हो गई। काव्य लिखने का ढंग बदल गया था। इससे काव्य की चेतना और

काव्य के रूप में भी स्पष्ट अंतर आ गया। अतः मध्यकाल की प्रवृत्तियों के आधार पर दो कालों में विभाजित करना ज़रूरी हो गया। इसी प्रकार आधुनिक काल का प्रारंभ उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य से माना जाता है। सन् 1857 की क्रांति मध्य युग की समाप्ति, पश्चिमी ज्ञान–विज्ञान एवं जीवन–दर्शन का प्रभाव के फलस्वरूप आधुनिक युग का प्रारंभ हुआ। इसमें भी प्रवृत्तियों में परिवर्तन दिखाई दिया। कभी छायावाद, कभी प्रगतिवाद तो कभी प्रयोगवाद, निरंतर साहित्य की धारा बदलती रही। तद्नुसार काल–विभाजन किया गया। हिन्दी साहित्य के काल–विभाजन को मुख्यतः निम्न शीर्षकों में विभक्त किया जा सकता है–

1. आदिकाल – 10वीं शती से 14वीं शती तक
2. पूर्वमध्यकाल – 14वीं शती से 17वीं शती तक
3. उत्तरमध्यकाल – 17वीं शती से 19वीं शती तक
4. आधुनिक काल – 19वीं शती से अब तक

यही काल–विभाजन हिन्दी साहित्य के इतिहासकारों के बीच मान्य है।

# इकाई 2 छायावादी कवि –I

## 2.0

हिन्दी साहित्य का आधुनिक काल साहित्यिक संवेदना, सामाजिक सरोकार और आधुनिक चेतना की दृष्टि से महत्वपूर्ण है। भारतेंदु युग और द्विवेदी युग के बाद हिन्दी साहित्य में छायावाद के नाम से काव्य आंदोलन आया। छायावादी कविता के प्रमुख कवियों में जयशंकर प्रसाद, सुमित्रानन्दन पन्त, सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला और महादेवी वर्मा हैं। साहित्य और विचार की दृष्टि से छायावादी कविता श्रेष्ठता का पर्याय है।

हिन्दी का छायावादी काव्य प्रथम एवं द्वितीय विश्वयुद्ध के बीच एवं भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के समय में लिखा जा रहा था। इसलिए छायावादी कविता में देश और दुनिया की हलचलें उपस्थित हैं। किन्तु छायावादी कविता की संवेदना सांस्कृतिक है, राजनीतिक नहीं। इसीलिए छायावादी कविता के सरोकार अपनी पूर्ववर्ती साहित्यिक धाराओं की तरह सतह पर नहीं दिखते। छायावादी कविता की व्यजंना स्थूल नहीं सूक्ष्म है। मुख्य रुप से देखें तो छायावाद का समय शक्ति के संधान का समय है। शक्ति की मौलिक कल्पना का समय है। शक्ति का संधान प्रत्येक क्षेत्र में अपने–अपने ढंग से हो रहा था। सामाजिक–राजनीतिक

क्षेत्र में जो कार्य गोखले–गांधी अपने ढंग से कर रहे थे, वही कार्य छायावादी कवि अपनी तरह से कर रहे थे।

छायावादी कविता में राष्ट्रीयता, देश की स्वाधीनता का भाव, गांधीवादी विचारों के प्रति लगाव, अंग्रेजों की साम्राज्यवादी नीतियों के प्रति आक्रोश का भाव उपलब्ध है। वर्षों की दासता से मुक्ति की आकांक्षा में पूरा देश खड़ा हो गया था। आधुनिक शिक्षा और चेतना ने भारतीय बुद्धिजीवियों के सामने सोच–समझ के नये दरवाजे खोल दिये थे। भारतीय जनमानस में आये इन परिवर्तनों को छायावादी कवियों ने प्रमुख काव्य–स्वर बनाया।

जयशंकर प्रसाद, सुमित्रानन्दन पंत, सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला और महादेवी वर्मा जैसे रचनाकारों ने अपनी कविता में अपने इसी युग–चेतना के विभिन्न स्वरों को उच्च साहित्यिक मानदण्डों पर प्रस्तुत किया है। अपनी श्रेष्ठ साहित्यिक उपलब्धियों के कारण ही ये चारों रचनाकार छायावाद के चार स्तम्भ माने जाते हैं। जयशंकर प्रसाद की रचनाओं में आंसू, झरना, लहर, कामायनी, सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला की रचनाओं में अनामिका, परिमल, गीतिका, तुलसीदास, अपरा आदि, सुमित्रानन्दन पन्त की रचनाओं में वीणा, पल्लव, गुंजन, ग्रन्थि आदि एवं महादेवी वर्मा की रचनाओं में नीहार, रश्मि, नीरजा, सांध्यगीत, दीपशिखा आदि प्रमुख हैं। इनकी कविता में मनुष्य, समाज, देश और तार्किक आधुनिक विचार बिल्कुल मौलिक रूप में आये हैं, जो छायावाद ही नहीं पूरे हिन्दी साहित्य में अपना एक विशिष्ट स्थान और महत्व रखते हैं।

प्रस्तुत इकाई में छायावादी कविता के चार प्रमुख कवियों जयशंकर प्रसाद, सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला, सुमित्रानन्दन पंत और महादेवी वर्मा की चुनी हुई प्रतिनिधि कविताओं की व्याख्या और कविताओं की मुख्य विशेषताओं का अध्ययन–विश्लेषण किया गया है।

## 2.1 इकाई के उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप–

- छायावाद के प्रमुख कवियों से परिचित हो पाएंगे;
- प्रमुख छायावादी कवियों की प्रतिनिधि कविताओं का अध्ययन–विश्लेषण कर पाएंगे;
- छायावादी कविता के माध्यम से कविता और समाज के सम्बन्धों को समझ पाएंगे;
- छायावादी कविता के कथ्य, सौन्दर्य और विशेषताओं की पहचान कर पाएंगे।

## 2.2 जयशंकर प्रसाद : सामान्य परिचय

जयशंकर प्रसाद छायावाद के सर्वप्रमुख कवि हैं। प्रसाद का जन्म 30 जनवरी, सन् 1889 को वाराणसी (उ.प्र.) में हुआ था। जयशंकर प्रसाद का परिवार वाराणसी में प्रसिद्ध था। मान्यता है कि उनके पूर्वज कन्नौज के थे। यह परिवार व्यापारिक कारणों से पहले जौनपुर और 18वीं शताब्दी के आसपास वाराणसी में आया। समय के साथ प्रसाद के पूर्वजों के लिए

वाराणसी ही घर–द्वार बन गया। वाराणसी में तम्बाकू के व्यापार में इस परिवार को अभूतपूर्व सफलता मिली। धीरे–धीरे यह परिवार 'सुघनी साहू' के रूप में ख्यात हो गया। जयशंकर प्रसाद के पितामह शिवरत्न साहू काशी के बहुत ही प्रसिद्ध और लोकप्रिय थे। सुघनी साहू परिवार की प्रसिद्धि का आधार इनके तम्बाकू के व्यापार की समृद्धि के साथ–साथ इनकी धर्मपरायणता और सेवा–भाव भी था। सुघनी साहू का कुल अपने अन्य सरोकारों के साथ ही साहित्य, संगीत, धर्म, दर्शन एवं संस्कृति के प्रति लगावों के लिए भी प्रसिद्ध था। इन सभी क्षेत्रों के महत्वपूर्ण लोगों का आना–जाना हमेशा लगा रहता। जयशंकर प्रसाद के पिता देवीप्रसाद साहू ने भी अपने कुल की परम्परा के अनुसार ही व्यापार और व्यवहार दोनों क्षेत्रों में ही अपार सफलता प्राप्त की। देवीप्रसाद साहू विद्वानों का आदर करते थे। आये दिन साहू परिवार में विभिन्न विचारों के विद्वानों की महफिल जमी रहती। जिसका प्रभाव बालक जयशंकर प्रसाद पर भी पड़ रहा था।

समय के साथ सुघनी साहू परिवार की स्थिति भी बदली। धीरे–धीरे व्यापार की गति कम होने लगी। प्रसाद के पिता देवीप्रसाद साहू किसी तरह कुल–परम्परा का निर्वाह करते रहे। जब पिता का निधन हुआ तब प्रसाद की उम्र मात्र ग्यारह वर्ष थी। परिवार की जिम्मेदारी प्रसाद के बड़े भाई शंभुरत्न ने संभाली। किन्तु व्यापार में लगातार घाटा बढ़ता रहा। परिवार की आर्थिक स्थिति खराब हो गई। प्रसाद जब सोलह वर्ष के हुए बड़े भाई का निधन हो गया। परिवार का दायित्व जयशंकर प्रसाद पर आ गया। घर–परिवार, व्यापार की बिगड़ती स्थिति और कठोर यथार्थ ने जयशंकर प्रसाद के कोमल, भावुक एवं कवि मन को अत्यधिक प्रभावित किया। जिसकी अनुगूंज उनकी रचनाओं में उपलब्ध है।

जयशंकर प्रसाद ने संस्कृत, फारसी, हिन्दी और उर्दू का विधिवत् अध्ययन किया था। उनके लिए इन विषयों के श्रेष्ठ शिक्षक लगाये गये थे। पुराने संस्कृत ग्रंथों के साथ ही भारतीय धर्म–दर्शन में भी प्रसाद की गहरी रुचि थी।

जयशंकर प्रसाद ने कविता, नाटक, उपन्यास, कहानी और निबन्ध जैसी विधाओं में महत्वपूर्ण लेखन कार्य किया है। वे हिन्दी साहित्य के एक ऐसे रचनाकार हैं जिन्होंने गद्य और पद्य दोनों में बराबर सफलता और प्रसिद्धि अर्जित की है। कई प्रकार की आर्थिक, शारीरिक एवं भावनात्मक संकटों के बीच 15 नवम्बर, 1937 को काशी में जयशंकर प्रसाद का निधन हुआ।

## जयशंकर प्रसाद की रचनाएं

### काव्य संग्रह

- प्रेम पथिक – 1910
- कानन कुसुम – 1912
- चित्राधार – 1918
- झरना – 1918
- आंसू – 1926
- लहर – 1935
- कामायनी – 1936

**नाटक**

- करुणालय – 1912
- राज्यश्री – 1915
- विशाख – 1921
- अजातशत्रु – 1922
- जन्मेजय का नागयज्ञ – 1926
- कामना – 1927
- स्कन्दगुप्त – 1928
- एक घूंट – 1930
- चन्द्रगुप्त – 1931
- ध्रुवस्वामिनी – 1933

**कहानी संग्रह**

- छाया – 1912
- प्रतिध्वनि – 1926
- आकाशदीप – 1929
- आंधी – 1931
- इन्द्रजाल – 1936

**उपन्यास**

- कंकाल – 1929
- तितली – 1934
- इरावती – 1938

**निबन्ध**

- काव्यकला तथा अन्य निबन्ध – 1938

## 2.2.1 जयशंकर प्रसाद : पाठ्यांश – अरुण यह मधुमय देश हमारा, हिमाद्रि तुंग शृंग से

### 1. अरुण यह मधुमय देश हमारा

*अरुण यह मधुमय देश हमारा।*

*जहां पहुंच अनजान क्षितिज को मिलता एक सहारा।।*

**शब्दार्थ** : अरुण–लालिमा, मधुमय–मिठास से भरा हुआ, अनजान–जिसके विषय में हम जानते नहीं हैं, क्षितिज–वह कल्पित स्थान जहां पृथ्वी और आकाश मिलते हुए प्रतीत होते हैं।

**संदर्भ** : प्रस्तुत पंक्तियां भारतीय संस्कृति के रक्षक–संवर्द्धक और छायावाद के प्रतिनिधि कवि जयशंकर प्रसाद की हैं। यह कविता उनके प्रसिद्ध नाटक 'चंद्रगुप्त' से ली गई है। यह नाटक सन् 1931 में प्रकाशित हुआ था और यह मगध के महान सम्राट चंद्रगुप्त मौर्य के ऐतिहासिक विजय पर केंद्रित है। जयशंकर प्रसाद ने इस नाटक की रचना गुलाम भारत के नागरिकों में राष्ट्रवादी चेतना के जागरण और देश की आजादी के लिए संघर्ष की भावना पैदा करने के लिए किया था। इस कविता में जयशंकर प्रसाद ने भारत की प्राकृतिक सुषमा के वर्णन के बहाने यह संदेश दिया है कि भारत ही वह देश है जहां सभ्यता का जन्म हुआ था। प्रातःकालीन सौंदर्य के वर्णन के समानांतर भारत में सभ्यता के जन्म का संकेत इस कविता में किया गया है।

**प्रसंग** : 'चंद्रगुप्त' नाटक में यह गीत सिकंदर के सेनापति यूनानी सेल्यूकस निकेटर की पुत्री कार्नेलिया के द्वारा गवाया गया है। एक विदेशी युवती द्वारा भारत की प्रशंसा में गाए गए इस गीत के द्वारा प्रसाद जी भारत की महान संस्कृति को पाठकों के समक्ष प्रस्तुत करते हैं।

**व्याख्या** : भारत देश के गौरव को बताते हुए कवि कहता है कि हमारा यह भारत देश सूर्य की तरह ऊर्जा और लालिमा लिए हुए है। इस देश का अतीत इतना उज्ज्वल है कि इसका नाम सारी दुनिया में सूर्य की तरह प्रकाशित हो रहा है। हमारा यह देश शहद की तरह मिठास लिए हुए है। यहां की सभ्यता और संस्कृति 'वसुधैव कुटुम्बकम' अर्थात सारी दुनिया एक परिवार की तरह है, के आदर्श से संचालित होती रही है। भारत देश ने सदियों से दुनिया के अलग–अलग हिस्सों से आने वाले लोगों का खुले मन से स्वागत किया है और उन्हें अपने परिवार के एक सदस्य के रूप में अपनाया है। प्रसादजी इस भाव को विराट रूप देते हुए कहते हैं कि आसमान और धरती का मिलन यदि कहीं संभव हुआ है तो वह भारतवर्ष में ही हुआ है। यहीं पर आकर अपरिचित क्षितिज को भी एक सहारा प्राप्त होता है।

**विशेष** : कार्नेलिया सम्राट सेल्यूकस निकेटर की पुत्री थी। सम्राट चन्द्रगुप्त मौर्य से युद्ध में परास्त होने के बाद सेल्यूकस निकेटर ने उनसे मित्रता की और संधि कर अपनी पुत्री कार्नेलिया का विवाह उनसे करा दिया। इस प्रकार मौर्य वंश की रानी बनकर कार्नेलिया का भारत आगमन हुआ।

*सरस तामरस गर्भ विभा पर, नाच रही तरुशिखा मनोहर।*
*छिटका जीवन हरियाली पर, मंगल कुंकुम सारा।।*
*लघु सुरधनु से पंख पसारे, शीतल मलय समीर सहारे।*
*उड़ते खग जिस ओर मुंह किए, समझ नीड़ निज प्यारा।।*

**शब्दार्थ** : तामरस–लाल कमल, विभा–प्रभा, कांति, किरण, रश्मि, तरुशिखा–वृक्ष की फुनगी, मनोहर–सुंदर, मंगल–कल्याण, कुंकुम–केसर, रोली, लघु–छोटा, सुरधनु–इंद्रधनुष, शीतल–ठंडा, मलय–चंदन, समीर–हवा, खग–पक्षी, नीड़–चिड़ियों के बैठने का स्थान या घोंसला, निज–अपना।

**सन्दर्भ** : प्रस्तुत पंक्तियां भारतीय संस्कृति के रक्षक–संवर्द्धक और छायावाद के प्रतिनिधि कवि जयशंकर प्रसाद की हैं। यह कविता उनके प्रसिद्ध नाटक 'चंद्रगुप्त' से ली गई है। यह नाटक सन् 1931 में प्रकाशित हुआ था और यह मगध के महान सम्राट चंद्रगुप्त मौर्य के ऐतिहासिक विजय पर केंद्रित है। जयशंकर प्रसाद ने इस नाटक की रचना गुलाम भारत के नागरिकों में राष्ट्रवादी चेतना के जागरण और देश की आजादी के लिए संघर्ष की भावना पैदा करने के लिए किया था। इस कविता में जयशंकर प्रसाद ने भारत की प्राकृतिक सुषमा के वर्णन के बहाने यह संदेश दिया है कि भारत ही वह देश है जहां सभ्यता का जन्म हुआ था। प्रातःकालीन सौंदर्य के वर्णन के समानांतर भारत में सभ्यता के जन्म का संकेत इस कविता में किया गया है।

**प्रसंग** : उपर्युक्त पंक्तियों में सूर्योदय के समय सूर्य की किरणों से प्रकाशित भारत के सौंदर्य का चाक्षु–बिंब निर्मित किया गया है। इसमें सभ्यता के आरंभ से ही समस्त संसार को अपनी ओर आकर्षित करने की भारत की क्षमता का भी सांकेतिक एवं कलात्मक चित्रण किया गया है।

**व्याख्या** : यहां कवि ने सूर्य की उपमा लाल कमल से दी है। कवि कहता है कि सुबह का सूर्य सुंदर लाल कमल की तरह सुशोभित हो रहा है और उसकी किरणों के प्रकाश में वृक्षों की मनोहर फुनगियां नाच रही हैं। सूर्य की किरणें जीवन रूपी हरियाली पर फैली हुई हैं और चारों ओर कल्याण रूपी कुंकुम बिखरा हुआ है। यहां सूर्योदय के समय का चाक्षु–बिंब निर्मित किया गया है। सूर्य जब उदित होता है तो वह लाल कमल की तरह दिखता है और उसके प्रकाश से सबसे पहले वृक्ष का सबसे ऊपरी हिस्सा नाचता हुआ दिखाई देता है। धीरे–धीरे जब सूर्य की किरणें पृथ्वी की ओर फैलती हैं तो उसके प्रकाश में खेतों में फैली हुई हरियाली प्रकाशित होती है। सूर्य की लाल किरणें और पृथ्वी की हरियाली जब एक साथ मिलती है तो ऐसा लगता है जैसे चारों ओर रोली फैला दी गयी हो। कवि आगे कहता है कि सभ्यता के आरंभ में भारत में इतनी शांति थी कि यहां की हवाओं में चंदन की खुशबू थी। इस खुशबू से आकर्षित होकर पक्षी चंदन की तरह ही शीतल हवाओं के सहारे छोटे इंद्रधनुष की तरह अपने पंखों को पसारे हुए जिसे अपना प्यारा घर समझकर उस तरफ मुख किए हुए उड़ रहे हों, समझ लेना है कि वही हमारा प्यारा भारतवर्ष है। तात्पर्य यह कि सभ्यता के आरंभ से ही दुनिया भर से लोग भारत की अद्भुत प्राकृतिक सुषमा और शांतिपूर्ण सह–अस्तित्व की सभ्यता से आकर्षित होते रहे हैं।

*बरसाती आंखों के बादल, बनते जहां भरे करुणा जल।*
*लहरें टकरातीं अनन्त की, पाकर जहां किनारा।।*
*हेम कुम्भ ले उषा सवेरे, भरती ढुलकाती सुख मेरे।*
*मंदिर ऊंघते रहते जब, जगकर रजनी भर तारा।।*

**शब्दार्थ** : अनन्त– जिसका अंत न हो, हेम– सोना, कुम्भ– घड़ा, उषा– सुबह का सूर्य, मदिर– नशे में, रजनी– रात।

**सन्दर्भ** : प्रस्तुत पंक्तियां भारतीय संस्कृति के रक्षक–संवर्द्धक और छायावाद के प्रतिनिधि कवि जयशंकर प्रसाद की हैं। यह कविता उनके प्रसिद्ध नाटक 'चंद्रगुप्त' से ली गई है।

यह नाटक सन् 1931 में प्रकाशित हुआ था और यह मगध के महान सम्राट चंद्रगुप्त मौर्य के ऐतिहासिक विजय पर केंद्रित है। जयशंकर प्रसाद ने इस नाटक की रचना गुलाम भारत के नागरिकों में राष्ट्रवादी चेतना के जागरण और देश की आजादी के लिए संघर्ष की भावना पैदा करने के लिए किया था। इस कविता में जयशंकर प्रसाद ने भारत की प्राकृतिक सुषमा के वर्णन के बहाने यह संदेश दिया है कि भारत ही वह देश है जहां सभ्यता का जन्म हुआ था। प्रातःकालीन सौंदर्य के वर्णन के समानांतर भारत में सभ्यता के जन्म का संकेत इस कविता में किया गया है।

**प्रसंग** : उपर्युक्त पंक्तियों में सूर्योदय के समय के भारत की प्राकृतिक सुषमा का चित्रण किया गया है। इन पंक्तियों में बरसात, सूर्य और तारों का मानवीकरण किया गया है।

**व्याख्या** : कवि कह रहा है कि बरसात के बादल भारत की मिट्टी पर पहुंचकर करुणा के जल बन जाते हैं। तात्पर्य यह कि भारत की मिट्टी इतनी उपजाऊ है कि यहां बादल के बरसने के बाद समस्त मनुष्यता को जीवन देने वाले अन्न की पैदावार होती है। दुनिया के अन्य हिस्से में अनुपजाऊ जमीन और अनुपयुक्त वातावरण की वजह से बारिश का पानी निरर्थक हो जाता है जबकि भारत में वह जीवनदायी अन्न की पैदावार का कारण बनता है। अनन्त समुद्र की लहरें जिस जगह पर जाकर किनारा पाती हैं वह भारतवर्ष है। भारत के पूर्वी, पश्चिमी और दक्षिणी हिस्से में अरब सागर और प्रशांत महासागर पृथ्वी को स्पर्श करता है। कवि भारत के इसी भौगोलिक परिदृश्य को इन पंक्तियों में प्रस्तुत कर रहा है। सूर्योदय के पहले उषा रूपी स्त्री सोने के घड़े से इस देश में प्राकृतिक सुषमा रूपी सुख को फैलाती है। सूर्योदय के समय सूर्य की किरणें जब पृथ्वी पर पड़ती हैं तो चारों तरफ सुनहला रंग फैल जाता है। इस दृश्य को देखकर कवि को महसूस होता है कि इस स्वर्णिम सौंदर्य को उषा ने अपने सोने के घड़े से फैलाया है। इस दृश्य को देखकर कवि सुख और आनन्द का अनुभव कर रहा है। कविता की अंतिम पंक्ति में कवि कह रहा है कि रात भर के शयन की मादकता के बाद जगकर तारे जिस जगह पर नशे में ऊंघते हुए दिखाई दें वहीं हमारा प्यारा भारतवर्ष है। तात्पर्य यह कि दुनिया भर के इंसान ही नहीं सूर्य, तारे, बादल, समुद्र सब भारत की सुषमा से आकर्षित होकर इसकी ओर खींचे चले आते हैं और यहां आकर विश्राम पाते हैं।

## 2. हिमाद्रि तुंग शृंग से

*हिमाद्रि तुंग शृंग से प्रबुद्ध शुद्ध भारती*
*स्वयंप्रभा समुज्ज्वला स्वतंत्रता पुकारती*
*अमर्त्य वीर पुत्र हो, दृढ़–प्रतिज्ञ सोच लो*
*प्रशस्त पुण्य पंथ है – बढ़े चलो बढ़े चलो*

**शब्दार्थ** : हिमाद्रि– बर्फ से भरी हुई, तुंग– पर्वत, शृंग– चोटी, प्रबुद्ध– जागा हुआ, जाग्रत, भारती– भारत माता, स्वयंप्रभा– स्वयं से प्रकाशित होने वाला, समुज्ज्वला– चमकता हुआ, अमर्त्य– जिसकी मृत्यु न हो, प्रशस्त– प्रशंसा योग्य, उत्तम।

**सन्दर्भ** : प्रस्तुत पंक्तियां छायावाद के महान कवि जयशंकर प्रसाद के प्रसिद्ध नाटक 'चंद्रगुप्त' से ली गई हैं। 'चंद्रगुप्त' नाटक का प्रकाशन सन् 1931 में हुआ था। इन

पंक्तियों के माध्यम से जयशंकर प्रसाद आजादी के लिए संघर्ष कर रहे युवाओं का उत्साहवर्धन करते हैं।

**प्रसंग** : 'चंद्रगुप्त' की अलका तक्षशिला की राजकुमारी राष्ट्र–सेविका है। वह भारतीय नारी की प्रतीक है, जो देश के लिए आत्मोत्सर्ग करने हेतु तत्पर रहती है। जब यवन सेनापति सिल्यूकस की विशाल सेना भारत पर आक्रमण करने के उद्देश्य से पश्चिमोत्तर सीमा पर पड़ाव डालती है, तो राजकुमारी अलका अपने देश के सैनिकों में उत्साहवर्द्धन तथा कर्तव्यबोध का भाव भरने के लिए और उत्साह भरे गीतों से न केवल अपने सैनिकों में प्राण फूंकती है, अपितु वह राष्ट्र में भी प्राण फूंकती है।

**व्याख्या** : कवि भारत के लोगों को जाग्रत करने का प्रयास इस कविता में करते हैं। कवि कहता है कि हिमालय की सबसे ऊंची चोटी से आज जागी हुई और अत्यंत पवित्र मनोभावों वाली भारतमाता अपने बेटों को पुकार रही हैं। गुलामी के लंबे दौर की यातना से दुखी भारतमाता को अपने युवा बेटों से आजादी की उम्मीद है। वे हिमालय की सबसे उंची चोटी पर चढ़कर उन्हें पुकार रही हैं ताकि उनकी पुकार सब तक पहुंच सके। स्वयं से प्रकाशित होने वाली, समग्र प्रकाश या चैतन्यता से भरी हुई स्वतंत्रता की मूर्ति भारतमाता अपने युवा बेटों को पुकार रही है। आज भारतमाता अपने युवाओं से कह रही हैं कि तुम कभी न मरने वाले वीरों के बेटे हो इसलिए तुम्हें किसी भी प्रकार का भय अपने भीतर नहीं रखना है। तुम अपने मन में विचार कर यह दृढ़ प्रतिज्ञा कर लो कि तुम्हें स्वाधीनता के अपने लक्ष्य को प्राप्त करना है। स्वाधीनता प्राप्ति की तुम्हारी राह अत्यंत उत्तम और पवित्र है, इसको लेकर मन में किसी प्रकार की दुविधा मत रखो। इस उदात्त विचार के साथ ऐ मेरे भारत के वीरो! तुम अपने लक्ष्य की प्राप्ति के लिए बस आगे की ओर बढ़ते चलो, बढ़ते चलो।

*असंख्य कीर्ति–रश्मियां विकीर्ण दिव्य दाह–सी*
*सपूत मातृभूमि के रुको न शूर साहसी*
*अराति सैन्य सिंधु में, सुबड़वाग्नि से जलो*
*प्रवीर हो जयी बनो बढ़े चलो बढ़े चलो*

**शब्दार्थ** : असंख्य– जिसकी गणना करना संभव न हो, कीर्ति रश्मियां– यश की किरणें विकीर्ण– फैलाया हुआ, छितराया हुआ, दाह सी– जलती हुई सी, शूर– योद्धा, अराति– दुश्मन, सिंधु– सागर, बड़वाग्नि– समुद्र में लगने वाली आग, प्रवीर– श्रेष्ठ योद्धा, जयी– विजयी।

**सन्दर्भ** : प्रस्तुत पंक्तियां छायावाद के महान कवि जयशंकर प्रसाद के प्रसिद्ध नाटक 'चंद्रगुप्त' से ली गई हैं। 'चंद्रगुप्त' नाटक का प्रकाशन सन् 1931 में हुआ था। इन पंक्तियों के माध्यम से जयशंकर प्रसाद आजादी के लिए संघर्ष कर रहे युवाओं का उत्साहवर्धन करते हैं।

**प्रसंग** : इन पंक्तियों में कवि स्वाधीनता आन्दोलन में संघर्ष कर रहे युवाओं का उत्साहवर्द्धन करते हुए उनके विजयी होने की कामना कर रहे हैं।

**व्याख्या** : कवि कहता है कि वीरो! मातृभूमि की आजादी के रास्ते पर तुम आगे बढो। जिस पथ पर तुम आगे बढ़ रहे हो उस पर यशरूपी अनेक किरणें अग्नि की विशिष्ट ज्वाला की तरह फैली हुई हैं। तात्पर्य यह कि देश की आजादी की लडाई में शामिल होने पर तुम्हारे यश की गाथा दूर–दूर तक गाई जाएगी। ये तुम्हारे मन के उत्साह को और बढ़ा देंगी; इसलिए हे भारतमाता के श्रेष्ठ पुत्रो! तुम कभी घबडा कर रुकना। तुम भारतमाता के वीर और साहसी पुत्र हो। तुम्हें दुश्मनों के सागर रूपी सेना में बडवाग्नि की तरह जलते हुए प्रवेश करना है, अर्थात जैसे समुद्री आग बडवाग्नि विशाल समुद्र के भीतर जलकर उसे जला देती है वैसे ही तुम्हें दुश्मनों की सेना के भीतर प्रवेश कर उन्हें समाप्त कर देना है। कविता की अंतिम पंक्तियों में अलका के माध्यम से भारत के वीर युवकों को संबोधित करते हुए कहती हैं कि तुम एक श्रेष्ठ योद्धा बनकर आजादी के इस युद्ध में विजयी होने के लिए आगे की ओर बढ़ते चलो, बढते चलो।

## 2.2.2 काव्यगत विशेषताएं

जयशंकर प्रसाद छायावाद के प्रमुख कवि हैं। उनकी कविता में समूची भारतीय परम्परा और संस्कृति के उज्ज्वल पक्ष अपने पूरे वैभव के साथ आये हैं। प्रसाद मुख्यतः सांस्कृतिक चेतना के रचनाकार हैं। वे अपनी कविताओं के माध्यम से आधुनिक मनुष्य की विडम्बना, भटकाव और विचलन की पहचान करते हैं तथा एक प्रखर चेतना से युक्त मानव एवं समरस समाज के निर्माण में अपना योगदान देते हैं। प्रसाद का रचना संसार उनके जीवन–दर्शन की साहित्यिक अभिव्यक्ति है। प्रसाद पर सबसे अधिक प्रभाव 'शैव दर्शन' के 'प्रत्यभिज्ञा दर्शन' का है। किन्तु यह प्रसाद के रचना–कर्म की विशेषता है कि वे दार्शनिक विचारों को अपनी अनुभूति में इस कदर समाहित कर लेते हैं कि वह सहज और सुबोध बन जाते हैं। प्रसाद के साहित्य की काव्यगत विशेषताओं को निम्नलिखित बिन्दुओं के आधार पर समझ सकते हैं–

**आत्म की अभिव्यक्ति** : प्रसाद के काव्य में आत्म की अभिव्यक्ति प्रमुख विशेषता है। आत्म की अभिव्यक्ति को प्रसाद स्वानुभूति की अभिव्यक्ति कहते हैं। प्रसाद मूलतः आत्मनिष्ठ कवि हैं। किन्तु उनकी आत्मनिष्ठता में कहीं भी समाज का विरोध नहीं है। प्रसाद की आत्मनिष्ठता का अर्थ यह है कि वे अक्सर निजी अनुभूतियों और विचारों को कलात्मक ढंग से अपने काव्य में प्रस्तुत करते हैं। वे अपनी अनुभूतियों को आत्मकथात्मक ढंग से प्रत्यक्ष तौर या दूसरे पात्रों या माध्यमों के द्वारा अप्रत्यक्ष तौर पर व्यक्त करते हैं। उनकी कविता में उनके ही जीवन के सुख–दुख, जय–पराजय, जीवन–जगत के अनेक चित्र और स्थितियों की भावपूर्ण अभिव्यंजना हुई है। किन्तु यह प्रसाद की काव्यात्मक सफलता ही है कि कवि का 'स्व' सबके 'स्व' में रूपान्तरित हो गया है–

*उज्ज्वल गाथा कैसे गाऊं मधुर चांदनी रातों की,*
*अरे खिलखिलाकर हंसते होने वाली उन बातों की।* (लहर कविता से)

या

*जो घनीभूत पीड़ा थी, मस्तक में स्मृति सी छाई,*
*दुर्दिन में आंसू बनकर, वह आज बरसने आई।* (आंसू कविता से)

**वेदना का विस्तार** : जयशंकर प्रसाद ने अपनी कविता में अपनी वेदना का अत्यंत साहित्यिक चित्रण किया है। वेदना प्रेम जनित भी है और जीवन के कठोर एवं कटु यथार्थ से उपजी हुई भी। प्रेम जनित वेदना के चित्र प्रसाद के काव्य में खूब मिलते हैं। प्रसाद जैसे बड़े कवि की यह विशेषता है कि वे निज वेदना का विस्तार उसके उदात्त स्वरूप में करते हैं जिससे वह सकल विश्व की वेदना के रूप में अभिव्यक्त होने लगती है–

*वेदना विकल फिर आई*
*मेरी चौदहो भुवन में।*
*सुख कहीं न दिया दिखाई*
*विश्राम कहां जीवन में।*

**सहज प्रेम की स्वाभाविक स्वीकृति** : प्रेम की अभिव्यक्ति हिन्दी साहित्य के लगभग सभी प्रमुख कालखण्डो में होती रही है। किन्तु छायावादी कविता में प्रेम के जिस रूप की स्वीकृति और महत्व मिला है, वह सहज प्रेम का उदात्त स्वरूप है। प्रसाद के काव्य में भी प्रेम अपने इसी सहज रूप में स्वीकृत और प्रतिष्ठित हुआ है। प्रसाद के काव्य में जो प्रेम है वह स्त्री–पुरुष के बीच का स्वाभाविक प्रेम है। उसमें कहीं से भी किसी प्रकार का आवरण या ओट नहीं लिया गया है। जबकि वीरगाथा काल में प्रेम का अर्थ पुरुष द्वारा अपनी वीरता के प्रदर्शन में और स्त्री पर अधिकार दर्शाना था। भक्तिकाल में प्रेम का अर्थ अध्यात्म था। रीतिकालीन कविता का प्रेम मांसल और स्थूल था, द्विवेदी युग का प्रेम आदर्शवादी था किन्तु प्रसाद के काव्य में चित्रित प्रेम आत्मा के आत्मविश्वास की तरह है। उसमें किसी प्रकार की कोई कुंठा नहीं है। प्रसाद का प्रेम सहज और स्वाभाविक है। वह बांधता नहीं मुक्त करता है। प्रेम की स्मृतियां भी प्रेम ही की तरह प्रिय हैं–

*प्रत्यावर्तन के पथ में*
*पद चिन्ह न शेष रहा है,*
*डूबा है हृदय–मरुस्थल,*
*आंसू नद उमड़ रहा है।*

**सौन्दर्याभिव्यक्ति** : प्रसाद का काव्य सौन्दर्य की अभिव्यक्ति का विशिष्ट काव्य है। उनकी कविता में जीवन के सत्य, शिव और सुन्दर अपने पूरे वैभव के साथ अभिव्यक्त हुए हैं। वे अखिल विश्व में, प्रकृति में, जड़–चेतन में एक अनंत और व्यापक सौन्दर्य को देखते हैं। जहां स्त्री सौन्दर्य के प्रसंग आते हैं वहां भी उनकी दृष्टि केवल स्त्री के बाह्य सौन्दर्य पर नहीं, बल्कि अंतर्बाह्य के संतुलन पर होती है। प्रसाद का सौन्दर्य–बोध उदात्त और गरिमापूर्ण है। अपनी प्रसिद्ध कृति 'कामायनी' में वे श्रद्धा के सौन्दर्य का चित्रण करते हैं, जिसमें श्रद्धा के शारीरिक सौन्दर्य के साथ ही उनके भावों का भी पता चलता है–

*नील परिधान बीच सुकुमार खुल रहा मृदुल अधखिला अंग,*
*खिला हो ज्यों बिजली का फूल मेघ वन बीच गुलाबी रंग।*
*आह! वह मुख! पश्चिम के व्योमबीच जब घिरते हों घनश्याम,*
*अरुण रविमंडल उनको भेद दिखाई देता हो छविधाम।*

*या कि नव इंद्रनील लघुशृंग फोड़कर धधक रही हो कांत,*

*एक लघु ज्वालामुखी अचेत माधवी रजनी में अशांत।*

प्रसाद के लिए सौन्दर्य परमात्मा के सात्विक वरदान की तरह है। उन्होंने 'कामायनी' में इस आशय की पंक्तिया लिखी है–

*उज्ज्वल वरदान चेतना का,*

*सौन्दर्य जिसे सब कहते हैं।*

*जिसमें अनन्त अभिलाषा के,*

*सपने सब जगते रहते हैं।*

**स्त्री की स्वायत्त छवि** : प्रसाद के काव्य में स्त्री का स्वायत्त और गरिमापूर्ण चित्रण हुआ है। प्रसाद के काव्य में चित्रित स्त्री शक्ति, शील और सौन्दर्य की प्रतिमूर्ति है। वह बाह्य रूप में आकर्षक है तो आन्तरिक रूप से वह प्रेम, दया, करुणा, ममता, क्षमा और माधुर्य की स्रोत भी है। प्रसाद स्त्री के उस रूप का चित्रण करते हैं जहां वह पुरुष के अधिकार से अलग अपनी स्वायत्त छवि के साथ खड़ी होती है, और पुरुष को श्रेष्ठ और सुन्दर का मार्ग दिखाती है। इसीलिए प्रसाद पूरे विश्वास के साथ 'कामायनी' में कहते हैं कि–

*नारी तुम केवल श्रद्धा हो,*

*विश्वास रजत नग पगतल में।*

*पीयूष स्रोत–सी बहा करो,*

*जीवन के सुन्दर समतल में।*

**प्रकृति का जाग्रत बोध** : प्रसाद के मन में प्रकृति की जीवंत सत्ता का जाग्रत बोध था। सामान्य भाषा में कहें तो प्रसाद प्रकृति के प्रेमी थे। अपने काव्य में उन्होंने भी दूसरे छायावादी कवियों की तरह प्रकृति का मानवीकरण किया है। प्रसाद की कविता में व्यक्त प्रकृति के मानवीकरण और लगाव के दार्शनिक कारण भी हैं। प्रसाद पर प्रत्यभिज्ञादर्शन का प्रभाव है। प्रत्यभिज्ञादर्शन में प्रकृति को महाचिति का शरीर और चेतन से युक्त माना जाता है। अतः जब प्रसाद प्रकृति का मानवीकरण करते हैं तब उनके चित्रण में गहरी आस्था और प्रेम देखने को मिलता है–

*बीती विभावरी जाग री।*

*अम्बर पनघट में डुबो रही–*

*तारा–घट ऊषा नागरी।*

*खगकुल कुलकुल–सा बोल रहा,*

*किसलय का अंचल डोल रहा,*

*लो यह लतिका भी भर लाई,*

*मधु–मुकुल नवल रस–गागरी।*

**लाक्षणिक, प्रतीकात्मक और चित्रात्मक भाषा** : प्रसाद ने अपने काव्य में भावों की अभिव्यक्ति के लिए लाक्षणिकता उपयोग किया है। लाक्षणिकता के प्रयोग से वे शब्द के मुख्य अर्थ की जगह उसी से सम्बद्ध किसी अन्य अर्थ की सृष्टि करते हैं। जो शब्द की लक्षणा शक्ति का स्वभाव भी है। उदाहरण के लिए देखा जा सकता है कि–

*इस करुणा–कलित हृदय में*
*अब विकल रागिनी बजती*
*क्यों हाहाकार स्वरों में*
*वेदना असीम गरजती।*

इसी तरह प्रसाद अपनी कविता में प्रतीक–योजना का भी श्रेष्ठ प्रयोग करते हैं। उनके प्रतीक प्रायः प्रकृति से लिए गये हैं। जैसे वे 'मधु' का प्रयोग प्रेम के लिए करते हैं। उसी प्रकार 'उषा' या 'प्रभात' का प्रयोग प्रसन्नता या आनंद के लिए करते हैं। प्रसाद के काव्य की एक और विशेषता उनकी चित्रात्मक और ध्वन्यात्मक भाषा है–

*हाहाकार हुआ क्रंदनमय,*
*कठिन कुलिश होते थे दूर;*
*हुए दिगंध बधिर, भीषण रव,*
*बार–बार होता था क्रूर।*

इस तरह देखा जाय तो प्रसाद का काव्य अपनी इन विशेषताओं के साथ हिन्दी साहित्य में अपना एक विशिष्ट स्थान और महत्व रखता है।

## 2.2.3 प्रसाद काव्य में जागरण के स्वर

हिन्दी साहित्य में छायावादी काव्य एक नयी दिशा, पहचान और स्वर के लिए जाना जाता है। यह ऐसे समय की कविता है जब प्रथम विश्वयुद्ध की घटना हो चुकी थी तथा भारत में स्वतंत्रता आन्दोलन निरंतर जोर पकड़ रहा था। अतः छायावादी कवि भी अपने युग से प्रभावित हुए बिना नहीं रह सका। इस काल के प्रमुख लेखकों प्रसाद, पन्त, निराला तथा महादेवी वर्मा ने आम आदमी के साथ अपनी काव्य यात्रा को शुरू किया।

छायावादी कविता का मूल्यांकन करते हुए आलोचक नामवर सिंह ने लिखा है कि–"छायावाद इस राष्ट्रीय चेतना की काव्यात्मक अभिव्यक्ति है जो एक ओर पुरानी पीढ़ी से मुक्ति चाहता है और दूसरी ओर विदेशी पराधीनता से।" प्रसाद भी भावी पीढ़ी के लिए एक आदर्श समाज प्रस्तुत करना चाहते थे इसीलिए उनकी कविता में जागरण के विविध स्वर उपस्थित हैं। जयशंकर प्रसाद की कविता में व्यक्ति का महत्त्व स्वीकारा गया है। इस आधार पर उनकी कविता में चेतना के प्रमुख बिंदु निम्नलिखित हैं–

**लोक जागरण** : प्रसाद की कविता में मनुष्य को जाग्रत करने का प्रयास हुआ है। अबतक ईश्वर और मनुष्य को अलग–अलग परिभाषित किया गया था। प्रसाद ऐसा नहीं मानते हैं। उनके विचार में ईश्वर के सम्मुख मनुष्य की भी विशिष्ट सत्ता है। प्रसाद जी पर 'शैव' मत का प्रभाव था अतः वे 'नियतिवाद' के पक्षधर नहीं थे बल्कि 'कर्म' को प्रमुख

मानते थे। मनुष्य के द्वारा किया गया कर्म ही उसके भाग्य का निर्माण करता है। प्रसाद जी ने स्वयं लिखा है–

*हृदय ही तुम्हें दान कर दिया।*
*सुद था उसने गर्व किया।*
*तुम्हें पाया अगाध गंभीर।*
*कहां जल बिंदु कहां निधि क्षीर।*

**राष्ट्रीय जागरण के स्वर** : छायावादी कविता का मूल स्वर राष्ट्रीय चेतना का रहा है। समाज की खराब स्थिति को देखकर प्रसाद का हृदय भी करुणा से भर उठा। उनका मानना था कि कवि की लेखनी समाज के उपकार के लिए होनी चाहिए तभी वह अपने उद्देश्य में सफल माना जाएगा। उनकी कविता 'प्रथम प्रभात', 'अब जागो जीवन के प्रभात', 'बीती विभावरी जाग री' आदि मानव को राष्ट्र प्रेम की भावना से ओतप्रोत करती हैं। अबतक की निराशा को भूलकर कवि ने आम आदमी में सुप्त चेतना को जाग्रत करने का प्रयास किया है–

*फिर मधुर भावनाओं का,*
*कलरव हो इस जीवन में।*
*मेरी आहो में जागो,*
*सुस्मित में सोने वाले।*

**सांस्कृतिक जागरण** : जयशंकर प्रसाद मनुष्य के बिखराव के कारणों की खोज अपनी कविता में करते हैं। उनका चिंतन था कि जीवन का पुनः मूल्यांकन जरूरी है। वैभव, समृद्धि तथा तमाम भौतिक सुविधाओं के होते हुए भी मनुष्य अशांत है। हमारी सांस्कृतिक विरासत दूसरी संस्कृतियों के दबाव में नष्ट होती जा रही है तथा नई संस्कृति मनुष्य को आक्रांत किये हुए है अतः ऐसे समय में हमें अपनी खोई हुई संस्कृति को फिर से प्राप्त करना होगा। प्रसाद ने मानवीय संस्कृति को महत्वपूर्ण बताया और इसे देव संस्कृति से श्रेष्ठ कहा है। इस प्रकार प्रसाद ने आम आदमी के निराश मन में आशा का संचार किया।

*बनो संस्कृति के मूल रहस्य,*
*तुम्हीं से फैलेगी यह बेल।*
*विश्व भर सौरभ से भर जाएगा,*
*सुमन के खेलो सुंदर खेल।*

**सामाजिक जागरण** : किसी भी बड़े बदलाव में समाज की प्रमुख भूमिका होती है। स्वतंत्रता आन्दोलन की प्रमुख बाधा थी भारत के लोगों के मध्य परस्पर संघर्ष। प्रसाद ने इस स्थिति को महसूस किया और आम आदमी को लोकतंत्र की दिशा में प्रेरित किया। उनकी कविता अहं भावना को त्यागकर मनुष्य को कर्तव्य पथ पर साथ–साथ बढ़ने की प्रेरणा देती है। टकराहट को सामंजस्य में बदलने का आह्वान प्रसाद ने कुछ इस प्रकार किया है–

*औरों को हंसते देखो मनु हंसो और सुख पाओ,*
*अपने सुख को विस्तृत कर लो सबको सुखी बनाओ।*

**स्त्री के प्रति नवीन दृष्टिकोण** : छायावादी कवियों ने स्त्री के प्रति अपनी विराट दृष्टि का परिचय दिया। प्रसाद ने नारी को उसकी स्वतंत्र सत्ता के साथ महत्व दिया। आधुनिक मनुष्य स्त्री को अपना सेवक मानता है। प्रसाद स्त्री को मानवीय गरिमा, गौरव के साथ प्रस्तुत करते हैं। कामायनी में प्रसाद ने दिखाया है कि मनु श्रद्धा के शरीर पर नहीं बल्कि उसके मन में विशिष्ट स्थान बनाना चाहते थे। स्त्री की परंपरागत स्थिति से अलग ये उसे श्रद्धा की दृष्टि से देखते हैं और देवी, मां, जैसे संबोधन से पुकारते हैं–

*नारी तुम केवल श्रद्धा हो*
*विश्वास रजत नग पग तल में*
*पीयूष स्रोत सी बहा करो*
*जीवन के सुंदर समतल में।*

**मशीनीकरण पर चिंता** : कामायनी में प्रसाद ने चिंता व्यक्त की है कि भौतिक जीवन में मशीनों के बढ़ते प्रभाव ने उसके आनंद को समाप्त कर दिया है। विज्ञान के चमत्कारों ने प्रेम, परिवार, करुणा, शांति, मनुष्यता के भावों को नष्ट कर दिया है। इस स्थिति में मनुष्य अजनबीपन के विष को पीने पर मजबूर है। प्रसाद ने समाज में बढ़ते अविश्वास, असंतोष तथा पाखंड को अपनी कविताओं के माध्यम से व्यक्त किया है तथा समाज को 'वसुधैव कुटुम्बकम' की शिक्षा दी है–

*आज शक्ति का खेल खेलने में आतुर नर,*
*प्रकृति संग संघर्ष निरंतर अब कैसा डर।*

निष्कर्षतः छायावाद के प्रमुख कवि जयशंकर प्रसाद सही मायने में जागरण पुरुष थे। उनकी काव्य यात्रा बताती है कि वास्तव में ये सिर्फ शरीर को नहीं बल्कि अपने पूरे इतिहास को जीना चाहते थे। इसीलिए अनुभूतियों का तीव्र वेग इनकी रचनाओं में मौजूद है। लेखक के पास समाज को देखने का एक विशिष्ट नजरिया होता है। प्रसाद की प्रमुख रचनाओं आंसू, चित्राधार, प्रेमपथिक, कानन कुसुम, झरना, लहर, कामायनी आदि के माध्यम से संसार के प्रति उनके चिंतन को समझा जा सकता है।

## 2.3 सुमित्रानन्दन पन्त : सामान्य परिचय

सुमित्रानन्दन पन्त एक महान छायावादी कवि हैं। पन्त की कविता में छायावादी काव्य की सभी विशेषताएं लक्षित की जा सकती हैं। पन्त का जन्म 20 मई, 1900 ई. को अल्मोड़ा के कौसानी नामक गांव में हुआ था। पिता का नाम गंगादत्त पन्त और माता का नाम सरस्वती देवी था। जन्म के कुछ ही देर बाद माता सरस्वती का निधन हो गया। मातृविहीन सुमित्रानन्दन के ऊपर पिता का अपार ममत्व रहा किन्तु उत्तराखण्ड, अल्मोड़ा के निर्मल और अद्वितीय प्राकृतिक जीवन ने उनके मानस और चेतना के निर्माण में सर्वाधिक योगदान दिया।

सुमित्रानन्दन पन्त के बचपन का नाम गोसाईं दत्त था। उनका जन्म तीन भाई और चार बहनों के बाद हुआ था। सबसे छोटे होने के कारण उन्हें पूरे घर का बहुत स्नेह मिला।

घर का वातावरण धार्मिक और संगीतमय था। जिसका उन पर खूब प्रभाव पड़ा। बड़े भाई हरदत्त पन्त साहित्यिक रुचि के थे। उन्हीं के पास सुमित्रानन्दन ने महावीर प्रसाद द्विवेदी के संपादन में निकलने वाली प्रसिद्ध पत्रिका 'सरस्वती' को देखा और पढ़ा। धीरे–धीरे बड़े भाई के साहित्यिक लगावों के कारण बालक सुमित्रानन्दन के भीतर साहित्य के प्रति गहरा अनुराग जगा।

पन्त 10 वर्ष की अवस्था में 1910 में गवर्नमेंट हाईस्कूल अल्मोड़ा गये। अलमोड़ा के साहित्यिक परिवेश ने पन्त की रुचियों को और अधिक निखारा। यहीं पर उन्होंने अपने बचपन के नाम 'गोसाईं दत्त' को बदलकर सुमित्रानन्दन पन्त रखा था। पन्त के साहित्यिक, वैचारिक विकास में अल्मोड़ा प्रवास का अत्यधिक योगदान रहा। यहीं पर रहते हुए पन्त ने साहित्य का गंभीर अध्ययन किया। इलाचन्द्र जोशी, गोविन्द वल्लभ पन्त के सम्पर्क में आने के बाद वे साहित्य रचना की ओर अग्रसर हुए। समय के साथ उनकी चेतना का दायरा बढ़ता जा रहा था। स्वामी रामकृष्ण परमहंस, स्वामी विवेकानन्द एवं स्वामी रामतीर्थ के सांस्कृतिक नवजागरण की वैचारिक धारा ने भी पन्त को अत्यधिक प्रभावित किया।

हाईस्कूल के बाद पन्त का दाखिला इलाहाबाद के म्योर कॉलेज में हुआ। इलाहाबाद का उन्नत साहित्यिक माहौल पन्त के लिए बहुत ही लाभदायक सिद्ध हुआ। इलाहाबाद में ही पन्त अंग्रेजी के प्रमुख रचनाकारों, वड्सवर्थ, कीट्स, शैली के स्वच्छन्दतावादी काव्य से परिचित और प्रभावित हुए। साथ ही उन पर गांधीजी के विचारों का भी प्रभाव पड़ रहा था।

परिवार को हुए व्यापारिक घाटे में बहुत सम्पत्ति, घर आदि को बेचना पड़ गया। पिता और बड़े भाई की मृत्यु ने पन्त के संवेदनशील मन को अत्यधिक आहत कर दिया। सांसारिक दुखों से थोड़ी सी राहत उन्हें साहित्य में मिलती थी, इसलिए उन्होंने स्वयं को पूरी तरह से साहित्य को समर्पित कर दिया। 1931 में कालाकांकर गये और वहां के राजभवन में रह कर साहित्य सेवा करते रहे। 1940 में वे पुनः अल्मोड़ा लौटे। बाद के दिनों में श्री अरविन्द के सम्पर्क में आये। पन्त के बाद के लेखन पर श्री अरविन्द का अत्यधिक प्रभाव है। 1950 से 1957 तक उन्होंने आकाशवाणी में परामर्शदाता के रूप में कार्य किया।

सुमित्रानन्दन पन्त जीवन भर पीड़ित मानवता एवं भारतीय संस्कृति के प्रगतिशील मूल्यों में भरोसा रखते हुए साहित्य–सेवा में लगे रहे। उन्होंने विपुल मात्रा में साहित्य–सृजन किया है। उन्हें 1960 में 'कला और बूढ़ा चांद' काव्य संग्रह के लिए 'साहित्य अकादमी पुरस्कार' और 1968 में 'चिदम्बरा' के लिए उन्हें 'भारतीय ज्ञानपीठ' पुरस्कार मिला। 1961 में उनकी साहित्यिक उपलब्धियों के लिए भारत के राष्ट्रपति ने उन्हें 'पद्मभूषण' की उपाधि से सम्मानित किया। साहित्य, विचार और रचनात्मकता के इस प्रखर सर्जक का निधन 29 दिसम्बर, 1977 ई. को हुआ।

## सुमित्रानन्दन पन्त की रचनाएं

**उपन्यास** : हार

**काव्य** : वीणा, ग्रन्थि, उच्छ्वास, पल्लव, गुंजन, युगान्त, युगवाणी, ग्राम्या, स्वर्णकिरण, स्वर्ण धूलि, मधुज्वाल, युगपथ, उत्तरा, रजत शिखर, शिल्पी, अतिमा, युग–पुरुष, छाया, वाणी,

चिदम्बरा, कला और बूढ़ा चांद, लोकायतन, किरण वीणा, पौ फटने से पहले, गीतहंस, शंखध्वनि, समाधिता, आस्था, सत्यकाम आदि।

**निबन्ध संग्रह** : आधुनिक कवि, छायावाद : पुनर्मूल्यांकन, शिल्प और दर्शन, साठ वर्ष : एक रेखांकन।

**रेडियो रुपक** : ज्योत्स्ना

**नोट** : सुमित्रानन्दन पन्त के समस्त लेखन को राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली ने शान्ति जोशी के संपादन में सात खण्ड में 'सुमित्रानन्दन पन्त ग्रन्थावली' में प्रकाशित किया गया है।

## 2.3.1 सुमित्रानन्दन पन्त : पाठ्यांश – पर्वत प्रदेश में पावस, अनित्य जग

### 1. पर्वत प्रदेश में पावस

*पावस ऋतु थी, पर्वत प्रदेश,*
*पल–पल परिवर्तित प्रकृति–वेश।*
*मेखलाकार पर्वत अपार*
*अपने सहस्र दृग – सुमन फाड़,*
*अवलोक रहा है बार–बार*
*नीचे जल में निज महाकार,*
*जिसके चरणों में पला ताल*
*दर्पण सा फैला है विशाल!*

**शब्दार्थ** : पावस ऋतु– वर्षा का मौसम, परिवर्तित– बदलता हुआ, प्रकृति वेश– प्रकृति का स्वरूप, मेखलाकार– मंडप के आकार वाला, अपार– जिसकी सीमा न हो, सहस्त्र– हजार, दृग सुमन– फूल रूपी आंखें, अवलोक– देखना, निज– अपना, महाकार– बड़ा आकार, ताल– तालाब, दर्पण– शीशा, विशाल– बड़ा।

**सन्दर्भ** : 'पर्वत प्रदेश में पावस' कविता प्रकृति के कुशल चितेरे और प्रसिद्ध छायावादी कवि सुमित्रानंदन पंत की रचना है। पंतजी को 'प्रकृति का सुकुमार कवि' भी कहा जाता है। वैसे तो सभी छायावादी कवियों ने प्रकृति का चित्रण किया है लेकिन उनमें से भी पंतजी का मन प्रकृति के चित्रण में ज्यादा रमा। प्रस्तुत कविता में पंतजी ने वर्षा ऋतु में क्षण–क्षण परिवर्तित हो रहे प्रकृति के परिवेश का चित्रण किया है। कविता के शीर्षक से स्पष्ट है कि इस कविता में कवि ने वर्षा के मौसम में पर्वत के मनोहारी रूप के वर्णन पर अपना ध्यान केंद्रित किया है।

**प्रसंग** : प्रस्तुत पंक्तियों में बरसात के समय पर्वत के सौंदर्य का निरुपण किया गया है। बारिश में धुलकर पर्वत का सौंदर्य निखर गया है और वह अपना सौंदर्य तालाब में निहार रहा है।

**व्याख्या** : कवि कहता है कि वर्षा ऋतु थी और जहा बारिश हो रही थी वह पर्वतीय इलाका था। बरसात के मौसम में बादल उमडते–घुमडते रहते हैं और इस कारण आसपास का परिवेश पल–पल परिवर्तित होता रहता है। कभी बादल छा जाने के कारण दिन में ही अंधेरा हो जाता है और लगता है कि रात हो गयी और कभी बादलों के हट जाने से सूर्य के प्रकाश में अचानक वह सारा प्रदेश खिल उठता है। इसी स्थिति का वर्णन करते हुए कवि कह रहा है कि क्षण–क्षण प्रकृति अपना रूप परिवर्तित कर रही थी। इस प्राकृतिक वातावरण में मंडप के आकार का विशाल पर्वत अपने सुमन जैसी हजार आखों को फाडे पर्वत के निचले हिस्से में फैले शीशे के समान चमकने वाले तालाब के निर्मल जल को देख रहा है। ऐसा प्रतीत होता है मानो यह तालाब उसके चरणों में पडा हुआ है और यह एक विशाल दर्पण जैसा है। पर्वत पर उगे हुए फूल पर्वत के नेत्रों के समान लग रहे हैं और ऐसा लगता है मानो ये नेत्र दर्पण के समान चमकने वाले विशाल तालाब के जल पर दृष्टिपात कर रहे हैं। इस बिम्ब का तात्पर्य यह है कि पर्वत अपने सौंदर्य का अवलोकन तालाब रूपी दर्पण में कर रहा है। कवि की इस कल्पना का मूल आशय यह है कि बारिश की वजह से पर्वत का सौंदर्य बारिश में धुल कर निखर गया है और वह अपने निखरे हुए स्वरूप को तालाब रूपी दर्पण में निहार रहा है।

**विशेष**

1. जब किसी मनुष्येतर वस्तु का चित्रण मनुष्य के रूप में किया जाय तो वहा मानवीकरण अलंकार होता है। यहां पर्वत द्वारा अपने सौंदर्य को निहारने का काम एक मनुष्य की तरह किया जा रहा है अतः यहा पर्वत का मानवीकरण किया गया है।
2. आरंभिक दो पंक्तियों में अनुप्रास अलंकार है। पल–पल, बार–बार में पुनरुक्ति प्रकाश अलंकार है। 'दृग–सुमन' में रूपक अलंकार तथा 'दर्पण–सा फैला' में उपमा अलंकार है।
3. चित्रात्मक शैली तथा संस्कृतनिष्ठ शब्दावली का प्रयोग किया गया है।

*गिरि का गौरव गाकर झर–झर*
*मद में नस–नस उत्तेजित कर*
*मोती की लड़ियों–से सुंदर*
*झरते हैं झाग भरे निर्झर!*
*गिरिवर के उर से उठ–उठ कर*
*उच्चाकांक्षाओं से तरुवर*
*हैं झांक रहे नीरव नभ पर*
*अनिमेष, अटल, कुछ चिंतापर।*

**शब्दार्थ** : गिरि– पर्वत, गौरव– सम्मान, मद– मस्ती, आनंद, निर्झर– झरना, उर– हृदय, उच्चाकांक्षाओं– ऊंची कामनाएं, तरुवर– श्रेष्ठ वृक्ष, नीरव– शांत, नभ– आकाश, अनिमेष– अपलक, अटल– स्थिर।

**सन्दर्भ** : 'पर्वत प्रदेश में पावस' कविता प्रकृति के कुशल चितेरे और प्रसिद्ध छायावादी कवि सुमित्रानंदन पंत की रचना है। पंतजी को 'प्रकृति का सुकुमार कवि' भी कहा जाता है। वैसे तो सभी छायावादी कवियों ने प्रकृति का चित्रण किया है लेकिन उनमें से भी पंतजी का मन प्रकृति के चित्रण में ज्यादा रमा। प्रस्तुत कविता में पंतजी ने वर्षा ऋतु में क्षण-क्षण परिवर्तित हो रहे प्रकृति के परिवेश का चित्रण किया है। कविता के शीर्षक से स्पष्ट है कि इस कविता में कवि ने वर्षा के मौसम में पर्वत के मनोहारी रूप के वर्णन पर अपना ध्यान केंद्रित किया है।

**प्रसंग** : इन पंक्तियों में कवि ने पर्वत से गिरने वाले झरने और उसके ऊपर खड़े विशाल वृक्षों के माध्यम से निर्मित होने वाले सौंदर्य का चित्रण किया है और इसके साथ ही इससे प्रकट होने वाली पर्वत की मनोभावनाओं का भी वर्णन किया है।

**व्याख्या** : ऊंचे पर्वत से बहने वाले झाग से भरे हुए झरने झर-झर करते हुए नीचे की ओर बह रहे हैं। उस झरने के स्वर को सुनकर ऐसा लगता है जैसे वह पर्वत के गौरव का गान कर रहा हो। झरने का यह गान पर्वत को मस्ती में डुबोकर उसके रोम-रोम को रोमांचित कर रहा है और उसके भीतर उत्साह भर रहा है। झरने का जल इतना शुद्ध और उज्ज्वल है कि उसकी बूंदें मोतियों के समान सुंदर प्रतीत हो रही हैं। झरने का लगातार बहता जल मोती की लड़ियों के समान सुंदर दिखाई दे रहा है। पर्वत पर अनेक श्रेष्ठ और ऊंचे वृक्ष लगे हुए हैं जो पर्वतराज के हृदय में उठने वाली महत्वाकांक्षाओं को प्रदर्शित कर रहे हैं। ये वृक्ष एक स्थान पर अटल रहकर एकटक शांत आकाश की ओर देखते हुए लगते हैं। इनको देखकर ऐसा लगता है मानो ये चिंतित होकर अपने स्थान पर खड़े हैं।

**विशेष**

1. पर्वत का मानवीकरण किया गया है।
2. संस्कृतनिष्ठ शब्दों का प्रयोग किया गया है। भाषा कवि की भावनाओं की अभिव्यक्ति में समर्थ है।
3. 'झर-झर', 'नस-नस', 'उठ-उठ' में पुनरुक्ति प्रकाश अलंकार है और 'झरते झाग', 'नीरव नभ', 'अनिमेष अटल' में अनुप्रास अलंकार है।

*उड़ गया, अचानक लो, भूधर*
*फड़का अपार वारिद के पर!*
*रव-शेष रह गए हैं निर्झर!*
*है टूट पड़ा भू पर अंबर!*
*धंस गए धरा में सभय शाल!*
*उठ रहा धुआँ, जल गया ताल!*
*यों जलद-यान में विचर-विचर*
*था इंद्र खेलता इंद्रजाल।*

**शब्दार्थ** : भूधर– पर्वत, वारिद– बादल, पर– पंख, रव शेष– केवल शोर का बाकी रह जाना, निर्झर– झरना, भू– धरती, अंबर– आकाश, सभय– भय के साथ, शाल– पर्वतीय प्रदेश मे उगने वाला एक विशाल वृक्ष, ताल– तालाब, जलद यान– बादल रूपी वाहन, इंद्रजाल– इंद्रधनुष।

**सन्दर्भ** : पर्वत प्रदेश में पावस' कविता प्रकृति के कुशल चितेरे और प्रसिद्ध छायावादी कवि सुमित्रानंदन पंत की रचना है। पंतजी को 'प्रकृति का सुकुमार कवि' भी कहा जाता है। वैसे तो सभी छायावादी कवियों ने प्रकृति का चित्रण किया है लेकिन उनमें से भी पंतजी का मन प्रकृति के चित्रण में ज्यादा रमा। प्रस्तुत कविता में पंतजी ने वर्षा ऋतु में क्षण–क्षण परिवर्तित हो रहे प्रकृति के परिवेश का चित्रण किया है। कविता के शीर्षक से स्पष्ट है कि इस कविता में कवि ने वर्षा के मौसम में पर्वत के मनोहारी रूप के वर्णन पर अपना ध्यान केंद्रित किया है।

**प्रसंग** : पर्वतीय प्रदेश में अचानक बादलों के समूह के आगमन से किस प्रकार वहां की प्रकृति में बहुत ही तीव्रता के साथ कैसा बदलाव हो रहा है इसी का गतिशील बिम्बात्मक चित्रण उपरोक्त पंक्तियों में हुआ है।

**व्याख्या** : प्रस्तुत पंक्तियों में पंतजी कह रहे हैं कि बादल रूपी विशाल पक्षी ने अपने पंख फड़फड़ाये और अचानक पर्वत को लेकर उड़ गया। वर्षा ऋतु में यह दृश्य आम है कि देखते–देखते ही अचानक विशाल पर्वत बादलों के पीछे छुप जाता है। पर्वत के बादलों द्वारा अपहरण कर लिए जाने के बाद अब केवल झरने की आवाज सुनाई पड़ रही है। इसको सुनकर ऐसा लगता है जैसे कोई रो रहा हो। धरती और आकाश के बीच से उस विशाल पर्वत के हट जाने से ऐसा लगता होता है जैसे आकाश टूटकर धरती पर गिर गया हो। इस प्राकृतिक घटना से भयभीत होकर शाल के विशाल वृक्ष धरती के भीतर घुस गए हैं और पर्वत के नीचे स्थित विशाल तालाब से धुआं उठ रहा है। दरअसल बादलों के विशाल समूह के अचानक आ जाने से आंखों के सामने का समस्त दृश्य एकाएक गायब हो जाता है। ऐसे में लगता है कि धरती और आकाश मिल गए हैं और सामने के वृक्ष भी दिखाई नहीं पड़ते। जब ये बादल तालाब के जल में प्रवेश करते हैं तो ऐसा लगता है कि तालाब से धुआं उठ रहा हो। कवि अंत में कह रहा है कि इस दृश्य को देखकर महसूस होता है कि बादल रूपी वाहन में घूमता हुआ प्रकृति का देवता इंद्र नए–नए खेल खेल रहा है अर्थात प्रकृति नित्य प्रति नवीन क्रीड़ाएं कर रही है।

**विशेष**

1. पूरे पद्य में प्रकृति का मानवीकरण किया गया है।
2. 'अपार वारिद के पर में' रूपक अलंकार और 'विचर–विचर' में पुनरुक्ति प्रकाश अलंकार है।
3. चित्रात्मक शैली और गतिशील दृश्य बिंब का प्रयोग किया गया है।

## 2. अनित्य जग

*आज तो सौरभ का मधुमास*

*शिशिर में भरता सूनी सांस!*

*वही मधुऋतु की गुंजित डाल*
*झुकी थी जो यौवन के भार*
*अकिंचनता में निज तत्काल*
*सिहर उठती–जीवन है भार!*
*आज पावस मद के उद्गार*
*काल के बनते चिह्न कराल*
*प्रात का सोने का संसार*
*जला देती संध्या की ज्वाल!*
*अखिल यौवन के रंग–उभार*
*हड्डियों के हिलते कंकाल*
*कचों के चिकने, काले व्याल*
*केंचुली, कांस, सिवार*
*गूंजते हैं सबके दिन चार*
*सभी फिर हाहाकार!*

**शब्दार्थ** : सौरभ– सुगंध, महक, मधुमास– वसंत ऋतु, शिशिर– छः ऋतुओं में से एक, मधुऋतु– वसंत ऋतु, अकिंचनता– गरीबी, निज– अपना, पावस– वर्षा ऋतु, काल– मृत्यु, कराल– डरावना, भयानक, अखिल– संपूर्ण, कच– बाल, व्याल– सर्प, कांस– शरद ऋतु में फूलने वाली घास, सिवार– एक जलीय पौधा।

**संदर्भ** : प्रस्तुत पंक्तियां कोमल कल्पना के चितेरे छायावादी कवि सुमित्रानंदन पंत की प्रसिद्ध कविता 'परिवर्तन' की हैं। यह कविता पंत जी के सन् 1920 में प्रकाशित संग्रह 'पल्लव' में संकलित थी। यह एक दार्शनिक कविता है जिसमें जीवन की नश्वरता का वर्णन किया गया है। जीवन की नश्वरता का चित्रण होने के कारण इस कविता में जीवन के संबंध में निराशामूलक किंतु तटस्थ विचार प्रकट किया गया है। 'परिवर्तन' में दर्शनशास्त्र की शुष्कता के बीच काव्य–रस का संचार किया गया है जिससे मृत्यु जैसे शुष्क सत्य को भी स्वीकार करने का साहस पाठक जुटा लेता है। डॉ. नगेन्द्र ने इस कविता को 'ग्रैण्डभाव महाकाव्य' कहा है। प्रकृति की कोमल कल्पना से मुख मोड़कर जगत की नश्वरता की ओर पंत जी के मुड़ने की मूल वजह उनके पिता की मृत्यु और खुद के लंबी बीमारी से पीड़ित होना बताया जाता है। कवि ने इस कविता में जगत की नश्वरता और क्षणभंगुरता का अत्यंत भावपूर्ण एवं सजीव चित्र प्रस्तुत किया है। उन्होंने परिवर्तन को ही संसार का सबसे बड़ा सत्य सिद्ध किया है। स्वयं पंत जी ने लिखा है कि, "'पल्लव' की प्रतिनिधि रचना 'परिवर्तन' में विगत वास्तविकता के प्रति असंतोष तथा परिवर्तन के प्रति आग्रह की भावना विद्यमान है साथ ही जीवन की अनित्य वास्तविकता के भीतर से नित्य सत्य को खोजने का प्रयत्न भी है, जिसके आधार पर नवीन वास्तविकता का निर्माण किया जा सके।"

**प्रसंग** : प्रस्तुत पंक्तियों में कवि संसार की नश्वरता का वर्णन कर रहा है। उसका कहना है कि प्रकृति और जीवन दोनों में युवावस्था के दिन कम समय के लिए ही होते हैं। संसार में कुछ भी स्थायी नहीं है। सबको एक दिन काल का शिकार होना ही है।

**व्याख्या** : प्रस्तुत पंक्तियों मे कवि कहता है कि आज भले ही संसार में वसंत ऋतु की महक और मादकता फैली हो लेकिन कुछ ही दिनों के बाद फिर शिशिर ऋतु की ठंडी हवा बहेगी, और तब सारी प्रकृति पीड़ा की ठंडी आहें भरने लगेगी। बदलते हुए मौसम के द्वारा पंत जी संसार की नश्वरता और परिवर्तनशीलता की ओर इशारा करते हुए कहते हैं कि संसार में सुख के दिन अस्थायी होते हैं। जब यौवन के दिन थे तो जीवन वसंत ऋतु की तरह सुख और आनंद रूपी फूलों से लदा हुआ था लेकिन जैसे ही बुढ़ापा और गरीबी का आगमन होता है तब ऐसा लगता है कि जीवन भार है। जीवन में अहंकार के उदगार वर्षा ऋतु की तरह उफान लेते हुए आते हैं लेकिन जल्द ही वे मृत्यु के डरावने पंजों में फंसकर समाप्त हो जाते है। जीवन के आरंभ में जो हमने सोने जैसा सुंदर संसार रचा होता है उसको बुढ़ापा रूपी संध्या की ज्वाला जलाकर भस्म कर देती है। यौवनावस्था में उभरे अंगों की खूबसूरती वृद्धावस्था में हड्डियों के हिलते हुए ढांचे में बदल जाता है। युवावस्था में काले सर्प की तरह लहराते सिर के चिकने बाल बुढ़ापे में सर्प की छोड़ी हुई सफेद केंचुल, कांस के सफेद फूल और सेवार के पौधे की तरह रंगहीन और सूखे दिखाई पड़ते हैं। जीवन का अंतिम सत्य यही है कि खुशियां और आनन्द केवल दो–चार दिनों के लिए ही होती हैं फिर जीवन में चारों तरफ दुख का हाहाकार ही फैला रहता है।

*आज बचपन का कोमल गात*
*जरा का पीला पात!*
*चार दिन सुखद चांदनी रात,*
*और फिर अंधकार अज्ञात!*

*शिशिर सा झर नयनों का नीर*
*झुलस देता गालों के फूल,*
*प्रणय का चुम्बन छोड़ अधीर*
*अधर जाते अधरों को भूल!*

*मृदुल होंठों का हिमजल हास*
*उड़ा जाता निरुश्वास समीर,*
*सरल भौंहों का शरदाकाश*
*घेर लेते घन, घिर गंभीर!*

*शून्य सांसों का विधुर वियोग*
*छुड़ाता अधर–मधुर संयोग,*
*मिलन के पल केवल दो–चार*
*विरह के कल्प अपार!*

*अरे वे अपलक चार नयन*

*आठ आंसू रोते निरुपायय*

*उठे–रोओं के आलिंगन*

*कसक उठते कांटों–से हाय!*

**शब्दार्थ** : गात– शरीर, जरा– बुढ़ापा, नीर– आंसू, प्रणय– प्रेम, अधीर– बेचैन, अधर– होंठ, मृदुल– कोमल, हिमजल– बर्फ का पानी, समीर– हवा, घन– बादल, नयन– आंखें।

**संदर्भ** : उपरोक्त

**प्रसंग** : कवि कह रहा है कि प्रेम में मिलन का क्षण अल्पकालिक होता है जबकि विरह की घड़ी बहुत बड़ी होती है।

**व्याख्या** : कवि कह रहा है कि भले ही आज हमारा शरीर बचपन की कोमलता लिए हुए है लेकिन कल यह बुढ़ापे के पीले पत्ते में बदल जाएगा। मनुष्य का शरीर और वृक्ष की पत्तियां जन्म लेने के बाद बहुत ही कोमल और सुंदर होती हैं लेकिन धीरे–धीरे वह बूढ़ी होती जाती हैं और उन पर बदरंगा पीलापन छाने लगता है। पंत जी कहते हैं कि जीवन और जगत में सुख की चांदनी रात केवल चार दिन की मेहमान होती है, उसके बाद दुख की अंधेरी रात का ही राज्य होता है। अर्थात सुख क्षणिक है और दुख ही संसार का सत्य है। भगवान बुद्ध ने भी यही कहा था। शिशिर ऋतु में जिस तरह पेड़ों के पत्ते झड़ते हैं वैसे ही दुख की बेला में आंखों से आंसू बहते हैं। इन आंसुओं की ज्वाला में फूल के तरह खिलने वाले गालों की सुंदरता कुंभला जाती है। जब जीवन में विपत्ति आती है तो व्यक्ति इतना बेचैन होता है कि प्रेम का चुंबन लेना भी भूल जाता है। प्रेम में एक दूसरे के अधरों में खोए रहने वाले प्रेमी भी संकट की घड़ी में एक दूसरे को भूल जाते हैं। तात्पर्य यह कि मिलन के पल क्षणिक होते हैं और अलगाव ही हकीकत है। दुख की घड़ी में लिए जाने वाला निःश्वास खुशी के समय होंठों पर उठने वाली हंसी को उड़ा ले जाता है। शरद की चांदनी रात की तरह सरल दिखने वाली भौंहों के ऊपर भी जब विपत्ति के घने बादल छाते हैं तो उस पर दुख की गंभीरता छा जाती है। विरह में निकलने वाली शून्य सांसें होंठों के मधुर मिलन को अलगा देती हैं। तात्पर्य यह कि मिलन की बेला को विरह की घड़ी समाप्त कर देती है। संसार की सच्चाई तो यह है कि मानव जीवन में मिलन के पल तो दो–चार ही है जबकि विरह की बेला कल्प की तरह अपार है। विरह की बेला उसके जीवन से कभी समाप्त ही नहीं होती। कभी एक दूसरे को लगातार निहारने वाली आंखें आज असहाय होकर आठ–आठ आंसू रो रही हैं। जीवन की विपदा में प्रेमी इस कदर उलझ गए है कि मिलन का कोई उपाय ही नहीं खोज पा रहे। मिलन के समय आनंद में आह्लादित होकर शरीर के जो रोम–रोम खड़े हो गए थे अब विरह की बेला में वे ही शरीर में कांटे की तरह गड़ रहे हैं। तात्पर्य यह कि सुख के समय जो वस्तुएं हमें आनन्दित करती हैं विपदा की घड़ी में वे ही हमें पीड़ित करती हैं।

*किसी को सोने के सुख साज*

*मिल गये यदि ऋण भी कुछ आज,*

*चुका लेता दुख कल ही ब्याज*
*काल को नहीं किसी की लाज!*

*विपुल मणि रत्नों का छवि जाल,*
*इन्द्रधनु की सी छटा विशाल–*
*विभव की विद्युत–ज्वाल*
*चमक, छिप जाती है तत्काल,*

*मोतियों जड़ी ओस की डार*
*हिला जाता चुपचाप बयार!*

*खोलता इधर जन्म लोचन*
*मूंदती उधर मृत्यु क्षण क्षण,*
*अभी उत्सव और हास हुलास,*
*अभी अवसाद, अश्रु, उच्छवास!*

*अचिरता देख जगत की आप*
*शून्य भरता समीर निःश्वास,*
*डालता पातों पर चुपचाप*
*ओस के आंसू नीलाकाश,*

*सिसक उठता समुद्र का मन,*
*सिहर उठते उडुडगन!*

**शब्दार्थ** : विपुल– बहुत अधिक, विभव– ऐश्वर्य, ज्वाल– ज्वाला, बयार– हवा, लोचन– आंखें, अवसाद– पीड़ा, अश्रु– आंसू, उच्छवास– आहें, अचिरता– नश्वरता।

**संदर्भ** : उपरोक्त

**प्रसंग** : कवि इन पंक्तियों में काल की निष्ठुरता का वर्णन कर रहा है और कह रहा है कि संसार में जितना सुख नहीं है उससे कहीं ज्यादा दुख है। संसार की इस अनित्यता से प्रकृति के भीतर उठने वाली वेदना का चित्रण कवि ने इन पंक्तियों में किया है। इस क्रम में कवि ने प्रकृति का मानवीकरण किया है।

**व्याख्या** : पंत जी संसार की निष्ठुरता का वर्णन करते हुए कहते हैं कि यदि किसी को जीवन में कर्ज के रूप में भी सुख के पल मिल जाते हैं तो दुख अगले ही दिन ब्याज सहित उसे वापस ले लेता है। संसार की इस वास्तविकता से खिन्न होकर कवि कहता है कि काल अर्थात मृत्यु को किसी का संकोच नहीं है। उसके पास किसी प्रकार का लिहाज नहीं है। वह अवसर–बेअवसर आपके जीवन में हस्तक्षेप कर आपकी समस्त खुशियों को आपसे छीन सकता है। बहुसंख्य मणि–रत्नों से संपन्न सांसारिक ऐश्वर्य का विराट वैभव आसमान में छाए इंद्रधनुष की तरह है। यह आकाश में चमकने वाली बिजली की तरह है जो एक क्षण के लिए चमकती है और फिर बादलों में छिप जाती है। सुख के मोती वृक्ष के पत्ते पर गिरी

बूंदों की तरह है जिसको दुख की हवा जब चाहे तब चुपचाप उड़ा ले जाती है। जीवन में दुख चुपके से आता है और जीवन के सुखों को उड़ा ले जाता है। संसार का कटु सत्य तो यही है कि एक तरफ जहां जिंदगी आंखें खोलती है वहीं दूसरी ओर प्रत्येक क्षण मृत्यु आंखे बंद करती रहती है। थोड़ी देर पहले जहां उत्सव का, आनंद का छाया रहता है और वही थोड़ी देर बाद दुख, आंसू और दर्द भरी आहें सुनाई पड़ने लगती है। इस 'अनित्य जगत' में कुछ भी स्थायी नहीं है। संसार की इस नश्वरता को देखकर हवाएं गहरी सांस भरती हैं। ऐसा लगता है जैसे प्रकृति–पुरुष संसार की इस अनित्यता के कारण दुखी है। नीला आकाश भी जगत की इस क्षणभंगुरता से पीड़ित है और ओस की बूंदों के रूप में रात्रिकाल में चुपचाप पत्तों पर गिरने वाली ओस की बूंदें उसकी आंखों के आंसू हैं।

## 2.3.2 पन्त काव्य में प्रकृति

सुमित्रानन्दन पन्त छायावाद के एक ऐसे कवि हैं जिन्हें प्रकृति चित्रण में सर्वाधिक सफलता मिली है। पन्त का प्रारम्भिक जीवन अल्मोड़ा (उत्तराखंड) के कौसानी के सुरम्य वातावरण में बीता। जिसका प्रभाव उनके जीवन और काव्य सभी पर पड़ा। पन्त की कविता में प्रकृति मनमोहक है एवं उसकी नैसर्गिक सुन्दरता को विशेष रूप से चित्रित किया गया है। पन्त के लिए प्रकृति माधुर्य, सुकुमारता, प्रणय, प्रेरणा और समर्पण आदि का पर्याय है।

पन्त के प्रकृति चित्रण पर टिप्पणी करते हुए आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने अपने प्रसिद्ध ग्रन्थ 'हिन्दी साहित्य का इतिहास' में लिखा है कि "छायावाद के भीतर माने जाने वाले सब कवियों में प्रकृति के साथ सीधा प्रेम सम्बन्ध पंतजी का ही दिखाई पड़ता है। प्रकृति के अत्यंत रमणीय खंड के बीच उनके हृदय ने रूपरंग पकड़ा है। 'पल्लव', 'उच्छ्वास' और 'आंसू' में हम उस मनोरम खंड की प्रेमार्द स्मृति पाते हैं। यह अवश्य है कि सुषमा की ही उमंगभरी भावना के भीतर हम उन्हें रमते देखते हैं।" आगे पन्त के प्रकृति–वर्णन की सीमा बताते हुए आचार्य रामचन्द्र शुक्ल कहते हैं कि "पर प्रकृति के बीच उसके गूढ़ और व्यापक सौन्दर्य तक–ग्रीष्म की ज्वाला में संतप्त चराचर पर उसकी छाया के मधुर, स्निग्ध, शीतल प्रभाव तक; उसके दर्शन से तृप्त कृषकों के आशापूर्ण उल्लास तक–कवि ने दृष्टि नहीं बढ़ाई है। कल्पना के आरोप पर ही जोर देनेवाले 'कलावाद' के संस्कार और प्रतिक्रिया के जोश ने उसे मेघ को व्यापक प्रकृति–भूमि पर न देखने दिया जिस पर कालिदास ने देखा था।"

पन्त के प्रकृति चित्रण की सीमाओं का उल्लेख करती आचार्य रामचन्द्र शुक्ल की इस टिप्पणी के बाद हम प्रकृति के सम्बन्ध में स्वयं पन्त के इस कथन को देख सकते हैं। पन्त ने 'आधुनिक कवि' की भूमिका में अपने और प्रकृति के बीच के रागात्मक लगावों स्पष्ट करते हुए कहा है कि "मेरे भीतर ऐसे संस्कार अवश्य रहे होंगे, जिन्होंने मुझे कवि कर्म करने की प्रेरणा दी, किन्तु इस प्रेरणा के विकास के लिए स्वप्नों के पालने की रचना पर्वत प्रदेश की दिगन्त व्यापी प्राकृतिक शोभा ने ही की, जिसने छुटपन से ही मुझे अपने रूपहले एकान्त में एकाग्र तन्मयता के रश्मि दोल में झुलाया, रिझाया तथा कोमल कंठ वन पंखियों के साथ बोलना एवं कुहकना सिखाया। प्रकृति निरीक्षण और प्रकृति प्रेम मेरे स्वभाव के अभिन्न अंग ही बन गये हैं, जिनसे मुझे जीवन के अनेक संकट क्षणों में अमोघ सांत्वना मिली।"

पन्त की प्रकृति चेतना निस्संदेह उनके मन की चीज है। वे प्रकृति के प्रति एक रागात्मक लगाव रखते हैं। जिसके लिए कुछ भी छोड़ने को तैयार हैं–

*छोड द्रुमों की मृदु छाया,*

*तोड़ प्रकृति से भी माया,*

*बाले तेरे बाल जाल में कैसे उलझा दूं लोचन?*

*छोड अभी से इसी जग को।*

पन्त ने प्रकृति का चित्रण ऐन्द्रिय अनुभूति और सूक्ष्म दोनों रूपों में किया है। उनके लिए सौन्दर्य स्वयं प्रकृति है। उनकी कविता में प्रकृति का कोमल स्वरूप अधिक प्रकट हुआ है। इसके लिए स्वंय पन्त का कोमल मन उत्तरदायी है। 'वीणा' और 'पल्लव' जैसी काव्य कृतियों में प्रकृति के कई रूप प्रकट हुए हैं। 'गुंजन' काव्य–संग्रह के प्रकाशन के बाद की कविताओं पर पन्त के वैचारिक चिन्तन का प्रभाव देखा जा सकता है। इस वैचारिक चिन्तन का प्रभाव उनके प्रकृति चित्रण में भी देखने को मिलता है। पन्त भी अन्य छायावादी कवियों की तरह प्रकृति के मानवीकरण में विशेष रुचि लेते हैं। अपनी प्रसिद्ध कविता 'नौका विहार' में वे गंगा नदी को स्त्री के रूप में चित्रण करते हैं–

*सैकत शय्या पर दुग्ध धवल, तन्वगी गंगा ग्रीष्मविरल*

*लेटी है श्रान्त क्लान्त निश्चल।*

*तापस बाला गंगा निर्मल, शशि मुख से दीपित मृदुकर तल*

*लहरें, उर पर कोमल कुन्तल।*

*गोरे अंगों पर सिहर–सिहर लहराता तरल–तरल सुन्दर*

*चंचल–चंचल सा नीलाम्बर।*

छायावादी कविता की एक प्रमुख विशेषता प्रतीकात्मकता है। पन्त ने भी अपने युग और काव्य परम्परा के अनुरूप प्रतीकात्मक शैली का सफल प्रयोग किया है। पन्त ने प्रकृति का चित्रण जहां प्रतीकात्मक शैली में किया है वहां कथ्य की गरिमा और सम्प्रेषणीयता अत्यधिक प्रकाशित हो गये हैं–

*ऊषा का था उर में आवास*

*मुकुल का मुख में मृदुल विकास*

*चांदनी का स्वभाव में वास,*

*विचारों में बच्चों की सांस।*

यहां ऊषा सुख का प्रतीक है, मुकुट प्रसन्नता का, चांदनी पवित्रता का और बच्चों की सांस भोलेपन का प्रतीक है। देखा जा सकता है कि प्रतीकात्मकता के कारण प्रकृति का अर्थ विस्तार हुआ है।

सुमित्रानन्दन पन्त ने प्रकृति को समस्त सम्भावनाओं से युक्त दिखाया है। वे प्रकृति में अव्यक्त सत्ता का आभास करते हैं। साथ ही प्रकृति और मनुष्य के बीच एक नैसर्गिक सम्बन्ध को स्थापित और सत्यापित करते हैं–

*स्तब्ध ज्योत्सना में जब संसार*

*चकित रहता शिशु–सा नादान*

*विश्व के पलकों पर सुकुमार*

*विचरते हैं जब स्वप्न अजान*

*न जाने नक्षत्रों से मौन?*

*निमंत्रण मुझे भेजता कौन?*

पन्त को आमतौर पर प्रकृति का सुकुमार कवि माना जाता है। क्योंकि उनकी कविता में प्रकृति का कोमल एवं सुकुमार रूप ही अधिक आया है। किन्तु पन्त ने प्रकृति को उसकी सम्पूर्णता में चित्रित किया है। उनके यहां यदि प्रकृति सुंदर और विराट है तो वहीं वह परिवर्तन का कारक और उग्र भी है–

*अये एक रोमांच तुम्हार दिग्भू कम्पन।*

*गिर–गिर पड़ते भीत पक्षि पोतों से उड़गन।।*

*आन्दोलित अम्बुधि फेनोन्नत कर शतशत फन।*

*मुग्ध भुजगम–सा इंगित पर अपना नर्तन।*

*दिक पंजर में बद्ध गजाधि पसा वितननातन।*

*वाताहत हो गगन आर्त करता गुरु गर्जन।*

पन्त अपनी कविता में प्रकृति को आलम्बन, उद्दीपन आदि रूपों में प्रस्तुत करते हैं। कहीं–कहीं वे प्रकृति जगत के कार्य–व्यापार को उसकी स्वाभाविकता और ध्वनि बिंबों के माध्यम से अद्भुत चित्र खिंचते हैं–

*बांसों का झुरमुट*

*सन्ध्या का झुटपुट*

*हैं चहक रही चिड़ियां–*

*टी–वी–टीं टुट्टुट्।*

यहां बांसों के झुरमुट में चहकती हुई चिड़ियों का वर्णन है। जिसमें वे 'चहकना' क्रिया को 'टी–वी–टीं टुट्टुट्' जैसे ध्वनि के साथ एकदम से सार्थक कर देते हैं। 'टी–वी–टीं टुट्टुट्' का अकेले कोई अर्थ नहीं है, किन्तु चिड़ियों के प्रसन्नता, चहकना जैसे भावों के साथ 'टी–वी–टीं टुट्टुट्' का प्रयोग कर वे भाषा पर अपने अधिकार और प्रकृति जगत से अपने विशेष परिचय को पाठकों के सामने लाते हैं।

पन्त प्रकृति का प्रयोग वातावरण निर्माण में भी करते हैं। प्रकृति के कुछ विशेष रूपों के माध्यम से वे विशेष प्रकार के वातावरण की सृष्टि करते हैं–

*जाड़ों की सूनी द्वाभा में झूल रही निशि छाया गहरी।*

*या*

*सिमटा पंख सांझ की लाली*

*जा बैठी तरु–शिखरों पर,*

*ताम्रपर्ण पीपल से शतमुख झरते*

*चंचल स्वर्णिम निर्झर।*

इस तरह देखें तो पन्त के प्रकृति चित्रण में स्वाभाविकता, चित्रात्मकता, प्रतीकात्मकता के साथ-साथ दार्शनिकता का अपूर्व संयोग मिलता है। उनके प्रकृति चित्रण में उनके भीतर का अनुराग प्रकट हुआ है। प्रकृति चित्रण की अपनी सीमाओं के बावजूद उनका प्रकृति चित्रण अद्वितीय है। उनके लिए जीवन प्रकृति की छाया नहीं, बल्कि स्वयं प्रकृति ही जीवन है। बचपन में ही मा को खो देने के बाद कौसानी के नैसर्गिक प्रकृति में ही उन्होंने मा का सहज दुलार और वात्सल्य खोजा और पाया। हिन्दी कविता में पन्त के जैसा प्रकृति चित्रण दुर्लभ है।

## 2.3.3 छायावादी काव्य भाषा और पन्त

भाषा के माध्यम से ही कवि अपने मनोभावों को अभिव्यक्त करता है। काव्य के कथ्य की सम्प्रेषणीयता का आधार भाषा है। इस दृष्टि से देखें तो सुमित्रानन्दन पन्त की कविता में भाषा के प्रयोग को लेकर अत्यंत सजगता लक्षित की जाती है। पन्त की कविता और उसकी कलात्मक सफलता में उनके द्वारा प्रयुक्त काव्य भाषा का सर्वाधिक योगदान है। पन्त ने अपनी अभिव्यंजना प्रधान और स्वाभाविक भाषा के द्वारा द्विवेदीयुगीन व्याकरण के शुष्क बन्धनों में जकड़ी खड़ी बोली को समृद्ध किया। वे अपने प्रसिद्ध काव्य-संग्रह 'पल्लव' की भूमिका में कहते हैं कि "खड़ी बोली जागरण की चेतना थी। द्विवेदी युग जिस जागरण का प्रारम्भ था, हमारा युग उसके विकास का समारम्भ था। छायावाद के शिल्पपक्ष में खड़ी बोली ने धीरे-धीरे सौन्दर्य-बोध, पद-मार्दव तथा भाव-गौरव प्राप्त कर प्रथम बार उचित भाषा का सिंहासन ग्रहण किया।" इससे यह स्पष्ट है कि पन्त के लिए भाषा भावों की अभिव्यक्ति का अनिवार्य तत्व है।

पन्त के काव्य में भाषा के दो रूप मिलते हैं। पहला संस्कृतनिष्ठ शब्दों से युक्त पदावली और दूसरा व्यावहारिक शब्दों से युक्त पदावली। संस्कृतनिष्ठ शब्दों से युक्त पदावली का प्रयोग 'वीणा', 'पल्लव' और 'गुंजन' जैसे काव्य संग्रहों में तो व्यावहारिक शब्दों से युक्त पदावली का प्रयोग 'युगान्त', 'युगवाणी' और 'ग्राम्या' संग्रह की भाषा में देखने को मिलता है। पन्त के पहले और बाद के संग्रहों की काव्य भाषा में आये इस परिवर्तन से उनकी भाषा सम्बन्धी मान्यताओं और उनकी काव्य भाषा के विकास की प्रक्रिया को समझा जा सकता है।

पन्त ने अपने काव्य-संग्रह 'पल्लव' में एक लम्बी भूमिका लिखी थी। उक्त भूमिका में पन्त ने कविता, कविता के विषय, छायावादी कविता के साथ ही खड़ी बोली हिन्दी पर अत्यंत महत्वपूर्ण टिप्पणियां की हैं। अपनी उस महान भूमिका के कारण ही 'पल्लव' को छायावाद का 'मेनीफेस्टो' कहा जाता है। वे पल्लव की भूमिका में कहते हैं कि "हिन्दी ने अब तुतलाना छोड़ दिया, वह 'पिय' को 'प्रिय' कहने लगी है। उसका किशोर कण्ठ फूट गया, अस्फुट अंग कट-छट गए।" छायावाद की भाषा में जो महत्तम सुधार और गरिमा आयी, उसके निर्माण में पन्त का योगदान अभूतपूर्व है। पन्त ने अपनी रचनाओं में प्रांजल भाषा, सादृश्य योजना, छंद विधान, अप्रस्तुत योजना, नाद सौन्दर्य आदि का प्रयोग कर छायावाद की भाषा को एक नई भंगिमा, एक नई ताजगी तथा एक नई शक्ति से भर दिया। पल्लव की भूमिका में काव्य में भाषा के प्रयोग को लेकर एक व्यावहारिक उदाहरण के साथ

इस तरह देखें तो पन्त के प्रकृति चित्रण में स्वाभाविकता, चित्रात्मकता, प्रतीकात्मकता के साथ–साथ दार्शनिकता का अपूर्व संयोग मिलता है। उनके प्रकृति चित्रण में उनके भीतर का अनुराग प्रकट हुआ है। प्रकृति चित्रण की अपनी सीमाओं के बावजूद उनका प्रकृति चित्रण अद्वितीय है। उनके लिए जीवन प्रकृति की छाया नहीं, बल्कि स्वयं प्रकृति ही जीवन है। बचपन में ही मां को खो देने के बाद कौसानी के नैसर्गिक प्रकृति में ही उन्होंने मां का सहज दुलार और वात्सल्य खोजा और पाया। हिन्दी कविता में पन्त के जैसा प्रकृति चित्रण दुर्लभ है।

## 2.3.3 छायावादी काव्य भाषा और पन्त

भाषा के माध्यम से ही कवि अपने मनोभावों को अभिव्यक्त करता है। काव्य के कथ्य की सम्प्रेषणीयता का आधार भाषा है। इस दृष्टि से देखें तो सुमित्रानन्दन पन्त की कविता में भाषा के प्रयोग को लेकर अत्यंत सजगता लक्षित की जाती है। पन्त की कविता और उसकी कलात्मक सफलता में उनके द्वारा प्रयुक्त काव्य भाषा का सर्वाधिक योगदान है। पन्त ने अपनी अभिव्यंजना प्रधान और स्वाभाविक भाषा के द्वारा द्विवेदीयुगीन व्याकरण के शुष्क बंधनों में जकड़ी खड़ी बोली को समृद्ध किया। वे अपने प्रसिद्ध काव्य–संग्रह 'पल्लव' की भूमिका में कहते हैं कि "खड़ी बोली जागरण की चेतना थी। द्विवेदी युग जिस जागरण का प्रारम्भ था, हमारा युग उसके विकास का समारम्भ था। छायावाद के शिल्पकक्ष में खड़ी बोली ने धीरे–धीरे सौन्दर्य–बोध, पद–मार्दव तथा भाव–गौरव प्राप्त कर प्रथम बार उचित भाषा का सिंहासन ग्रहण किया।" इससे यह स्पष्ट है कि पन्त के लिए भाषा भावों की अभिव्यक्ति का अनिवार्य तत्व है।

पन्त के काव्य में भाषा के दो रूप मिलते हैं। पहला संस्कृतनिष्ठ शब्दों से युक्त पदावली और दूसरा व्यावहारिक शब्दों से युक्त पदावली। संस्कृतनिष्ठ शब्दों से युक्त पदावली का प्रयोग 'वीणा', 'पल्लव' और 'गुंजन' जैसे काव्य संग्रहों में तो व्यावहारिक शब्दों से युक्त पदावली का प्रयोग 'युगान्त', 'युगवाणी' और 'ग्राम्या' संग्रह की भाषा में देखने को मिलता है। पन्त के पहले और बाद के संग्रहों की काव्य भाषा में आये इस परिवर्तन से उनकी भाषा सम्बन्धी मान्यताओं और उनकी काव्य भाषा के विकास की प्रक्रिया को समझा जा सकता है।

पन्त ने अपने काव्य–संग्रह 'पल्लव' में एक लम्बी भूमिका लिखी थी। उक्त भूमिका में पन्त ने कविता, कविता के विषय, छायावादी कविता के साथ ही खड़ी बोली हिन्दी पर अत्यंत महत्वपूर्ण टिप्पणियां की हैं। अपनी उस महान भूमिका के कारण ही 'पल्लव' को छायावाद का 'मेनीफेस्टो' कहा जाता है। वे पल्लव की भूमिका में कहते हैं कि 'हिन्दी ने अब तुतलाना छोड़ दिया, वह 'पिय' को 'प्रिय' कहने लगी है। उसका किशोर कण्ठ फूट गया, अस्फुट अंग कट–छट गए।" छायावाद की भाषा में जो महत्तम सुधार और गरिमा आयी, उसके निर्माण में पन्त का योगदान अभूतपूर्व है। पन्त ने अपनी रचनाओं में प्राजल भाषा, सादृश्य योजना, छंद विधान, अप्रस्तुत योजना, नाद सौन्दर्य आदि का प्रयोग कर छायावाद की भाषा को एक नई भंगिमा, एक नई ताजगी तथा एक नई शक्ति से भर दिया। पल्लव की भूमिका में काव्य में भाषा के प्रयोग को लेकर एक व्यावहारिक उदाहरण के साथ

वे कहते हैं कि "जिस प्रकार बड़ी चुवाने से पहले उड़द की पीठी को मथकर हल्का तथा कोमल कर लेना पड़ता है, कविता के स्वरूप में भावों के सांचे में ढालने के पूर्व भाषा को भी हृदय के ताप में गलाकर कोमल, करुण, सरस एवं प्रांजल कर लेना पड़ता है।"

पन्त की भाषा संवेदना की चित्रात्मक अभिव्यक्ति करने में अत्यधिक सफलता पाती है। चित्रात्मकता के साथ ध्वन्यात्मकता भी उनकी भाषा का खास गुण है। ध्वनि और चित्र के माध्यम से पन्त अपनी काव्य भाषा में भाव और अर्थ का अनुपम संसार रचते हैं–

*एक पल मेरे प्रिया के दृग पलक,*
*थे उठे ऊपर सहज नीचे गिरे*
*चपलता ने इस विकम्पित पुलक से*
*दृढ़ किया मानो प्रणय सम्बन्ध था।*

पन्त ने दूसरे हिन्दी कवियों की तरह ही बंगला भाषा के संस्कार, प्रभाव को ग्रहण किया, किन्तु उन्हें जस का तस प्रयोग न कर उसे अपने अनुभवों और हिन्दी की शब्दावली के साथ अद्भुत अर्थ और व्यंजना उत्पन्न करते हैं–

*आदिकाल में बाल–प्रकृति जब*
*थी प्रसुप्त, मृतवत, हतज्ञान*
*शस्य–शून्य वसुधा का अंचल*
*निश्चल जलनिधि, रवि–शशि म्लान।*

पन्त की काव्य भाषा में कोमलता, सुकुमारता का वैभव भी पूरी गरिमा के साथ उपस्थित है। वे कोमल शब्दों का प्रयोग कर भावों का प्रभावशाली माधुर्य की सृष्टि करते हैं। 'नौका विहार' कविता की इन पंक्तियों को उदाहरण के तौर पर देखा जा सकता है–

*मृदु मन्द–मन्द मन्थर–मन्थर*
*लघुतरणि हंसिनी सी सुन्दर*
*तिर रही खोल पालों के पर।*

साथ ही पन्त ने अपनी भाषा में लाक्षणिकता को एक विशिष्ट शैली के रूप में प्रयोग किया है। लाक्षणिकता का प्रयोग छायावाद के अन्य कवियों की रचनाओं में भी खूब मिलता है। किन्तु पन्त की कविता में लाक्षणिक पदों की स्वाभाविकता उनकी काव्य–भाषा को महत्वपूर्ण बनाती है–

*शैवलिनी जाओ मिलो तुम सिन्धु से*
*अनिल आलिंगन करो तुम गगन का*
*चन्दिके चूमो तरंगो के अधर*
*उडुगनो गावो पवन वीणा बजा*
*पर हृदय सब भांति तू कंगाल है।*

पन्त आभिजात्य स्वभाव के व्यक्ति थे। किन्तु प्रसंगानुकूल भाषा के आग्रह के चलते वे देशज शब्दों का सार्थक प्रयोग करते थे। उनकी कविता में लोकभाषा के शब्दों का भी

**3.0**

प्रयोग हुआ है। जैसे, झौर, ठौरे–ठौर, धीरे झूम, दुलराना आदि। पन्त ने भावों की पूर्ण अभिव्यक्ति के लिए नये शब्दों का सृजन कर छायावादी काव्य भाषा को समृद्ध किया है। अनेक अवसरों पर उन्होंने तत्सम और तद्भव शब्दों में प्रत्यय लगाकर नये शब्दों का निर्माण किया है। जैसे– फेनिल, रंगिणि, तरंगिनि, स्वप्निल, स्वरित, तन्द्रिल आदि।

इन विशेषताओं के आधार पर कहा जा सकता है कि पन्त ने अपनी भाषा में छायावादी काव्य भाषा की विशेषताओं को आत्मसात किया साथ ही अपनी अभिनव भाषा दृष्टि से छायावाद की काव्य–भाषा और खड़ी बोली हिन्दी को समृद्ध किया।

हिन्दी साहित्य के इतिहास में आधुनिक हिन्दी साहित्य अपने पूर्ववर्ती हिन्दी साहित्य से वर्ण्य, रूप, विधा आदि में भिन्न है। उसमें परिवर्तन की गति भी पूर्ववर्ती साहित्य की गति की अपेक्षा बहुत अधिक रही है। इन परिवर्तनों का कारण आधुनिक काल की भिन्न–भिन्न परिस्थितियां हैं, जो इस देश के पाश्चात्य जगत से संपर्क में आने के कारण उत्पन्न हुईं। साहित्य एक निरंतर गतिशील भावधारा और विचारधारा है, जो प्राचीन परंपराओं से जुड़ी होकर भी आगे बढ़ती रहती है।

'आधुनिक' शब्द कालवाचक 'अधुना' अव्यय से बना है। 'अधुना' का अर्थ है 'इस समय', 'संप्रति', 'वर्तमान काल'। अतः आधुनिक का अर्थ है 'इस समय का', 'हाल का', 'नया', 'वर्तमान समय का'। इस दृष्टि से केवल अपने सामने उपस्थित समय को ही 'आधुनिक काल' कह सकते हैं।

छायावाद के बाद एक सशक्त साहित्यिक आन्दोलन के रूप में प्रगतिवाद का जन्म हुआ। प्रगतिवादी उसे कहा गया जो मार्क्सवादी विचारधारा में विश्वास रखता हो तथा उसी के अनुसार साहित्य रचता हो। प्रगतिवादी काव्यधारा ने हिन्दी कवियों को बहुत प्रभावित किया। नागार्जुन, गजानन माधव मुक्तिबोध, त्रिलोचन शास्त्री, केदारनाथ अग्रवाल, रामविलास शर्मा, शमशेर बहादुर सिंह आदि इसी काव्यधारा की देन थे।

समकालीन हिन्दी काव्य परिदृश्य में नागार्जुन को महत्ता प्राप्त है। इनके काव्य में तेवरपन, गहन आंचलिकता, व्यंग्यपूर्ण आक्रामकता पाई जाती है। युगधारा, शपथ प्रेत का बयान, चना जोर गरम, सतरंगे पंखों वाली, तालाब की मछलियां, प्यासी पथराई आंखें आदि इनके प्रमुख काव्य संग्रह हैं।

गजानन माधव मुक्तिबोध की दृष्टि मार्क्सवादी रही है। उन्होंने यथार्थ चित्रण के लिए फैंटेसी का प्रयोग किया है। इस प्रकार उनकी रचनाओं में नाटकीयता है। 'चांद का मुंह टेढा है', 'भूरी-भूरी खाक धूल', 'अंधेरे में' उनकी प्रमुख रचनाएं हैं।

अज्ञेय को प्रयोगवाद का प्रवर्तक माना जाता है। प्रगतिवाद के बाद का काल प्रयोगवाद के नाम से जाना जाता है। सन् 1943 में अज्ञेय ने 'तारसप्तक' का प्रकाशन किया। प्रयोगवादी काव्य के समय देश स्वतंत्र हो चुका था। अज्ञेय का प्रथम काव्य संग्रह 'भग्नदूत' है। 'हरी घास पर क्षण भर', 'चिन्ता', 'बावरा अहेरी', 'आंगन के पार द्वार', 'कितनी नावों में कितनी बार' आदि इनकी अन्य प्रमुख रचनाएं हैं। इन्होंने अपनी रचनाओं में काव्य सत्य पर विचार किया है।

सर्वेश्वरदयाल सक्सेना की काव्य यात्रा में अनेक उतार-चढाव देखने को मिलते हैं। आरम्भ में उन पर व्यक्तिवादी धारा का प्रभाव था, बाद में वे प्रगतिशील काव्यधारा की ओर झुके। इनकी कविताओं में निजता व आत्मीयता पाई जाती है। 'काठ की घंटियां', 'जंगल का दर्द' आदि इनकी प्रमुख कृतियां हैं। इनकी कविताएं सहज, सरल और सपाट हैं।

प्रस्तुत इकाई में आधुनिक काल के प्रमुख कवि नागार्जुन, अज्ञेय, मुक्तिबोध एवं सर्वेश्वरदयाल सक्सेना का जीवन परिचय, उनकी मुख्य कविताओं का पाठ्यांश तथा काव्यगत विशेषताओं का वर्णन किया गया है।

## 3.1 इकाई के उद्देश्य

इस इकाई को पढने के बाद आप–

- आधुनिक काल के कवियों के बारे में जान पाएंगे;
- जन कवि नागार्जुन की काव्यगत विशेषताओं को समझ पाएंगे;
- अज्ञेय के प्रयोगवाद की व्याख्या कर पाएंगे;
- मुक्तिबोध के जीवन के मार्क्सवादी दृष्टिकोण को समझ पाएंगे;
- सर्वेश्वरदयाल सक्सेना की कविता का पाठ्यांश एवं काव्यगत विशेषताओं की समीक्षा कर पाएंगे।

## 3.2 नागार्जुन : सामान्य परिचय

हिन्दी कविता को सामान्य जन समुदाय के जीवन के समीप लाने और उसे जनता के मुहावरे में बदल देने वाले कवि नागार्जुन का जन्म दरभंगा (बिहार) के तरौनी गांव में 1911 ई. को हुआ था। नागार्जुन के बचपन का नाम वैद्यनाथ मिश्र था। साहित्य और समाज में नागार्जुन को प्यार से 'बाबा नागार्जुन' कहा जाता है। इनके पिता किसान थे और गृहस्थी

चलाने के लिए पुरोहिती भी करते थे। नागार्जुन का विवाह बहुत कम उम्र में हो गया था। किन्तु ज्ञान के प्रति इनकी लगन और जिद को घर–गृहस्थी का बंधन रोक नहीं पाया। नागार्जुन ने कलकत्ता और वाराणसी में रहकर शिक्षा अर्जित की।

नागार्जुन फक्कड़ स्वभाव के थे। उनके व्यक्तित्व में एक तरफ ज्ञान के प्रति चरम जिज्ञासा थी तो दूसरी तरफ किसानों–मजदूरों के लिए असीम स्नेह था। नागार्जुन पहले यात्री के नाम से मैथिली और हिन्दी भाषा में कविताएं लिखते थे। बाद के दिनों में महापंडित राहुल सांकृत्यायन के प्रभाव के कारण नागार्जुन की चेतना और जीवन के प्रति दृष्टिकोण में व्यापक बदलाव आया। सांकृत्यायन जी के सम्पर्क में आने के बाद ही नागार्जुन ने बौद्ध धर्म को अपनाया। बौद्ध धर्म में दीक्षित होने के बाद ही उन्होंने 'यात्री' और 'वैद्यनाथ' की जगह अपना नाम 'नागार्जुन' रखा।

नागार्जुन ने बौद्ध धर्म अपनाने के बाद पालि और प्राकृत भाषा का अध्ययन किया। इन भाषाओं के माध्यम से वे बौद्ध साहित्य और दर्शन का विधिवत अध्ययन–विश्लेषण कर सके। सत्य की खोज में उन्होंने लाहौर, श्रीलंका, तिब्बत और बर्मा आदि स्थानों की यात्रा की।

नागार्जुन की चेतना पर मार्क्सवाद का प्रभाव था। उन्होंने भारतीय सामाजिक संरचना की विसंगतियों, आर्थिक विषमता, किसान–मजदूरों के शोषण, जातिवाद का दंश, स्त्री–जीवन के संकटों को बहुत नजदीक से देखा था, इसीलिए उनके भीतर समाज के इन वर्गों के प्रति गहरी सहानुभूति थी। नागार्जुन की प्रतिबद्धता न सिर्फ लेखन के स्तर पर थी बल्कि वे व्यक्तिगत जीवन में भी किसान–मजदूरों के साथ खड़े होते थे। लेखन के अलावा उनकी लोकप्रियता का यह भी एक कारण था। प्रसिद्ध किसान नेता स्वामी सहजानन्द के साथ उन्होंने बिहार के किसान आन्दोलनों में और बाद में जयप्रकाश नारायण के प्रसिद्ध आंदोलन में बढ़–चढ़ कर हिस्सा लिया।

नागार्जुन के घर की आर्थिक स्थिति काफी खराब थी। घर–गृहस्थी के लिए वे जीवन भर संघर्ष करते रहे, किन्तु उन्होंने कभी भी कोई समझौता नहीं किया। वे पूरे साहस के साथ सरकार की जनविरोधी नीतियों का विरोध करते रहे। संघर्ष और सृजन करते हुए जनता के इस योद्धा कवि का 5 नवम्बर, 1998 को निधन हो गया।

## नागार्जुन की रचनाएं

**उपन्यास**– रतिनाथ की चाची, बाबा बटेसरनाथ, दुखमोचन, बलचनमा, वरूण के बेटे, नई पौध, आदि।

**कविता संग्रह**– युगधारा, सतरंगे पंखों वाली, प्यासी पथरायी आंखें, तालाब की मछलियां, चन्दना, खिचड़ी विप्लव देखा हमने, तुमने कहा था, पुरानी जूतियों का कोरस, हजार–हजार बांहोंवाली, पका है यह कटहल, अपने खेत में, मै मिलिट्री का बूढ़ा घोड़ा।

**मैथिली काव्य संग्रह**– चित्रा, पत्रहीन नग्न गाछ

**खंडकाव्य**– भस्मांकुर, भूमिजा

**अन्य**– एक संस्कृत काव्य "धर्मलोक शतकम्" तथा संस्कृत से कुछ अनूदित कृतियों के रचयिता।

**सम्मान**– मैथिली काव्य संग्रह पत्रहीन नग्न गाछ के लिए साहित्य अकादमी सम्मान।

## 3.2.1 नागार्जुन : पाठ्यांश – उनको प्रणाम, अकाल और उसके बाद

### 1. उनको प्रणाम

*जो नहीं हो सके पूर्ण–काम*
*मैं उनको करता हूं प्रणाम।*
*कुछ कुंठित और कुछ लक्ष्य–भ्रष्ट*
*जिनके अभिमंत्रित तीर हुए,*
*रण की समाप्ति के पहले ही*
*जो वीर रिक्त तूणीर हुए!*
*उनको प्रणाम!*
*जो छोटी–सी नैया लेकर*
*उतरे करने को उदधि–पार,*
*मन की मन में ही रही, स्वयं*
*हो गए उसी में निराकार!*
*उनको प्रणाम!*

**शब्दार्थ** : पूर्ण काम– जिन्होंने अपनी कामनाओं को पूरा कर लिया हो, कुंठित– अवरुद्ध, गतिहीन, जो व्यक्ति लज्जा या संकोच की वजह से आगे बढ़ने से रुक गया हो, लक्ष्य–भ्रष्ट– लक्ष्य से भटकने वाले, अभिमंत्रित– मंत्र से सींचे हुए, रण– युद्ध, तूणीर– बाण, उदधि– समुद्र।

**संदर्भ** : प्रस्तुत पंक्तियां प्रगतिवादी काव्यधारा के प्रसिद्ध कवि नागार्जुन की प्रसिद्ध कविता 'उनको प्रणाम' से ली गई हैं। यह कविता लक्ष्य को पा सकने में असफल रहे व्यक्तियों को लक्ष्य कर लिखी गई है। दुनिया में केवल उनकी ही पूजा होती है जिन्होंने किसी सफलता को प्राप्त किया है जबकि सफलता और असफलता के बीच का फासला कभी–कभी बहुत कम होता है। समाज का सबसे बड़ा सत्य तो यह है कि अनेक असफल व्यक्तियों के प्रयासों से सीख लेते हुए ही कोई व्यक्ति सफल होता है।

**प्रसंग** : इन पंक्तियों में कवि उन लोगों को नमन करते हुए याद कर रहा है जिन्होंने अपने लक्ष्य की प्राप्ति के लिए जो प्रयास किए थे वे ठीक–ठिकाने तक नहीं पहुंच पाए। जो जीवन के युद्ध के बीच में ही चूक गये।

**व्याख्या** : कवि कह रहा है कि इस जगत में जो भी व्यक्ति किसी कार्य को पूर्ण कर पाने में सफल नहीं हो पाए, मैं उनको प्रणाम करता हूं। इसकी व्यंजना यह है कि जो किसी कार्य में सफल हो गए उनको तो सारा जगत ही प्रणाम करता है। जगत में जो भी व्यक्ति किसी लक्ष्य को लेकर आगे बढ़ता है, उसके भीतर उसको प्राप्त करने की अदम्य लालसा होती है। लेकिन जिन्दगी की विभिन्न परिस्थितियों की वजह से उनमें से कुछ कुंठित हो जाते

है, तो कुछ अपने मूल लक्ष्य से भटक जाते हैं। लक्ष्य की प्राप्ति के लिए उनके द्वारा उठाए गए कदम काफी सोच–समझकर ही उठाए जाते हैं लेकिन किसी वजह से वे कदम उस मंजिल तक उन्हें नहीं पहुंचा पाते जिनको पाने की उनके भीतर कामना होती है। 'अभिमंत्रित तीर' से कवि का तात्पर्य सोच–विचारकर लक्ष्य प्राप्ति के लिए उठाए गए कदम से है। कवि आगे कहता है कि मैं जीवन संग्राम के उन वीरों को प्रणाम करता हूं जिनके प्रयास और साहस रूपी तीर जीवन–संग्राम की समाप्ति के पहले ही समाप्त हो गए। आमतौर पर ऐसे लोगों के प्रति हमारे भीतर नकारात्मक भावना जन्म ले लेती है।

मैं उन लोगों को भी प्रणाम करता हूं जो सीमित साधनों रूपी नाव में बैठकर जीवन रूपी सागर को पार करने चले थे। उनकी समस्त जिन्दगी गुजर गयी लेकिन उनके सपने और लक्ष्य उनके मन के भीतर ही रह गए, वे कभी उसे जमीन पर नहीं उतार पाए। कवि कह रहा है कि संसार में बहुत सारे लोग ऐसे हैं जो अपने समस्त सपनों और कामनाओं को दिल में लिए हुए, गुमनामी की जिन्दगी जीते हुए इस संसार को छोडकर चले जाते हैं। संसार में कोई उनको याद नहीं करता पर मैं उनको प्रणाम करता हूं।

*जो उच्च शिखर की ओर बढ़े*
*रह–रह नव–नव उत्साह भरे,*
*पर कुछ ने ले ली हिम–समाधि*
*कुछ असफल ही नीचे उतरे!*
*उनको प्रणाम!*
*एकाकी और अकिंचन हो*
*जो भू–परिक्रमा को निकले,*
*हो गए पंगु, प्रति–पद जिनके*
*इतने अदृष्ट के दाव चले!*
*उनको प्रणाम!*

**शब्दार्थ** : नव– नवीन, हिम समाधि– बर्फ में दब जाना, अकिंचन– बहुत गरीब, दरिद्र।

**संदर्भ** : उपरोक्त

**प्रसंग** : इन पंक्तियों में कवि बड़े लक्ष्य की प्राप्ति में जान गंवाने वाले, असफल होने वाले और सब कुछ खो देने वाले व्यक्तियों के प्रति अपने श्रद्धा सुमन अर्पित कर रहे हैं।

**व्याख्या** : नागार्जुन कह रहे हैं कि नवीन उत्साह में भरकर किसी बडे लक्ष्य की प्राप्ति के लिए चल निकले। ऐसा उन्होंने बार–बार किया। इस क्रम में कुछ ऐसे थे जिन्होंने अपने उस विशाल लक्ष्य को प्राप्त करने के दौरान ही हिम–समाधि ले ली अर्थात मृत्यु को प्राप्त हो गए और कुछ ऐसे थे जो तमाम विघ्न बाधाओं की वजह से असफल होकर बीच से ही लौट आए। कवि उन सबको प्रणाम करता है। लक्ष्य की प्राप्ति के लिए किए जाने वाले उनके प्रयास को ही कवि नमन योग्य मानता है। कवि की नजरों में लक्ष्य प्राप्ति से बडा है उसके लिए मनोयोग से किया जाने वाला प्रयास।

कवि उन लोगों को भी नमस्कार करता है जो गरीब थे और अकेले भी, लेकिन पूरी पृथ्वी की परिक्रमा करने निकल पड़े, परंतु इस परिक्रमा के दौरान अदृश्य शक्तियों ने इतनी बाधाएं पैदा कीं कि दोनों पांव गवां बैठे। कवि यहां अभावों का जीवनयापन करने वाले उन साहसी लोगों के साहस को याद कर रहा है जो तमाम गरीबी के बावजूद बड़े लक्ष्य की प्राप्ति के लिए संघर्षरत रहे। पर भाग्य का ऐसा खेल रहा कि उनके पास अपना जो कुछ भी था उसको भी गवां बैठे। संसार में बहुत सारे संभावनाशील मनुष्य नियति का शिकार हो जाते हैं।

*कृत–कृत नहीं जो हो पाए,*
*प्रत्युत फांसी पर गए झूल*
*कुछ ही दिन बीते हैं, फिर भी*
*यह दुनिया जिनको गई भूल!*
*उनको प्रणाम!*
*थी उम्र साधना, पर जिनका*
*जीवन नाटक दुःखांत हुआ,*
*या जन्म–काल में सिंह लग्न*
*पर कुसमय ही देहांत हुआ!*
*उनको प्रणाम!*

**शब्दार्थ** : कृत–कृत– संतुष्ट तथा प्रसन्न, प्रत्युत– बल्कि, वरन, कुसमय– खराब समय, देहांत– मृत्यु

**संदर्भ** : उपरोक्त

**प्रसंग** : कवि इन पंक्तियों में ऐसे व्यक्तियों को याद करता है जो अपने लक्ष्य को प्राप्त करने के पहले ही मृत्यु को प्राप्त कर लेते हैं और उस लक्ष्य के पूरे होने के बाद मिलने वाले आनंद से वंचित रह जाते हैं।

**व्याख्या** : नागार्जुन कह रहे हैं कि लक्ष्य की प्राप्ति के बाद मिलने वाले आनंद के सुख का उपभोग न कर पाने वाले उन लोगों को मैं प्रणाम करता हूं जो उस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए फांसी के फंदे पर झूल गए। भारत के स्वाधीनता आन्दोलन के दौरान ऐसे अनेक उदाहरण देखने को मिलते हैं। हम अपने आसपास भी ऐसे अनेक लोगों को पाते हैं जो अपने परिवार, समाज और राष्ट्र की किसी समस्या के समाधान के लिए अपना जीवन समाप्त कर लेते हैं और उस समस्या के समाधान के बाद उसका आनन्द अन्य लोग लेते हैं। लेकिन इसकी सबसे बड़ी विडम्बना यह है कि जो लोग यह आनन्द उठाते हैं वही उस व्यक्ति को भूल जाते हैं। ऐसे लोगों के साथ एक अन्याय तो शोषक या नियति करती है तो दूसरा अन्याय वे लोग करते हैं जिनके लिए उस व्यक्ति ने जान दी है। कवि वैसे व्यक्तियों को याद करता है और अपने पाठकों से ऐसा करने की उम्मीद करता है।

ऐसे लोग भी अभिनन्दन के योग्य हैं जो अपने लक्ष्य की प्राप्ति के लिए साधनारत थे लेकिन किसी कारणवश उनके जीवन का अंत हो गया। ऐसे लोग भी प्रणाम योग्य हैं जिनको ईश्वर द्वारा ही अल्प आयु मिली थी और उनका कम उम्र में ही देहांत हो गया। लक्ष्य के अधूरे रह जाने में इन लोगों की कोई गलती नहीं थी। ये न लक्ष्य–भ्रष्ट हुए और न ही असफल। किस्मत ने ही इनको छल दिया, जबकि इनके अंदर श्रेष्ठ कर पाने की संभावना विद्यमान थी।

*दृढ़ व्रत औ' दुर्दम साहस के*
*जो उदाहरण थे मूर्ति–मंत?*
*पर निरवधि बंदी जीवन ने*
*जिनकी धुन का कर दिया अंत!*
*उनको प्रणाम!*
*जिनकी सेवाएं अतुलनीय*
*पर विज्ञापन से रहे दूर*
*प्रतिकूल परिस्थिति ने जिनके*
*कर दिए मनोरथ चूर–चूर!*
*उनको प्रणाम!*

**शब्दार्थ** : दुर्दम– प्रबल, प्रचंड, निरवधि– सीमारहित, लगातार, निरंतर

**संदर्भ** : उपरोक्त

**प्रसंग** : इन पंक्तियों में कवि उन लोगों का ध्यान आकर्षित करना चाहता है जो कठिन इच्छाशक्ति और बेजोड़ साहस वाले थे लेकिन जिनका सारा उत्साह जीवन के कैदखाने में बंद रहने के कारण समाप्त हो गया।

**व्याख्या** : जो लोग दृढ़ इच्छाशक्ति के धनी और जिसको दबाया न जा सके ऐसे साहस की मूर्ति थे। इन गुणों के उदाहरण के रूप में जिनकी समाज में प्रतिष्ठा थी। पर जिनका सारा जीवन सीमारहित कैदखाने में बीत गया और उनके भीतर की समस्त इच्छाशक्ति और उत्साह का अंत हो गया। कवि ऐसे व्यक्तियों के साहस और इच्छाशक्ति को प्रणाम करना चाहता है। यहां कैदखाना जीवन का भी है और दीवारों वाला भी।

कविता के अंत में कवि ऐसे व्यक्तियों को याद कर रहा है जो तमाम दिखावे से दूर रहकर मौन भाव से समाज की अतुलनीय सेवा करते रहे। पूंजीवाद के वर्तमान युग में तो काम से ज्यादा विज्ञापन का जोर है। तब ऐसे समय में कवि समाज के उन मौन–साधकों को याद कर रहा है जो तमाम तरह के दिखावे से दूर हैं। सबसे आखिर में कवि उन सभी लोगों को प्रणाम करता है जिनकी तमाम मनोकामनाओं को प्रतिकूल परिस्थितियों ने चकनाचूर कर दिया है।

## 2. अकाल और उसके बाद

*कई दिनों तक चूल्हा रोया, चक्की रही उदास*
*कई दिनों तक कानी कुतिया सोई उनके पास*
*कई दिनों तक लगी भीत पर छिपकलियों की गश्त*
*कई दिनों तक चूहों की भी हालत रही शिकस्त।*

**शब्दार्थ** : चूल्हा– मिट्टी से बना हुआ भोजन पकाने का उपादान, चक्की– पत्थर का बना हुआ एक यंत्र जिससे गेहूं पीसा जाता है, कानी कुतिया– ऐसी कुतिया जिसके पास केवल एक ही आंख हो, भीत– दीवार, गश्त– घूमना, शिकस्त– पराजय, हार।

**सन्दर्भ** : प्रस्तुत पंक्तियां प्रगतिवादी कवि नागार्जुन की प्रसिद्ध कविता 'अकाल और उसके बाद' की आरंभिक पंक्तियां हैं। बिहार में आए भयानक अकाल से दुखी होकर कवि ने इस कविता की रचना की थी। इस कविता के पहले हिस्से में अकाल के भयानक प्रभाव का वर्णन है जबकि इसके दूसरे हिस्से में अन्न आने के पश्चात घर में आई खुशी का चित्रण है।

**प्रसंग** : इन पंक्तियों में अकाल के दौरान घर में रहने वाले जानवरों की स्थिति के चित्रण के माध्यम से अकाल के भयानक प्रभाव का प्रभावी चित्रण किया गया है।

**व्याख्या** : अकाल के बाद की स्थिति को बताते हुए कवि कहता है कि अकाल के कारण घर में अन्न का अभाव था, इस वजह से न चूल्हा जल सका और न ही चक्की चल सकी। अकाल के कारण घर में अन्न का दाना नहीं है, इसलिए चक्की चलाकर गेहूं पीसने और चूल्हे पर उसकी रोटी पकाने का कार्य नहीं हो पा रहा है। चूल्हे के रोने और चक्की की उदासी की व्यंजना यह है कि परिवार के लोग भोजन के अभाव में रो रहे हैं और भूख और गरीबी की वजह से उनका हृदय उदास है। जब घर में मनुष्यों को खाने के लिए अन्न नहीं है तो जानवरों को भला क्या मिलता? घर की पालतू कुतिया भोजन के लिए बेचैन है इसलिए वह कभी चूल्हे के पास और कभी चक्की के पास सो रही है। आम दिनों में कुतिया का इन जगहों पर जाना संभव नहीं है क्योंकि यह भोजन पकाने की पवित्र जगहें होती हैं, लेकिन अकाल की वजह से अब परिवार के लोगों की इसमें दिलचस्पी नहीं है। कुतिया की तरह ही कई दिनों से छिपकली भी भोजन की प्रतीक्षा में दीवारों पर घूम रही है और चूहे तो भूख के मारे बेहाल ही हो गये हैं। तात्पर्य यह कि उस घर पर आश्रित सभी जानवरों की हालत बेहद खराब है। कविता की प्रत्येक पंक्ति का आरंभ 'कई दिनों' पदबंध से होता है, जिससे जहां एक तरफ कविता में लय का सृजन होता है वहीं यह टेक इस बात की ओर गहराई से संकेत करता है कि भूखे रहने की यह घटना किसी एक दिन या दो दिन के लिए नहीं घटती बल्कि कई दिनों से कई परिवार अकाल की इस त्रासदी को भोग रहे हैं।

**विशेष** : इस कविता का सबसे बड़ा वैशिष्ट्य यह है कि इसमें अकाल के प्रभाव को मनुष्यों की जगह उनसे जुड़े पशु–पक्षियों के हालात के वर्णन के माध्यम से सांकेतिक रूप में किया गया है। जब घर के पशुओं की स्थिति इतनी खराब है तो उसके इंसानों की क्या हालत होगी। इसके साथ ही यह कविता मनुष्य और पशु के संवेदनशील रिश्ते की ओर भी संकेत करती है।

*दाने आए घर के अंदर कई दिनों के बाद*

*धुआं उठा आंगन से ऊपर कई दिनों के बाद*

*चमक उठी घर भर की आंखें कई दिनों के बाद*

*कौए ने खुजलाई पांखें कई दिनों के बाद।*

**संदर्भ** : उपरोक्त

**प्रसंग** : इन पंक्तियों में अकाल के बाद घर में अन्न के दानों के आने के बाद परिवार में फैली प्रसन्नता की भावना को प्रस्तुत किया गया है।

**व्याख्या** : अकाल के बाद की स्थिति लेखक ने इन पंक्तियों में बताई है। कई दिनों के बाद घर में अनाज के दाने आये हैं जिससे आशा का संचार सबके भीतर हुआ है। अनाज आ जाने के कारण घर के चूल्हे जल रहे हैं और उनसे निकलता धुआं आंगन में फैला हुआ है। इस धुएं को देखकर उस परिवार के सदस्यों और उन पर आश्रित जानवरों के भीतर आनन्द की लहर फैल जाती है। इस हिस्से की तीसरी पंक्ति में पहली बार कवि परिवार के सदस्यों का उल्लेख करता है। वह कहता है कि घर में अनाज के आगमन के बाद बहुत दिनों से परिवार के सदस्यों की बुझी हुई आंखें चमक उठीं। धुएं को देखकर घर की मुंडेर पर बैठे कौए ने प्रसन्नता में अपने पंख खुजलाए। उसे लगा कि अब उसे भी कुछ खाने को मिलेगा। अकाल के दौरान मनुष्यों के ऊपर क्या बीत रही उसका सीधा उल्लेख कवि ने नहीं किया जबकि अनाज के आने के बाद उनकी आंखों में आयी चमक का वर्णन किया है। इसके पीछे की मूल वजह यह है कि कोमल मन का कवि अकाल के दौरान मनुष्यों की भयावह स्थिति का प्रत्यक्ष वर्णन करने से खुद को बचाता है। अनाज आने के बाद परिवार में फैली प्रसन्नता का वर्णन इस प्रकार से किया है कि उसे पढ़ते हुए पाठकों के भीतर भी एक प्रकार के आनन्द का संचार हो जाता है।

**विशेष** : कविता के पहले हिस्से में 'कई दिनों तक' पदबंध पहले आता है, जबकि अंतिम हिस्से में 'कई दिनों के बाद'। यह संयोजन कविता के अर्थ को व्यापक बनाता है। आरंभ में जहां यह पदबंध अकाल की त्रासदी को गहराता है वहीं अंतिम हिस्से में लंबी यातना के बाद मिली प्रसन्नता के मनोभाव को स्पष्टता के साथ पाठकों के समक्ष प्रस्तुत करता है।

## 3.2.2 जनकवि नागार्जुन की जनपक्षधरता

नागार्जुन हिन्दी के प्रगतिशील कवियों में से एक हैं। इनका वास्तविक नाम वैद्यनाथ मिश्र है। प्रारम्भ में मातृभाषा मैथिली में 'यात्री' नाम से साहित्य लेखन करते रहे। बाद में बौद्ध धर्म स्वीकार कर लेने के उपरान्त 'नागार्जुन' नाम से साहित्य साधना करने लगे। नागार्जुन के समग्र व्यक्तित्व पर निराला और राहुल सांकृत्यायन दोनों का स्पष्ट प्रभाव है। साम्यवादी विचारधारा के प्रति आस्था के फलस्वरूप उन्होंने कविता में कल्पना–तत्त्व को त्यागकर पीड़ित और वंचित तबके की मूक आवाज को अपने काव्य में वाणी प्रदान की है। नागार्जुन का काव्य शोषितों के प्रति सहानुभूति और शोषण के विरुद्ध आक्रोश के साथ–साथ किसान जीवन की त्रासदी और अभाव में जीने वाले लाखों–करोड़ों लोगों की आशा–आकांक्षा एवं उनकी जिजीविषा का साहित्यिक अभियान है। अपनी इसी विशिष्टता के कारण वे जनता

के कवि कहे जाते हैं। नागार्जुन की जन–पक्षधरता को निम्नलिखित शीर्षकों के माध्यम से समझा जा सकता है–

**किसान जीवन के प्रति लगाव** : नागार्जुन ग्रामीण जीवन का, किसान के खेत–खलिहान का, उनके श्रम और श्रम से उपजे अन्न का सम्मान करते हैं। नागार्जुन के लिए सुन्दर मनुष्य का श्रम है, सत्य खेत–खलिहान से उपजा अन्न है और शिव है किसान। किसान संस्कृति और जीवन के प्रति अपने लगाव के कारण ही उन्हें गांव में परिश्रम करती हुई महिलाओं द्वारा गाये गीत कोयल की तान के जैसे लग रहे हैं–

*बहुत दिनों के बाद*

*अबकी मैंने जी भर सुन पाया*

*धान कूटती किशोरियों की कोकिलकंठी तान*

*–बहुत दिनों के बाद*

**दीन–दलित के प्रति सहानूभुति** : कवि समाज में हो रहे शोषण के विरोध को अपना अभीष्ट समझता है। शोषण का हरदम जिक्र करना कवि का उद्देश्य नहीं है। उनके लिए शोषण का दंश झेल रहे लोग पराये नहीं हैं। इसलिए वे जीवन के हर सुख–दुख में उनके साथ हैं। नागार्जुन स्वयं भी उसी ग्रामीण परिवेश में पले–बढ़े हैं। उनकी चेतना–संवेदना के निर्माण में उस परिवेश का ही योगदान है। उन्होंने दीन–दलित के जीवन को नजदीक से देखा है, भोगा है। इसलिए उनकी कविता में गरीबों, वंचितों और दलितों के प्रति प्रामाणिक सहानुभूति उपलब्ध है–

*तुच्छ से अतितुच्छ जन की जीवनी पर हम लिखा करते*

*कहानी, काव्य, रूपक, गीत*

*क्योंकि हमको स्वयं भी तुच्छता का भेद है मालूम।*

**समतामूलक समाज की कल्पना** : नागार्जुन देश में एक ऐसे समतामूलक समाज की स्थापना करना चाहते थे, जिसमें धर्म, जाति, भाषा, ऊंच–नीच और अमीर–गरीब का भेद न हो। वे एक ऐसे समाज की स्थापना चाहते हैं जिसमें प्रत्येक व्यक्ति को अपना श्रेष्ठतम विकास करने का आश्वासन मिलना चाहिए। इसके लिए कुलीनता की खाल ओढ़े संभ्रांत जनों की मानसिकता पर प्रहार करने से भी वे नहीं चूकते–

*सटता है बदन से बदन*

*पसीने से लथपथ।*

*छूती है निगाहों को*

*कत्थई दांतों की मोटी मुस्कान*

*बेतरतीब मूंछों की थिरकन*

*सच–सच बतलाओ*

*घिन तो नहीं आती है?*

*जी तो नहीं कुढ़ता है?*

**युगीन यथार्थ का चित्रण** : नागार्जुन के काव्य में युगीन यथार्थ का प्रामाणिक चित्रण देखने को मिलता है। झूठ, चापलूसी और छल, जातिवाद, पूंजीवाद को आज का युग धर्म बनाने वाली शक्तियों की वे कठोर शब्दों में निन्दा करते हैं। अपनी इन्हीं विशेषताओं के कारण नागार्जुन हिन्दी के यथार्थवादी कवियों में प्रमुख है। नागार्जुन युगीन यथार्थ के चित्रण में राजनीतिक विडंबनाओं को भी पूरी विश्वसनीयता के साथ दर्ज करते हैं–

*सेठों का हित साध रहे हैं तीनों बंदर बापू के*
*युग पर प्रवचन लाद रहे हैं तीनों बंदर बापू के*
*सत्य अहिंसा फांक रहे हैं तीनों बंदर बापू के*
*पूंछों से छवि आंक रहे हैं तीनों बंदर बापू के*

**समसामयिक चेतना की प्रधानता** : नागार्जुन के काव्य में समसामयिकता का यथार्थ चित्रण देखने को मिलता है। नागार्जुन की मान्यता है कि जब चारों ओर शोषण और वर्चस्व की प्रधानता हो, राजनीतिक अकर्मण्यता हो, महंगाई, बेरोजगारी और भुखमरी से जनता त्रस्त होने के कारण अपना उचित–अनुचित विवेक भुला बैठी हो तब ऐसे कठिन समय में विरोध ही एकमात्र हथियार है–

*कलम से काम लो गदा का, तमंचा का*
*ढीला न पड़े डोर प्रत्यंचा का*
*जहरीले सांपों पर दया नहीं करना*
*दुष्टों पर हमदर्दी के उसांस नहीं भरना*
*कटखने कुत्तों पर रहमदिल न होना*
*भलमनसाहत में जान से हाथ मत धोना*

**लोक–जीवन की आशा और आंकाक्षा की पहचान** : नागार्जुन की रचनाओं में लोक जीवन कई रूपों में चित्रित हुआ है। नागार्जुन लोक–जीवन के राग–विराग, जय–पराजय, अवसाद, हताशा को तो अपनी कविता में दर्ज करते ही हैं साथ ही उनमें लोक–जीवन की आशा–आकांक्षा की पहचान का सामर्थ्य है। वे भ्रष्टाचार, शोषण और आर्थिक विषमता को बढ़ाने वाली राजनीति के अलावा बेरोजगारी, भूख और अकाल से जूझ रहे लोक मानस की आशा–आकांक्षा को भी कविता में प्रतिफलित करते हैं–

*दाने आए घर के अंदर कई दिनों के बाद*
*धुआं उठा आंगन से ऊपर कई दिनों के बाद*
*चमक उठी घर भर की आंखें कई दिनों के बाद*
*कौए ने खुजलाई पांखें कई दिनों के बाद।*

नागार्जुन की कविता में उपस्थित जनपक्षधरता के माध्यम से यह कहा जा सकता है कि वे वास्तविक अर्थों में जनता के कवि हैं। वे उस लोक के कवि हैं, जो लोकतंत्र में भी सदा से उपेक्षित है। प्रख्यात आलोचक नामवर सिंह ने नागार्जुन को स्वाधीन भारत के प्रतिनिधि जन–कवि मानते हुए कहा है कि "उनकी कविता का संसार वस्तुतः वह लोक

सामान्य जीवन ही है, जिसे अति सामान्य समझकर अन्य कवि आंखें मूंद लेते हैं।' नागार्जुन जनता के सुख–दुख, भूख, अकाल, महामारी, सूखा, बाढ़, दुधिया वात्सल्य, किसान–मजदूर के जीवन और ग्रामीण प्राकृतिक परिवेश को उसके मूल में जाकर समझते–देखते हैं। वे अपनी कविता का कथ्य, भाषा और शैली वहीं से उठाते हैं। इसलिए उनकी कविता स्वाभाविक और विश्वसनीय लगती है, और यही उनकी लोकप्रियता का कारण भी है।

## 3.2.3 काव्यगत चेतना

नागार्जुन की कविता के बारे में डॉ. रामविलास शर्मा ने लिखा है: "जहां मौत नहीं है, बुढ़ापा नहीं है, जनता के असंतोष और राज्यसभाई जीवन का सन्तुलन नहीं है वह कविता है नागार्जुन की।' यह सत्य है कि नागार्जुन ने अपनी कविता के माध्यम से एक अलक्षित जीवन और जगत के विस्तार को सम्भव किया है। नागार्जुन की कविता का दायरा व्यापक है। उनकी कविता एक साथ कई मोर्चों पर खड़ी और लड़ती है। स्वयं नागार्जुन के व्यक्तित्व के कई पहलू हैं और उनकी चेतना के कई छोर हैं। नागार्जुन कभी प्रखर राजनीतिक चेतना से युक्त लगते हैं तो कभी लोक–जीवन सा निर्दोष, तो कभी ईश्वरीय सत्ता को चुनौती देते नास्तिक लगते हैं तो कभी मनुष्यता की संभावनाओं पर भरोसा रखने वाले आस्तिक लगते हैं। तो कभी ईश्वर की सत्ता के प्रति आस्थावान होकर प्रकृति और जीवन के सौन्दर्य में रमते दिखाई देते हैं। इन सबके साथ वे कभी भी जीवन के यथार्थ की उपेक्षा नहीं करते हैं। जो जैसा है उसे उसी रूप में और उसी भाषा और शैली में अपनी कविता में चित्रित करते हैं।

नागार्जुन के काव्य की विशेषताओं को अधोलिखित शीर्षकों के माध्यम से समझा जा सकता है–

**गहरी राजनीतिक चेतना की उपस्थिति** : नागार्जुन गहरे अर्थों में राजनीतिक चेतना के कवि हैं। उनकी कविताओं में राजनीति का वास्तविक एवं ठोस चेहरा दर्ज है। वे अपने कवि होने की पहचान को सत्ता के प्रतिपक्ष रूप में प्रस्तुत करते हैं। उन्होंने कभी भी सत्ता के साथ जाना स्वीकार नहीं किया। ऐसा करते हुए वे न सिर्फ अपनी कविता का पक्ष रख रहे थे बल्कि साहित्य मात्र के स्वभाव का निर्माण कर रहे थे। जिस अर्थ में 1936 में प्रेमचन्द ने साहित्य को राजनीति के आगे मशाल लेकर चलने वाली चीज बताया था, उन्हीं अर्थों को नागार्जुन अपनी कविता में समकालीन संदर्भ दे रहे थे। वे सचेत थे, साहसी थे, इसलिए राजनीति के छल–प्रपंच को, नीति–अनीति को अपनी कविता में बेनकाब कर पा रहे थे।

*इंदुजी, इंदुजी क्या हुआ आपको?*
*सत्ता के मद में भूल गईं बाप को?*
*छात्रों के खून का चस्का लगा बचपन में*
*लगता है मां का दूध नहीं मिला बचपन में*

**निम्न–मध्यवर्गीय परिवार का जीवनानुभव** : नागार्जुन की कविता समाज के बड़े और तथाकथित सभ्य लोगों की स्तुति का प्रतिकार करती है। वे अपनी कविता में निम्न एवं मध्यमवर्गीय परिवारों के आशा–आकांक्षा का सौन्दर्य, श्रम के बीच पनपने–पलने वाले प्रेम, जीवन–संघर्ष, आपसी रिश्तों की गर्माहट की सुखद स्मृति के अनेक चित्र खींचते हैं–

*हां भाई, मैं भी पिता हूं*
*वो तो बस यूं ही पूछ लिया आपसे*
*वर्ना ये किसको नहीं भाएंगी?*
*नन्ही कलाइयों की गुलाबी चूड़ियां!*

**साहित्य में यथार्थ की प्रतिष्ठा** : नागार्जुन देश की राजनीति में बढ़ते भ्रष्टाचार, शोषण, सामाजिक एवं आर्थिक संरचना में लगातार बढ़ती जा रही असमानता के चरित्र को पहचान रहे थे। वे जानते थे कि यदि समाज के विभिन्न वर्गों के बीच की यह खाई ऐसे ही बढ़ती गयी तो गरीब और वंचित तबकों में अपने कर्तव्य के प्रति भयानक उदासीनता छा जायेगी। जो एक लोक कल्याणकारी राष्ट्र की अवधारणा को धूमिल करेगी। यह उदासीनता कितनी मनुष्य विरोधी है, इसे समझने के लिए भारत की शिक्षा व्यवस्था पर लिखी नागार्जुन की इस कविता को देख सकते हैं–

*घुन–खाए शहतीरों पर की बारहखड़ी विधाता बांचे*
*कटी भीत है, छत चूती है, आले पर बिसतुइया नाचे*
*बरसाकर बेबस बच्चों पर मिनिट–मिनिट में पांच तमाचे*
*दुखरन मास्टर गढ़ते रहते किसी तरह आदम के सांचे*

**प्रकृति प्रेम** : नागार्जुन सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक क्षेत्र में यथार्थवादी दृष्टिकोण के सदैव पक्षधर रहे हैं। उनकी कविता की एक बड़ी विशेषता यह है कि वे प्रकृति का भी नग्न यथार्थ चित्रण करते हैं। प्रकृति को उन्होंने जैसा देखा और जिस रूप में उसे भोगा उसी रूप में वर्णन करने से उन्हें कोई परहेज नहीं है। कल्पना के लिए कविता में कोई अवकाश नहीं है। इसलिए काव्य में कल्पना–तत्व को प्रतिष्ठा दिलाने वाले महाकवि कालिदास की रचना 'मेघदूत' को चुनौती देते हुए वे कहते हैं कि–

*जाने दो वह कवि कल्पित था, मैंने तो भीषण जाड़ों में*
*नभ–चुंबी कैलाश शीर्ष पर, महामेघ को झंझानिल से*
*गरज–गरज भिड़ते देखा है, बादल को घिरते देखा है।*

**सहज भाषा शैली** : नागार्जुन काव्य की भाषा और शैली सहज, सुबोध और प्रवाहपूर्ण है। संवादधर्मिता उनकी काव्य–भाषा का विशिष्ट गुण है। जो उन्हें उनके ग्रामीण परिवेश और लोक से मिला है। वे कविता और जनता के रिश्ते को समझ गये थे। अपने लेखन के आरंभिक दिनों में उन्होंने मैथिली भाषा में और लोकप्रिय शैली में आठ–आठ पृष्ठों की 'किताबिया' लिखीं, प्रकाशित करायीं और खुद ही ट्रेनों, बसों में बेचा। जनता क्या चाहती है, यह ठीक तरह से नागार्जुन ने पहचान लिया था। संस्कृत, पालि और मैथिली के विद्वान होने के बाद भी उनकी कविता में आंचलिक भाषा के शब्द, वाक्य, मुहावरे, लोकोक्तियां पूरी गरिमा के साथ आये हैं। जिनसे उनकी कविता की सम्प्रेषणीयता बढ़ी।

*सुबह सुबह*
*आंचलिक बोलियों का मिक्सचर*
*कानों की इन कटोरियों में भरकर लौटा।*

नागार्जुन ने छंदयुक्त और गीत के साथ मुक्तछंद और गद्यपरक कविताएं भी लिखी हैं। सहज संवाद उनकी कविता की विशेषता है। नागार्जुन की कविताओं में प्रयुक्त सरल शब्दों एवं सहज शैली की प्रशंसा करते हुए आलोचक नामवर सिंह ने कहा है कि– 'तुलसीदास के बाद नागार्जुन अकेले ऐसे कवि हैं जिनकी कविता की पहुंच किसानों की चौपालों से लेकर काव्यरसिकों की गोष्ठी तक है।" नागार्जुन ने काव्य में अब तक के अछूते प्रसंग जैसे– 'मादा सूअर', 'कटहल', 'खुरदुरे पैर' और 'कर दो वमन' इत्यादि पर देहाती, अश्लील और भदेस कहे जाने का खतरा उठाकर भी लिखने का साहस किया है।

## 3.3 अज्ञेय : सामान्य परिचय

अज्ञेय हिन्दी के प्रमुख कवि–लेखक हैं। अज्ञेय का पूरा नाम सच्चिदानन्द हीरानन्द वात्स्यायन है। इनके पिता का नाम पं. हीरानन्द शास्त्री एवं माता का नाम व्यन्ती देवी है। अज्ञेय के पिता पं. हीरानन्द शास्त्री पुरातत्व विद् थे। प्राचीन स्थलों के उत्खनन और पहचान के सिलसिले में पं. हीरानन्द शास्त्री का देश के कई हिस्सों में आना–जाना लगा रहता था। 7 मार्च, 1911 को उत्तर प्रदेश के तत्कालीन देवरिया जिला (अब कुशीनगर जिला) के कसया नामक नगर के एक पुरातत्व–उत्खनन शिविर में अज्ञेय का जन्म हुआ। पिता के स्थानान्तरण के कारण अज्ञेय अपने जीवन के आरम्भिक वर्षों में भिन्न–भिन्न स्थानों पर रहे। 1925 में अज्ञेय ने पंजाब से प्राइवेट हाईस्कूल परीक्षा उत्तीर्ण की। उसी समय वे राखालदास बनर्जी और काशीप्रसाद जायसवाल जैसे विद्वानों के सम्पर्क में आये तथा राखालदास बनर्जी के ही प्रभाव में बंगला भाषा का ज्ञान प्राप्त किया। लाहौर से प्रथम श्रेणी में बी.एससी. करने के बाद हिन्दुस्तान रिपब्लिकन आर्मी और चन्द्रशेखर आजाद, सुखदेव और भगवती चरण वोहरा के सम्पर्क में आये और यहीं से अज्ञेय के क्रान्तिकारी जीवन की शुरुआत हुई।

अज्ञेय का जीवन बहुत अधिक उतार–चढ़ाव वाला था। हिन्दुस्तान रिपब्लिकन आर्मी के साथ वे तन–मन से जुड़ गये थे। क्रान्तिकारी गतिविधियों में सम्मिलित होने के कारण उन पर अंग्रेज सरकार की नजर थी। परिणामस्वरूप 15 नवम्बर, 1930 को गिरफ्तार कर लिए गए। 1934 तक जेल में रहे। इस बीच माता और छोटे भाई की मृत्यु हो गई। अज्ञेय परिस्थितियों से हार मानने वाले नहीं थे। जेल से रिहा होने के बाद वे किसान आन्दोलन में सक्रिय हुए। अपने समय की चर्चित पत्रिका 'विशाल भारत' में कुछ दिनों तक काम किया। अज्ञेय अन्तर्राष्ट्रीय फासीवाद के विरुद्ध संघर्ष के लिए अपने समानधर्मी लोगों के साथ लगे रहे। सेना की नौकरी पर गये। किन्तु 1946 में सेना की नौकरी से त्यागपत्र दे दिया। इसी वर्ष पिता की मृत्यु हो गयी।

जीवन के इन तमाम संघर्षों के बीच अज्ञेय साहित्यिक मोर्चे पर भी उल्लेखनीय कार्य करते रहे। 1943 में 'तार सप्तक' का संपादन कर साहित्य की दुनिया में तहलका मचा दिया। 'तार सप्तक' सात कवियों की चुनी हुई कविताओं का संकलन था। 'तार सप्तक' से ही 'प्रयोगवाद' का आरम्भ माना जाता है। 'तार सप्तक' की अपार लोकप्रियता और महत्व के बाद अज्ञेय ने दूसरा सप्तक, तीसरा सप्तक और चौथे सप्तक का संपादन किया। ये चारों सप्तक हिन्दी कविता के क्षेत्र में अपना एक विशिष्ट महत्व रखते हैं।

अज्ञेय अपने जीवन में कई महत्वपूर्ण साहित्यिक पत्रिकाओं, साहित्यिक संगठनों, आयोजनों के सूत्रधार रहे हैं। हिन्दी के साथ ही बांग्ला, अंग्रेजी व दूसरी अन्य भाषाओं के जानकार होने के कारण उनका प्रभाव सम्पूर्ण भारतीय साहित्य पर पड रहा था। साहित्य और संस्कृतिकर्मी के रूप में अज्ञेय ने यूरोप और एशिया के अनेक देशों का भ्रमण किया। वे एक ऐसे रचनाकार रहे हैं, जिनका अपने समकालीनों एवं बाद के रचनाकारों पर सर्वाधिक प्रभाव पड़ा।

उन्होंने बड़े पैमाने पर साहित्य की कई विधाओं में श्रेष्ठ लेखन कार्य किया। इसके लिए उन्हें कई विशिष्ट सम्मान–पुरस्कार मिले। 'आंगन के पार द्वार' काव्य–संग्रह पर साहित्य अकादमी पुरस्कार, 'कितनी नावों में कितनी बार' कविता–संग्रह के लिए भारतीय ज्ञानपीठ पुरस्कार के साथ ही उन्हें अनेक पुरस्कार प्राप्त हुए।

अज्ञेय जीवन और लेखन दोनों स्तरों पर अपने जीवन–काल में ही अत्यधिक चर्चित और लोकप्रिय हो गये थे। वे हिन्दी के एक ऐसे रचनाकार थे, जिन्हें कविता और गद्य दोनों में समान रूप से श्रेष्ठ लेखन कार्य किया और स्वीकृत हुए।

साहित्य, विचार और संस्कृति के इस अद्वितीय अध्येता की मृत्यु 4 अप्रैल, 1987 को दिल्ली में हुई।

## अज्ञेय की रचनाएं

### काव्य संग्रह

- भग्नदूत – 1933
- चिन्ता – 1942
- इत्यलम् – 1946
- हरी घास पर क्षण भर – 1946
- बावरा अहेरी – 1954
- इन्द्रधन रौदे हुए ये – 1957
- अरी ओ करुण प्रभामय – 1959
- आंगन के पार द्वार – 1961
- कितनी नावों में कितनी बार – 1967
- सागरमुद्रा – 1970
- क्योंकि मैं उसे जानता हूं – 1970
- पहले मैं सन्नाटा बुनता हूं – 1974
- महावृक्ष के नीचे – 1977
- नदी के बांक पर छाया – 1981
- ऐसा कोई घर आपने देखा है – 1986
- मरुथल – 1985
- प्रिजन डेज एण्ड अदर पोयम्स (अंग्रेजी कविताएं, 1946)

**उपन्यास**

- शेखर : एक जीवनी, प्रथम भाग (1941)
- शेखर : एक जीवनी, द्वितीय भाग (1944)
- नदी के द्वीप (1951)
- अपने अपने अजनबी (1961)
- बीनू भगत–छायामेखल (दो अपूर्ण उपन्यास 2000 ई.)

**कहानी संग्रह**

- विपथगा – 1937
- परम्परा – 1944
- कोठरी की बात – 1945
- शरणार्थी – 1948
- जयदोल – 1951
- अमखल्लरी – 1954
- ये मेरे प्रतिरूप – 1961

**यात्रावृत्त**

- अरे यायावर रहेगा याद – 1953
- एक बूंद सहसा उछली – 1960

**निबन्ध**

- त्रिशंकु – 1945
- आत्मनेपद – 1960
- हिन्दी साहित्य : एक आधुनिक परिदृश्य – 1967
- आलवाल – 1971
- लिखि कागद कोरे – 1972
- जोग लिखी – 1972
- अद्यतन – 1977
- संवत्सर – 1978
- स्रोत और सेज – 1978
- युगसन्धियों पर – 1981
- धार और किनारे – 1982
- स्मृतिच्छन्दा – 1989

गीति नाट्य

- उत्तर प्रियदर्शी – 1967

संस्मरण

- स्मृतिलेखा – 1982
- स्मृति के गलियारों से – 2000 ई.

डायरी

- भवन्ती – 1972
- अन्तरा – 1975
- शाश्वती – 1979
- शेषा – 1995

## 3.3.1 अज्ञेय : पाठ्यांश – सांप, बावरा अहेरी, जनवरी छब्बीस

### 1. सांप

*सांप!*

*तुम सभ्य तो हुए नहीं*

*नगर में बसना*

*भी तुम्हें नहीं आया।*

*एक बात पूछूं—(उत्तर दोगे?)*

*तब कैसे सीखा डंसना–*

*विष कहां पाया?*

**संदर्भ :** उपर्युक्त पंक्तियां प्रयोगवाद के पुरस्कर्ता कवि अज्ञेय की प्रसिद्ध रचना 'सांप' की हैं। इस कविता में कवि ने आधुनिकता की वजह से शहरी जीवन में फैल रही अमानवीयता की आलोचना की है।

**प्रसंग :** इन पंक्तियों में कवि सांप से संवाद करते हुए उसके भीतर विष की उपस्थिति की वजह पूछ रहा है। कवि को लगता है संसार की तमाम विषाक्तता आधुनिकता से जन्मे शहरों के भीतर बसने वाले लोगों के भीतर विद्यमान है, फिर यह प्रवृति सांप के भीतर कैसे आ गई है। कवि को लगता है कि अवश्य इस सर्प ने भी इस विष को शहरी लोगों से लिया है। दरअसल अज्ञेय सांप के माध्यम से शहरी लोगों की सर्पिली मानसिकता की आलोचना कर रहे हैं।

**व्याख्या :** प्रस्तुत कविता में कवि सांप के माध्यम से आधुनिक समय पर व्यंग्य कर रहा है। वह साप से प्रश्न कर रहा है कि तुम सभ्यता को नहीं जानते, और ना ही शहर के वातावरण से तुम्हारा वास्ता रहा अर्थात शहर में तुमने समय नही गुजारा। कवि सर्प से प्रश्न करता है कि जब तुम शहर के बीच नही रहे तो तुमने डंसना कैसे सीखा और जहर कहा से पाया

है। कवि का आशय यह है कि आधुनिकता की वजह से निर्मित होने वाले नगरों के मनुष्य स्वार्थों के पीछे इतने अंधे हो गए हैं कि सर्प से भी ज्यादा खतरनाक हो गए है। आधुनिकीकरण ने मनुष्य की संवेदना को नष्ट कर दिया है। मनुष्य ही मनुष्य के विरोध में खड़ा हुआ है।

लोक में सांप अमानवीयता का प्रतीक है। उसके विषय में धारणा है कि आप उसे जितना भी दूध पिलाएं वह डंसने की प्रवृति नहीं त्यागेगा। सर्प के विषय में प्रचलित इस आम धारणा का उपयोग करते हुए इस कविता में अज्ञेय ने व्यंग्यात्मक लहजे में नगरीय जीवन पर करारा प्रहार किया है। अज्ञेय के लिए नगर का जीवन और नगर के लोग सांप से भी ज्यादा अविश्वसनीय और खतरनाक हैं। सांप के भीतर विषाक्तता नगर की देन है।

## 2. बावरा अहेरी

*भोर का बावरा अहेरी*
*पहले बिछाता है आलोक की*
*लाल–लाल कनियां*
*पर जब खींचता है जाल को*
*बांध लेता है सभी को साथ–*
*छोटी–छोटी चिड़ियां*
*मंझोले परेवे*
*बड़े–बड़े पंखी*
*डैनों वाले डील वाले*
*डौल के बेडौल*
*उड़ने जहाज*

**शब्दार्थ** : बावरा– बावला, अहेरी– शिकारी, आलोक– प्रकाश, कनियां– कण, मंझोले– मझला, परेवे– कबूतर।

**संदर्भ** : प्रस्तुत पंक्तियां 'प्रयोगवाद' और 'नयी कविता' के प्रसिद्ध कवि सच्चिदानन्द हीरानन्द वात्स्यायन अज्ञेय की हैं। यह सन् 1954 में प्रकाशित काव्य–संग्रह 'बावरा अहेरी' की केंद्रीय कविता है। इस संग्रह में अज्ञेय की प्रकृतिपरक कविताओं का संकलन किया गया है। इस कविता में सूर्योदय के प्रभाव का वर्णन है। कवि ने सूर्य को 'बावरा अहेरी' अर्थात बावला शिकारी कहा है। हिंदी कविता में सूर्योदय और सूर्यास्त को चित्रित करने की लम्बी परंपरा रही है। अज्ञेय के यहां प्रकृति चैतन्य रूप में चित्रित है। गोचर में अगोचर को देख लेने का भाव भी है। प्रस्तुत कविता में सूर्य का मानवीकरण करते हुए कवि ने उसे एक ऐसे बावले शिकारी के रूप में प्रस्तुत किया है जो अपने जाल में संसार के सुंदर–असुंदर सभी वस्तुओं को समेट लेता है। उसके प्रभाव से कोई नहीं बच पाता। अज्ञेय अपनी कविताओं में प्रकृति के साथ एक रागात्मक रिश्ता विकसित करते हैं। वे प्रकृति का जड़ नहीं बल्कि गतिशील चित्रण करने में विश्वास करते हैं।

**प्रसंग** : इन पंक्तियों में भोर के सूर्य की पहली किरण के संसार पर पड़ने वाले प्रभाव का गतिशील चित्रण किया गया है। यहां सूर्य को एक ऐसे बावले शिकारी के रूप में वर्णित किया गया है जो अपने जाल में केवल उपयोगी वस्तुओं को ही नहीं फांसता बल्कि अनुपयोगी वस्तुओं को भी घेर लेता है। यह बावला इसीलिए है कि इसे सांसारिकता की समझ नहीं है। इसके लिए सब बराबर है। 'प्रकृति किसी के साथ भेदभाव नहीं करती' इस भाव का ही प्रस्तुत कविता में विस्तार किया गया है।

**व्याख्या** : कवि कह रहा है कि भोर के सूर्य के प्रकाश की लाल किरणें इस तरह फैलती है मानो कोई शिकारी पक्षियों को जाल में फांसने के लिए धीरे–धीरे अनाज के दाने बिखेर रहा हो। भोर के सूर्य की इन किरणों की ओर अनायास ही समस्त संसार आकर्षित होने लगता है। सबसे पहले इसकी ओर चिड़ियां आकर्षित होती हैं। सुबह–सबेरे सबसे पहले चिड़ियों के जागने की आवाज आती है इसलिए कवि को लगता है कि सूर्य रूपी बावले शिकारी के जाल में सबसे पहले वही फंसी। वह कहता है कि सूर्य रूपी बावला शिकारी जब अपने जाल को खींचता है तो छोटी–छोटी चिड़ियों, मंझोले परेवे से लेकर बड़े–बड़े पंखों वाले विशाल जहाज की तरह दिखने वाले पक्षियों तक को अपने जाल में फांस लेता है। तात्पर्य यह कि भोर के सूर्य के आकर्षण में प्रकृति के छोटे से लेकर बड़े तक सभी प्राणी बंध जाते हैं। कोई भी उसके आकर्षण से बच नहीं पाता।

*कलस–तिसूल वाले मंदिर–शिखर से ले*
*तारघर की नाटी मोटी चिपटी गोल घुस्सों वाली*
*उपयोग–सुंदरी*
*बेपनाह कायों को–*
*गोधूली की धूल को, मोटरों के धुंए को भी*
*पार्क के किनारे पुष्पिताग्र कर्णिकार की आलोक–खची तन्वि*
*रूप–रेखा को*
*और दूर कचरा जलाने वाली कल की उद्दण्ड चिमनियों को, जो*
*धुआं यों उगलती हैं मानो उसी मात्र से अहेरी को*
*हरा देंगी!*

**शब्दार्थ** : कलस– घड़ा, तिसूल– त्रिशूल, बेपनाह– असीम, काया– शरीर, गोधूली– शाम, कर्णिकार– कनियार या अमलतास का फूल, तन्वि– सुकुमार या कोमलांगी स्त्री।

**संदर्भ** : उपरोक्त

**प्रसंग** : इन पंक्तियों में भोर के सूर्य की किरण के प्रभाव के विस्तार को दर्शाते हुए कवि प्रदूषण से तबाह हो रही प्रकृति की ओर पाठकों का ध्यान आकर्षित करना चाहता है।

**व्याख्या** : बावले सूर्य का प्रभाव संसार की अच्छी–बुरी सभी वस्तुओं पर पड़ता है। उसके सौंदर्य और उपस्थिति से आकर्षित होने से कोई भी अपने आपको रोक नहीं पाता है। कलश और त्रिशूल वाले मंदिर के शिखर से लेकर तारघर की नाटी, मोटी, चिपटी और गोल घुस्सों

वाली उपयोग–सुंदरी अर्थात वेश्याओं तक को सूर्य अपने जाल में फांसता है। मंदिर और वेश्या को एक साथ रखकर यहां कवि यह संकेत देना चाहता है कि समाज में खड़े किए गए अंतर प्रकृति या ईश्वर के द्वारा निर्मित नहीं हैं, बल्कि मानव निर्मित हैं। प्रकृति की नजरों में सभी समान है। सूर्य इसलिए भी बावरा अहेरी है क्योंकि वह पार्क के किनारे खड़े अमलतास के सुंदर फूल के साथ–साथ उन लोगों को भी अपने सम्मोहन के जाल में फांसता है जो उसके अस्तित्व को ही मिटा देना चाहते हैं। शाम की धूल, मोटर के धुएं और कचरा जलाने वाली उन उद्दंड चिमनियों को भी बावरा अहेरी अपने जाल में फांसता है, जो धुआं इस तरह उगलती हैं जैसे सूर्य की किरणों को ही पृथ्वी पर आने से रोक देंगी। यहां चिमनियों को 'उद्दंड' कहकर कवि आधुनिकता के आवेग में प्रकृति के साथ मनमाना व्यवहार करने वाले लोगों को उद्दंड कह रहा है। 'कल की उद्दंड चिमनियां' पद से यह ध्वनि निकल रही है कि कल के ये छोकरे युगों से दुनिया को रौशन कर रहे सूर्य को क्या चुनौती देंगे! इसमें कवि प्रकृति की अपराजेयता का बखान कर अपने दिल को संतोष दे रहा है पर कहीं–न–कहीं पर्यावरण के संकट से आशंकित भी है।

*बावरे अहेरी रे*
*कुछ भी अवध्य नहीं तुझे, सब आखेट है:*
*एक बस मेरे मन–विवर में दुबकी कलौंस को*
*दुबकी ही छोड़ कर क्या तू चला जाएगा?*
*लो, मैं खोल देता हूं कपाट सारे*
*मेरे इस खण्डहर की शिरा–शिरा छेड़ दे*
*आलोक की अनी से अपनी,*
*गढ़ सारा ढाहकर ढूह कर दे:*
*विफल दिनों की तू कलौंस पर मांज जा*
*मेरी आंखें आंज जा।*
*कि तुझे देखूं*
*देखूं और मन में कृतज्ञता उमड़ आये*
*पहनूं सिरोपे–से ये कनक–तार तेरे–*
*बावरे अहेरी*

**शब्दार्थ** : अवध्य– जिसको मारा न जा सके, आखेट– शिकार, मन– विवर, दुबकी– छुपी हुई, कलौंस– कालिमा, कपाट– दरवाजा, शिरा– किनारा, आलोक– प्रकाश, अनी– नोक, ढाहकर– गिराना, ढूह– मिट्टी का टीला, मांजना– धो–पोंछकर साफ करना, आंज– आंख में काजल लगाना, सिरोपे– सिर से पांव तक, कनक– सोना।

**संदर्भ** : उपरोक्त

**प्रसंग** : इन पंक्तियों में कवि अपने उदास मन के भीतर नवीन ऊर्जा और उत्साह के संचार के लिए सूर्य से आग्रह कर रहा है। प्रकृति से अलग होकर कवि अहम के किले के भीतर

कैद हो गया है। वह सूर्य से अहम के इस गढ़ को गिराकर उसे आजाद करने और अपने आप से मिला लेने का निवेदन करता है। कवि सूर्य की पहली किरण से अपने जीवन के जगमगा देने की कामना करता है।

**व्याख्या** : कवि इन पंक्तियों में सूर्य से यह प्रार्थना कर रहा है कि इस जगत में कोई भी ऐसी चीज नहीं है जिसका तुमने शिकार न किया हो। तुम्हारे प्रभाव से कोई बच नहीं पाया है। सबको अपनी आगोश में भरकर उसके भीतर नवीन ऊर्जा का संचार किया है। तुम्हारे लिए तो यह सब महज एक आखेट अर्थात शिकार का खेल है। तब क्या मेरे मन के भीतर दुबके हुए एक विचार को बिना छुए हुए ही चले जाओगे? मैं चाहता हूं कि खण्डहर की तरह उदास और उपेक्षित हो चुके मेरे मन को तुम अपने प्रकाश से आलोकित कर दो। मेरे मन के एक–एक हिस्से को तरंगित कर दो। मेरा मन जो बाह्य दुनिया से दूर होकर एक खंडहर में परिवर्तित हो गया है, आज मैं उसके दरवाजे तुम्हारे लिए खोल रहा हूं ताकि तुम उसमें आनंद की तरंगों का संचार कर दो, और अपने प्रकाश की किरणों से इस खण्डहर के सारे गढ़ों को गिराकर समाप्त कर दो। यहां कवि अपने आत्म का विलयन कर बाह्य प्रकृति या सर्वात्म से मिल जाने की कामना कर रहा है। कवि अपनी चेतना का विस्तार करने की कामना कर रहा है। सूर्य की पहली किरण में एक ऐसी ऊर्जा और उत्साह होता है जो किसी भी उदास, उपेक्षित और पराजित मन के भीतर उम्मीद की एक नयी किरण जगा देता है। कवि सूर्य से कामना कर रहा है कि मेरे मन के भीतर विफल दिनों की जो काली स्मृतियां छायी हुई हैं तुम अपने प्रकाश की किरणों से उसे मांज कर साफ कर दो और मेरी आंखों में नवीन रौशनी भर दो। तात्पर्य यह कि तुम मेरे भीतर जीवन की नवीन ऊर्जा भर दो। तुम्हारे इस अहसान के बदले मैं जब–जब तुम्हें देखूंगा कृतज्ञता के भाव से भर जाऊंगा और उस भाव में भरकर तुम्हारे सोने की तरह की किरणों को सिर से पांव तक पहनकर प्रसन्न होऊंगा। यहां कवि सूर्य के साथ अपने अस्तित्व के जुड़ाव की कामना कर रहा है।

## 3. जनवरी छब्बीस

*आज हम अपने युगों के स्वप्न को*
*यह नयी आलोक–मंजूषा समर्पित कर रहे हैं।*
*आज हम अक्लान्त, ध्रुव, अविराम गति से बढ़े चलने का*
*कठिन व्रत धर रहे हैं*
*आज हम समवाय के हित, स्वेच्छया*
*आत्म–अनुशासन नया यह वर रहे हैं।*
*निराशा की दीर्घ तमसा में सजग रह हम*
*हुताशन पालते थे साधना का–*
*आज हम अपने युगों के स्वप्न को*
*आलोक–मंजूषा समर्पित कर रहे हैं।*

**शब्दार्थ** : आलोक मंजूषा– प्रकाश की पिटारी, अक्लान्त– जो थका न हो, ध्रुव– अटल, समवाय– समूह, स्वेच्छया– अपनी इच्छा से, वर– स्वीकार करना, दीर्घ– बड़ा, तमसा– अंधकार, हुताशन– अग्नि।

**संदर्भ** : प्रस्तुत पंक्तियां हिंदी की प्रयोगवादी धारा के पुरस्कर्ता कवि सच्चिदानन्द हीरानन्द वात्स्यायन अज्ञेय की कविता 'जनवरी छब्बीस' से ली गई हैं। छब्बीस जनवरी सन उन्नीस सौ पचास को भारत का संविधान पारित हुआ था। इसी दिन को भारत एक पराधीन राष्ट्र से लोकतांत्रिक गणराज्य में परिवर्तित हो गया था। यह दिन भारतीय जनता के लम्बे संघर्षों के परिणामस्वरूप आया था। प्रस्तुत कविता में अज्ञेय इस दिन की महत्ता का वर्णन कर रहे हैं।

**प्रसंग** : इन पंक्तियों में कवि ने भारत को एक गणराज्य बनाने के लिए जनता द्वारा किए गए संघर्षों का वर्णन किया है, और लोकतंत्र में जनता के दायित्वों पर प्रकाश डाला है।

**व्याख्या** : कवि कविता की आरंभिक पंक्तियों में छब्बीस जनवरी की महत्ता को स्थापित करते हुए कहता है कि आज का दिन युगों के सपनों के सच होने का दिन है। भारत का संविधान इस प्राचीन राष्ट्र का केवल एक नवीन विधान नहीं है बल्कि यह भारतीय जन के जीवन को प्रकाशित करने वाला एक नया पिटारा है। यहां यह ध्यान देने योग्य है कि भारत की जनता के भीतर आजादी की कामना तो केवल दो सौ वर्ष पुरानी थी क्योंकि भारत अंग्रेजों का केवल दो सौ वर्ष तक ही गुलाम था, लेकिन भारतीय जनता में सामंती समाज से मुक्ति और अपनी सत्ता की स्थापना की कामना तो युगों से विद्यमान है। इसीलिए कवि ने गणतंत्रता दिवस को युगों का स्वप्न कहा है। 'भारतीय संविधान' को नयी आलोक मंजूषा कहने के पीछे की भावना यह है कि यह भारतीय जनता के भीतर जीवन और जगत को देखने की नवीन दृष्टि प्रदान करता है।

कवि कहता है आज के दिन भारतीय संविधान के लागू होने के साथ ही भारत की जनता ने प्रगति के पथ पर बगैर थके हुए, जनतंत्र के पथ पर अटल रहने और बिना आराम किए हुए चलने का कठिन व्रत धारण किया है। तात्पर्य यह कि भारतीय जनता जनतंत्र की रक्षा और विकास के लिए कटिबद्ध है। कवि आगे कहता है कि आज के दिन हम भारतीयों ने भारतीय जन के कल्याण के लिए अपनी इच्छा से आत्मानुशासन की राह का चयन किया है। जहां सामंतवादी व्यवस्था में जनता की इच्छा का कोई अर्थ नहीं होता, वहां राजा की इच्छा सर्वोपरि होती है, वहीं लोकतंत्र में सत्ता के शीर्ष पर बैठे व्यक्ति को भी जनभावनाओं का ध्यान रखना पड़ता है। लोकतंत्र में राजा के शासन का भय नहीं होता इसलिए जनता को स्वयं ही अनुशासन में रहना होता है।

*सुनो हे नागरिक! अभिनव सभ्य भारत के नये जनराज्य के*
*सुनो! यह मंजूषा तुम्हारी है।*
*पला है आलोक चिर-दिन यह तुम्हारे स्नेह से, तुम्हारे ही रक्त से।*
*तुम्हीं दाता हो, तुम्हीं होता, तुम्हीं यजमान हो।*
*यह तुम्हारा पर्व है।*
*भूमि-सुत! इस पुण्य-भू की प्रजा, स्रष्टा तुम्हीं हो इस नये रूपाकार के*
*तुम्हीं से उद्भूत हो कर बल तुम्हारा*

*साधना का तेज–तप की दीप्ति–तुम को नया गौरव दे रही है।*

*यह तुम्हारे कर्म का ही प्रस्फुटन है।*

*नागरिक, जय! प्रजा–जन, जय! राष्ट्र के सच्चे विधायक, जय!*

*हम आलोक–मंजूषा समर्पित कर रहे हैं, और मंजूषा तुम्हारी है*

*और यह आलोक तुम्हारे ही अडिग विश्वास का आलोक है।*

**शब्दार्थ** : अभिनव– बिल्कुल नया, जनराज्य– जनता का शासन, चिर– प्राचीन, दाता– दान करने वाला, होता– यज्ञ कराने वाला, पुरोहित– यज्ञ कराने वाला व्यक्ति, यजमान– यज्ञ करनेवाला व्यक्ति, भूमि सुत– पृथ्वी का पुत्र, पुण्य भू– पवित्र भूमि, स्रष्टा– रचना करने वाला, उद्भूत– उत्पन्न, बाहर आया हुआ, प्रकट हुआ, प्रस्फुटन– खिलना, व्यक्त होना, विधायक– कार्य संपादन करने वाला; अडिग– अटल।

**संदर्भ** : उपरोक्त

**प्रसंग** : कवि इन पंक्तियों में भारत को गणतांत्रिक देश बनाने में भारतीय जनता की भूमिका का गुणगान कर रहा है और उन्हें सचेत कर रहा है कि मनुष्यता के कल्याण के जिस महान उद्देश्य के लिए भारत के संविधान को निर्मित किया गया है और छब्बीस जनवरी को उसे लागू किया गया है उसके लिए निरंतर समर्पित और सचेत रहना होगा।

**व्याख्या** : इन पंक्तियों में कवि भारत के नागरिकों को संबोधित करते हुए कहता है कि नए और सभ्य भारत के नए जनराज्य के सभी नागरिक मेरी बात को ध्यान से सुनें कि संविधान के रूप में जो यह मंजूषा आज आप लोगों को मिली है वह आपकी ही मेहनत का फल है, इसलिए इस पर आपका ही अधिकार है। यहां कवि छब्बीस जनवरी को गणतंत्र में रूपांतरित होने वाले भारत के लिए अभिनव और सभ्य विशेषण का प्रयोग करता है, जिसका तात्पर्य यह है कि आज के दिन के बाद का भारत अपनी संरचना में नया और अपनी कार्यप्रणाली में सभ्य होगा। अब भारतीय गणतंत्र में अंग्रेजों की तरह जंगल का कानून नहीं चलेगा। आजाद भारत एक सभ्य और नवीन भारत होगा। इस नवीन भारत में फैलने वाला यह प्रकाश लंबे समय से भारत की जनता के स्नेह और रक्त के भीतर पलता रहा है। मतलब यह कि भारत के लोगों ने जनतंत्र के सपने के लिए लंबा संघर्ष किया है और उस सपने के लिए अपनी जान भी दी है। इसलिए कवि उनको संबोधित करते हुए कहता है कि इस जनतंत्र रूपी यज्ञ के आयोजनकर्ता भी तुम हो, उसके पुरोहित भी तुम्हीं हो और उसके यजमान भी तुम्हीं हो। कवि की भावना है कि भारतीय गणतंत्र का वास्तविक निर्माता और अधिकारी भारत की महान जनता है। इसलिए भारत का गणतंत्र दिवस भारत की जनता का दिवस है।

कवि आगे भारत की जनता को पृथ्वी के पुत्र के रूप में संबोधित करते हुए कहता है कि तुम नवीन भारत की पवित्र भूमि की प्रजा हो और यह जो नवीन भारत की रचना हुई है उसको रचने वाले भी तुम ही हो। तुम्हारी शक्ति और तुम्हारी साधना से पैदा हुई ज्वाला के ताप का प्रकाश तुम्हारे भीतर से प्रकट होकर तुमको नया गौरव प्रदान कर रहा है। अर्थात इस नए भारत के निर्माण में इस देश की जनता की ही शक्ति और साधना लगी है और उसी के परिणामस्वरूप आज हमारा गणतंत्र नवीन प्रकाश से प्रकाशित हो रहा है।

कवि को लगता है कि भारतीय लोकतंत्र भारत की जनता के कर्म की ही अभिव्यक्ति है। इस सफलता के लिए कवि राष्ट्र के सच्चे निर्माता भारत के नागरिकों और समस्त प्रजा का बार–बार जयगान करता है और भारत के गणतंत्र रूपी प्रकाश के पिटारे को उसी जनता को इस भाव से समर्पित करता है कि इस पर सिर्फ उनका ही हक है। वह कहता है कि यह प्रकाश भारत की जनता के कभी न हिलने वाले विश्वास का प्रकाश है। तात्पर्य यह कि भारत की आजादी और स्वराज्य को प्राप्त करने के प्रति भारतीय जनता के भीतर जो अडिग विश्वास था यदि वह हिल जाता तो भारत कभी भी एक आजाद गणतंत्र नहीं बन पाता।

*किन्तु रूपाकार यह केवल प्रतिज्ञा है*
*उत्तरोत्तर लोक का कल्याण ही है साध्य,*
*अनुशासन उसी के हेतु है।*
*यह प्रतिज्ञा ही हमारा दाय है लम्बे युगों की साधना का,*
*जिसे हम ने धर्म जाना।*
*स्वयं अपनी अस्थियां दे कर हमीं ने असत् पर सत् की*
*विजय का मर्म जाना।*
*सम्पुटित पर हाथ, जिस ने गोलियां निज वक्ष पर झेलीं,*
*शमन कर ज्वार हिंसा का–*
*उसी के नत–शीश धीरज को हमारे स्तिमित चिर–संस्कार ने*
*सच्चा कृती का कर्म जाना।*

**शब्दार्थ** : दाय– बंटवारे में मिला धन, असत– असत्य, सत– सत्य, सम्पुटित– रत्न की पेटी, निज– अपना, वक्ष– छाती, सीना, शमन– बुझाना, दबाना, स्तिमित– जमे हुए।

**संदर्भ** : उपरोक्त

**प्रसंग** : प्रस्तुत पंक्तियों में कवि संविधान और लोकतंत्र के महत्व की ओर हमारा ध्यान आकर्षित कर रहा है। उसका मानना है कि जितने गहरे संघर्ष के द्वारा हमने इसको प्राप्त किया है उसको बचाए रखने के लिए भी हमें उतना ही सचेत रहना चाहिए।

**व्याख्या** : इन पंक्तियों में कवि भारत की जनता को सचेत करते हुए कहता है कि यह ध्यान रहे कि आज के दिन हम जिस गणतंत्र में प्रवेश कर रहे हैं यह तो केवल आजादी के पहले की प्रतिज्ञा का एक रूपाकार है। इसमें जीवन तो तब आएगा जब आज के दिन हमने जिस संविधान को स्वीकार किया है उस पर आगे चलें और दिन–प्रति–दिन लोक के कल्याण के लिए लगे रहें। कवि का मानना है कि संविधान या गणतांत्रिक व्यवस्था तो महज लोककल्याण का साधन है, इसका साध्य या लक्ष्य तो जनता का कल्याण करना है। इस लोककल्याण का मुख्य हेतु भारतीय जनता का अनुशासन है। तात्पर्य यह कि इस संविधान द्वारा जिस व्यक्ति को जो कार्य दिया गया है वह बिना किसी दबाव और भय के अपनी इच्छा से उसके लिए निरंतर समर्पित रहे और मानव मात्र की भलाई का प्रयास करे।

स्वराज्य के लिए हमने जो दीर्घकालिक संघर्ष और साधना की है उसकी देन संविधान के रूप में ली गई हमारी प्रतिज्ञा है। यह गणतंत्र ही आज के बाद हमारा धर्म होगा। किसी और धर्म का हमारे लिए कोई मूल्य नहीं होगा। हमने अपनी प्रेरणा से अपनी अस्थियों का चढ़ावा चढ़ाकर स्वाधीनता संग्राम में असत्य पर विजय पाई है। इसलिए असत्य पर सत्य की विजय और सत्य की महत्ता का मर्म हमसे बेहतर और कोई नहीं जानता। आजादी के दौरान हमने अपने सीने पर दुश्मन की गोलियां झेलीं। उनके द्वारा संचालित हिंसा के तूफान को ठंडा किया। स्वाधीनता आंदोलन के द्वारा अहिंसा की जिस नीति पर सारा देश चला उसका उदाहरण दुनिया में कहीं नहीं मिलता। दुनिया के अन्य देशों में लोकतंत्र का आगमन मध्यकालीन तरीके से हुआ जबकि भारत में लोकतंत्र भी गांधीजी के नेतृत्व में लोकतांत्रिक तरीके से ही आया। ऐसा इसलिए हुआ कि हमारे भीतर विद्यमान प्राचीन संस्कारों ने सत्य की राह पर चलने का हमें धीरज प्रदान किया था। यही कारण है कि हम अपने संविधान के महत्व को जानते हैं। जिसने हिंसा के ज्वार या तूफान को दबाया और दुश्मन की गोलियों को सीने पर झेला है उसी के हाथ आज सविधान रूपी यह खजाना लगा है। स्वाधीनता संग्राम में अपार धैर्य का प्रदर्शन करने वाले लोगों के योगदान के प्रति अपना सिर झुकाते हुए हमने अपने प्राचीन संस्कारों से संचालित होकर उनके गणतंत्र रूपी इस कृति के कर्म को पहचाना है। इन पंक्तियों में कवि गणतंत्र की स्थापना के लिए स्वाधीनता आंदोलन के दौरान संघर्षरत रहे लोगों का आभार प्रकट कर रहा है।

*साधना रुकती नहीं, आलोक जैसे नहीं बंधता।*
*यह सुघर मंजूष भी झर गिरा सुन्दर फूल है पथ–कूल का।*
*मांग पथ की इसी से चुकती नहीं।*
*फिर भी बीन लो यह फूल*
*स्मरण कर लो इसी पथ पर गिरे सेनानी जयी को,*
*बढ चलो फिर शोध में अपने उसी धुंधले युगों के स्वप्न की*
*जिसे हम आलोक–मंजूषा समर्पित कर रहे हैं।*
*आज हम अपने युगों के स्वप्न को यह नयी आलोक–मंजूषा*
*समर्पित कर रहे हैं*

**शब्दार्थ** : सुघर– सुंदर, मंजूष– खजाना

**संदर्भ** : उपरोक्त

**प्रसंग** : इन पंक्तियों में कवि गणतंत्र दिवस के अवसर पर समस्त भारतीयों को सचेत करते हुए कह रहा है कि आज हमें जो अधिकार प्राप्त हो रहे हैं यह हमारा अंतिम पड़ाव नहीं है। यह तो हमारी साधना का आरंभिक चरण है, जिसे हम सहजता से स्वीकार करते हैं, परंतु अभी हमें इस राह में बहुत कुछ प्राप्त करना है।

**व्याख्या** : कवि कहता है कि इतिहास गवाह है कि मनुष्य की साधना कभी भी विराम नहीं लेती। मनुष्य निरंतर संसार को बेहतर बनाने के लिए साधना करता रहता है, यह प्रक्रिया

वैसी ही है जैसे प्रकाश की किरण होती है। जिस प्रकार प्रकाश की किरण का कहीं ठहराव नहीं होता वैसे ही मनुष्य की साधना का कहीं विराम नहीं होता। साधना के पथ पर चलते हुए उससे निकलने वाले परिणाम रूपी कुछ फूल गिरे हुए मिलते हैं लेकिन इससे साधना की मांग या चाह खत्म नहीं हो जाती। अर्थात साधक निष्काम भाव से साधना करता जाता है, साधना के पथ के परिणाम उसके लिए विराम नहीं बनते। गणतंत्र दिवस के अवसर पर यह बातें कहते हुए कवि यह कहना चाहता है कि आज का दिन हमारे लिए हमारी साधना के पथ का एक फूल है लेकिन यह विराम नहीं है। यह तो एक नयी साधना का आरंभ है। इसलिए कवि कहता है कि आज के इस गणतंत्र दिवस रूपी फूल को भी हमें चुन लेना चाहिए और इसकी सुगंध को ग्रहण करते हुए हमें उन स्वाधीनता सेनानियों को स्मरण करना चाहिए जिन्होंने इस फूल को प्राप्त करने के लिए कठोर साधना की और उनमें से कई इस साधना के पथ पर ही बलिदान हो गए। कवि गणतंत्र दिवस को आलोक–मंजूषा अर्थात प्रकाश की एक पिटारी के रूप में चिह्नित करते हुए कह रहा है कि इस प्रकाश के भीतर उपस्थित उस धुंधले युग के स्वप्नों को हमें याद करना चाहिए और उन सपनों को आगे बढ़ाने के लिए हमें निरंतर संघर्ष करना चाहिए। कविता के अंत में कवि युगों से भारतीय मानस में सपनों की तरह पल रहे गणतंत्र दिवस रूपी नवीन आलोक–मंजूषा को आम जन को समर्पित करने की घोषणा कर रहा है।

### 3.3.2 प्रयोगवाद और अज्ञेय

हिन्दी साहित्य में प्रगतिवाद के बाद के काव्य आंदोलन को 'प्रयोगवाद' कहा जाता है। प्रयोगवाद दो शब्दों 'प्रयोग' और 'वाद' से बना है। प्रयोग शब्द का अभिप्राय 'कर के देखना' है और 'वाद' शब्द का अभिप्राय सिद्धान्त है। अर्थात प्रयोगवाद का अर्थ हुआ कि जो पहले से है, उसका परीक्षण करते हुए पुनः उसका ज्ञान प्राप्त करने वाला सिद्धान्त या मत। प्रयोग एक प्रक्रिया है, परिणाम नहीं। प्रयोग के द्वारा ही हम पुरानी मान्यताओं का परीक्षण करते हैं और अपने युग के अनुसार उसकी प्रासंगिकता का निर्धारण करते हैं। समय के साथ पुरानी मान्यताओं का परीक्षण आवश्यक होता है। प्रयोग की यह प्रक्रिया जीवन, समाज और साहित्य सभी क्षेत्रों में आवश्यक होती है।

साहित्य के क्षेत्र में देखें तो प्रयोग की यह प्रक्रिया पहले भी चलती रही है। किन्तु इस प्रक्रिया का स्पष्ट सिद्धान्त या मत का प्रतिपादन 'प्रयोगवाद' के साथ आरम्भ हुआ। प्रयोगवाद का आरम्भ 1943 में अज्ञेय के संपादन में प्रकाशित 'तार सप्तक' से माना जाता है। 'तार सप्तक' में उस समय के सात महत्वपूर्ण कवियों की रचनाएं संकलित की गयी थीं। इन कवियों में गजानन माधव मुक्तिबोध, नेमिचन्द्र जैन, भारतभूषण अग्रवाल, प्रभाकर माचवे, गिरिजाकुमार माथुर, रामविलास शर्मा और अज्ञेय थे। इन कवियों की रचनाओं में तत्कालीन समय की विडंबनाएं, भ्रष्टाचार, मध्यवर्गीय कुंठाओं के प्रति अवज्ञा, राष्ट्रीय स्वाधीनता आन्दोलन की चेतना आदि भाव व्यक्त हो रहे थे। 'तार सप्तक' के कवियों ने अपनी कविताओं के कथ्य और शिल्प में कई सारे मौलिक प्रयोग कर हिन्दी कविता को एक नई दिशा दी। जो 'तार सप्तक' की लोकप्रियता का आधार बना। 'तार सप्तक' की प्रसिद्धि के बाद अज्ञेय ने 1951 ई. 'दूसरा सप्तक', 1959 में 'तीसरा सप्तक' और 1979 में 'चौथे सप्तक' का संपादन कर हिन्दी कविता में 'प्रयोगवाद' के महत्व को स्थापित कर दिया। 'दूसरा

सप्तक' के कवि थे– भवानीप्रसाद मिश्र, शकुन्तला माथुर, हरिनारायण व्यास, शमशेर बहादुर सिंह, नरेश मेहता, रघुवीर सहाय। 'तीसरा सप्तक' के कवियों में प्रयागनारायण त्रिपाठी, कीर्ति चौधरी, मदन वात्स्यायन, केदारनाथ सिंह, कुंवर नारायण और सर्वेश्वरदयाल सक्सेना थे। तीसरा सप्तक के प्रकाशन तक आते–आते प्रयोगवाद की धूम कुछ कम होने लगी थी। इसका स्थान दूसरे काव्य आंदोलनों ने ले लिया था। इसलिए 1979 में प्रकाशित 'चौथे सप्तक' की कोई विशेष चर्चा हिन्दी जगत में नहीं हुई।

इन तीनों 'सप्तकों' के प्रकाशन में अज्ञेय की भूमिका और महत्व उल्लेखनीय रहा। अज्ञेय ने हिन्दी कविता के भाव–पक्ष एवं कला–पक्ष में प्रयोग और नवीनता को समय की मांग बताया। प्रयोगवादी काव्य में प्रयोग को ही काव्य–जीवन माना गया, पुरानी परम्पराओं को खारिज किया गया, कविता की पूर्व की सफलताओं एवं उपलब्धियों को बदले हुए समय में निरर्थक घोषित कर दिया गया, कविता का उत्स जनःजीवन को माना गया, कविता में साधारणीकरण के स्थान पर पुनः विशिष्टीकरण को मान्यता दी गई और नये शब्दों एवं नये प्रतीकों–बिम्बों के प्रयोग को महत्व दिया गया।

अज्ञेय जीवन और रचना दोनों स्तरों पर प्रयोग के पक्षधर थे। स्वयं अज्ञेय ने अपनी कविता में नये उपमान, नये प्रतीक, नये बिम्बों का विलक्षण प्रयोग किया है। साथ ही वे अपने समय को उसकी सम्पूर्णता में समझने और अपने प्रयोगों द्वारा उसे अपनी कविता में प्रस्तुत करने की कोशिश अज्ञेय के साथ–साथ लगभग सभी प्रयोगवादी कवियों की विशेषता रही है। अज्ञेय ने 'तार सप्तक' की भूमिका में अपने साथ के कवियों को अन्वेषी माना, एक राह के अन्वेषी। इसीलिए अज्ञेय और उनके साथ के कवियों ने प्रेम, प्रकृति और पीड़ा को एकदम नये रूप में प्रस्तुत कर हिन्दी कविता के दायरे का विस्तार किया। अज्ञेय ने नये सत्य की खोज, साधारणीकरण एक नयी समस्या, रस और बौद्धिकता तथा परम्परा का प्रश्न जैसे सैद्धान्तिक प्रश्नों के साथ प्रयोगवाद के वैचारिक आधारों की स्थापना की है।

प्रयोगवाद की मूल विशेषताओं को अज्ञेय की कविता के माध्यम से इस प्रकार समझा जा सकता है–

**पीड़ा की अनुभूति** : अज्ञेय मध्यवर्ग के जीवन और उस जीवन की पीड़ा को उसकी सम्पूर्णता में समझते हैं तथा अपनी कविता में उसे अभिव्यक्त करते हैं। अज्ञेय इस तथ्य से परिचित हैं कि मध्यवर्ग अपने लिए बहुत सारे छोटे–बड़े रंगीन सपने पालता है। उन्हें पूरा करने के लिए जी तोड़ परिश्रम करता है। किन्तु जीवन–जगत में फैले विद्रूप, आर्थिक विषमता के कठोर यथार्थ से टकराकर उसके सारे सपने टूट जाते हैं। मध्यवर्गीय व्यक्ति के टूटे ख्वाबों की पीड़ा को अज्ञेय अपनी कविता में दर्ज करते हैं–

*दुःख सबको मांजता है*

*और*

*चाहे स्वयं सबको मुक्ति देना वह न जाने, किन्तु*

*जिनको मांजता है*

*उन्हें यह सीख देता है कि सबको मुक्त रखे।*

साथ ही मध्यवर्ग की अति आत्मविश्वास और उससे उपजी पीड़ा का बहुत ही स्वाभाविक चित्रण करते हुए अज्ञेय ने लिखा है कि–

*मेरी भुजाएं टूट गई हैं*
*क्योंकि मैंने उनकी परिधि में*
*मेघों को बांध लेना चाहा था।*

**अनुभव की प्रामाणिकता पर बल** : प्रयोगवाद ने अनुभव की प्रामाणिकता को काव्य के लिए श्रेष्ठ माना। दूसरे का अनुभव जीवन में और रचना में कभी व्यवस्थित ढंग से काम नहीं आता। इसीलिए प्रयोगवादी कवि कविता के कथ्य के रूप में उन्हीं अनुभवों को महत्व देते हैं जो स्वयं कवि के भोगे हुए यथार्थ से निकले हों। अनुभव की प्रामाणिकता के सन्दर्भ में अज्ञेय अपनी कविता में कहते हैं कि–

*जितना तुम्हारा सच है उतना ही कहो।*

**मोहभंग और यथार्थ का आग्रह** : प्रयोगवादी कविता यथार्थ के प्रति आग्रह और पुराने काव्य संस्कारों, सामाजिक मूल्यों से मोहभंग की कविता है। प्रयोगवाद ने स्वयं को छायावादी भावुकता और कल्पना से बाहर निकाल कर यथार्थ की नयी जमीन की खोज की। अब जीवन–जगत के वे सन्दर्भ भी कविता के विषय बने, जिनका अब तक कविता के सुन्दर प्रदेश में प्रवेश सम्भव नहीं हो पाया था। प्रयोगवादी कवि इस बात पर विश्वास करते थे कि अच्छा–बुरा, पाप–पुण्य इन सबका महत्व सापेक्षिक है। यथार्थ के प्रति आग्रह के कारण ही अज्ञेय अपनी एक कविता में वल्मीक पर बैठे क्रौंच को प्रिय के विरह से पीड़ित नहीं दीमकों की खोज में बैठा बताते हैं–

*क्रौंच बैठा हो कभी वल्मीक पर*
*तो मत समझ*
*वह अनुष्टुप बांचता है संगिनी के स्मरण में*
*जान ले, दीमकों की टोह में है।*

**विद्रोह भावना और क्षण का महत्व** : विद्रोह का भाव प्रयोगवाद के स्वभाव में है। प्रयोगवाद के प्रवर्तक कवि अज्ञेय की कविता में भी विद्रोह की अनुगूंज व्याप्त रहती है। जो कुछ असत्य है, अशिव है उसके प्रति विद्रोह का भाव, शोषण और अराजकता का साहस के साथ अस्वीकार अज्ञेय की कविता का चिर परिचित स्वर है। अज्ञेय का विद्रोह प्रगतिवादी कविता के विद्रोह की तरह प्रखर और कठोर मात्र न होकर उनमें प्रखरता और कठोरता के साथ एक खास तरह की कोमलता भी है–

*सुनो तुम्हें ललकार रहा हूं, सुनो घृणा का गान!*
*तुम! जो बड़े–बड़े गद्दी पर ऊंची दुकानों में*
*उन्हें कोसते हो जो भूखे मरते हैं खानों में,*

इसी तरह प्रयोगवाद समय के समूचे कालखण्ड की जगह 'क्षण' को महत्व देता है। 'क्षण' को महत्व देने का अर्थ है लघु को महत्व देना। प्रयोगवाद की इस मान्यता को काव्य में प्रस्तुत करते हुए अज्ञेय कहते हैं–

*हमें किसी कल्पित अजरता का मोह नहीं।*

*आज के विविक्त अद्वितीय इस क्षण का*

.....

*शाश्वत हमारे लिए वही है।*

**नये काव्य–शिल्प की प्रतिष्ठा** : प्रयोगवाद प्रयोग का आग्रही है। प्रयोगवादी कवियों की कविताओं में कथ्य की नवीनता, युगानुकूल भाषा और शिल्प पर अत्यधिक जोर है। जिसमें वे नये उपमानों, प्रतीकों, बिम्बों का अभिनव प्रयोग करते हैं। उनकी मान्यता है कि समय के साथ कविता के कथ्य में परिवर्तन आता है। इसीलिए कविता के कथ्य में आये परिवर्तन को अभिव्यक्त करने के लिए नये प्रतीकों, बिम्बों का प्रयोग करते हैं। प्रयोगवादी कविता के इस आग्रह को व्यक्त करते हुए अज्ञेय अपनी प्रसिद्ध कविता 'कलगी बाजरे की' में कहते हैं कि–

*अगर मैं तुमको*

*लजाती साझ के नभ की अकेली तारिका*

*अब नहीं कहता*

*या शरद के भोर की नीहार–न्हायी कुई,*

*टटकी कली चम्पे की*

*वगैरह तो*

*नहीं कारण कि मेरा हृदय उथला या कि सूना है*

*या कि मेरा प्यार मैला है।*

*बल्कि केवल यही:*

*ये उपमान मैले हो गये हैं।*

*देवता इन प्रतीकों के कर गये हैं कूच*

*कभी बासन अधिक घिसने से मुलम्मा छूट जाता है।*

इसी तरह प्रयोगवादी कवि अपनी बात कहने के लिए नये प्रतीकों का प्रयोग करते हैं। जैसे, अज्ञेय अपने काव्य में मोह भंग के लिए रेत, जीवन के विस्मय के लिए काच की टंकी में पली सोन मछली, शहरी मनुष्य की चेतना के लिए सांप, नये आलोक के लिए बावरा अहेरी आदि प्रतीकों का प्रयोग करते हैं। नये प्रतीकों के साथ ही प्रयोगवादी कवि नये बिम्बों का भी प्रयोग करते हैं। भाषा–प्रयोग की दृष्टि से प्रयोगवादी कवि बहुत मुक्त है। उनकी भाषा में संस्कृतनिष्ठ हिन्दी, तद्भव शब्द, देशज शब्द, विदेशी भाषाओं के शब्दों का भी बहुतायत प्रयोग मिलता है।

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि प्रयोगवाद और अज्ञेय का सम्बन्ध सर्जक और सर्जना का सम्बन्ध है। प्रयोगवाद की वैचारिक भूमि और उसकी चेतना के निर्माण में अज्ञेय का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। एक तरह से अज्ञेय प्रयोगवाद के प्रतिनिधि कवि हैं।

## इकाई 4 व्यवहारिक हिंदी –I

### 4.0

हिन्दी, भारतीय-आर्य-भाषा परिवार की भाषा है। संस्कृत भाषा से लेकर पालि, प्राकृत, अपभ्रंश आदि सोपानों से गुजरती हुई हिन्दी आज समूचे भारत की संपर्क भाषा बन गई है। हिन्दी का विकास अंतर्क्षेत्रीय भाषा, राष्ट्रभाषा, राजभाषा और अंतर्राष्ट्रीय भाषा के रूप में हो रहा है। हमारे जन-जीवन, सामाजिक-सांस्कृतिक संप्रेषण, ज्ञान-विज्ञान और सर्जनात्मक साहित्य की भाषा के रूप में विकसित हिन्दी हमारी ही नहीं, अपितु पूरे विश्व की शिक्षा व्यवस्थाओं में महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त कर चुकी है। इसी का परिणाम है कि हिन्दी अपने देश में मातृभाषा, प्रथम भाषा, द्वितीय भाषा आदि रूपों में पढ़ी-पढ़ाई जा रही है और यह भारत के बाहर अनेक देशों में भी अध्ययन-अध्यापन का विषय है।

भाषा सामान्यत: संप्रेषण का माध्यम है। दो या दो से अधिक व्यक्ति जिस वर्ग के होते हैं, वहां भाषा का रूप बदल जाता है। एक प्रकार से भाषा तो वह साधन है, जिसके माध्यम से एक व्यक्ति अपने मनोभावों को दूसरे के समक्ष व्यक्त करता है। 'संवाद' की स्थिति भाषा द्वारा ही संभव है। हिन्दी के इसी संप्रेषण को दैनिक जीवन में प्रयुक्त करने के माध्यम को व्यावहारिक या कामकाजी हिन्दी कहा जाता है।

सरलतम शब्दों में कह सकते हैं कि "जीवन की जरूरतों की पूर्ति के लिए उपयोग में लाई जाने वाली हिन्दी ही 'व्यावहारिक या कामकाजी हिन्दी' है। इसके विभिन्न रूप हैं, जैसे पत्राचार, पत्रकारिता, भाषा, कम्प्यूटिंग, मीडिया-लेखन, अनुवाद आदि।"

व्यावहारिक हिन्दी के अनेक रूप विकसित हुए हैं, जो कार्यालयों में किए जा रहे काम-काज के स्वरूप के अनुसार निर्मित हुए हैं इसमें प्रमुख हैं–प्रारूपण, पत्र-लेखन, संक्षेपण, पल्लवन, टिप्पण।

प्रस्तुत इकाई में व्यावहारिक हिन्दी के विभिन्न रूपों-पत्र लेखन, संक्षेपण, पल्लवन, टिप्पण आदि के प्रकारों एवं विशेषताओं का वर्णन किया गया है।

## 4.1 इकाई के उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप-

- व्यावहारिक हिन्दी के बारे में जान पाएंगे;
- पत्र लेखन के प्रकार एवं विशेषताओं को जान पाएंगे;
- संक्षेपण की कार्य विधि एवं महत्व को समझ पाएंगे;
- पल्लवन की विशेषताओं के बारे में जान पाएंगे;
- टिप्पण के आवश्यक नियमों को समझ पाएंगे;
- संक्षेपण और टिप्पण के अंतर को समझ पाएंगे।

## 4.2 पत्र लेखन

पत्र मानव सभ्यता के विकास के वाहक हैं। आज के वैज्ञानिक युग में संचार-माध्यमों के विकास के द्वारा पत्राचार से हजारों मील दूर बैठे आत्मीयों से संपर्क स्थापित किया जा सकता है। पत्र आज की दुनिया में वैचारिक प्रगति के पहिए हैं। लिपि के विकास से पूर्व चित्रों अथवा विभिन्न संकेतों के माध्यम से सूचना-संप्रेषण का काम किया जाता था। पत्र-लेखन में क्षमता प्राप्त करना प्रत्येक सभ्य एवं शिष्ट व्यक्ति की कामना होती है। पत्र को हम विश्वबंधुत्व का एक प्रबल माध्यम भी कह सकते हैं। दुनिया के अनेक साधारण और असाधारण व्यक्तियों ने पत्रों के द्वारा मित्र बनाकर जीवन में महती सफलता प्राप्त की है। हर व्यक्ति किसी न किसी रूप में इन पत्रों से जुड़ा हुआ है। किसी भी महापुरुष, नेता, साहित्यकार द्वारा लिखे गए पत्रों के द्वारा हम उसकी चिंतनकला, विचारधारा, जीवन दर्शन, देश-विदेश नीति तथा अन्य बहुत-सी उपयोगी क्षेत्रों की जानकारी प्राप्त कर सकते हैं।

### 4.2.1 प्रभावी पत्र लेखन की विशेषताएं

पत्र लेखन की विशेषताएं निम्न हैं-

1. **स्पष्टता**-पत्र किसी भी प्रकार का हो, उसमें स्पष्टता होनी चाहिए. यदि कोई पत्र-प्राप्तकर्ता पत्र लिखने वाले के मंतव्य को स्पष्ट रूप से ग्रहण न कर पाए तो ऐसी स्थिति में पत्र का उद्देश्य खत्म हो जाता है।
2. **संक्षिप्तता**-संक्षिप्तता एक आदर्श पत्र-लेखन का मूलभूत गुण है। अपनी बात को स्पष्ट करने के लिए आवश्यक शब्दों का प्रयोग ही करना चाहिए। एक अच्छा पत्र तभी संक्षिप्त माना जाता है, जब उसमें प्रयुक्त किया गया एक-एक शब्द उपयोगिता और आवश्यकता लिए हुए हो।

3. **मौलिकता**–पत्र की प्रस्तुति नवीन और मौलिक ढंग से होनी चाहिए। ऐसा करने से जहां कही हुई बात पत्र-प्राप्तकर्ता के हृदय को प्रसन्न करती है, वहीं उस पर अपना एक विशेष प्रभाव भी छोड़ती है।

4. **सुसंबद्धता**–पत्र लिखते समय जिस विषय का पत्र प्राप्तकर्ता तक पहुंचता है, प्रेषक उसी को मुख्य रूप से प्रस्तुत करे। पत्र में मुख्य विषय से हटकर कही गई कोई अन्य बात पत्र की एकान्विति या सुसंबद्धता को भंग कर देती है। पत्र में निर्दिष्ट सभी बातें एकसूत्रता या तारतम्यता में कही गई होनी चाहिए।

5. **यथार्थता**–इस गुण का संबंध मुख्य रूप से औपचारिक पत्रों से है, क्योंकि इस प्रकार के पत्रों में तथ्य-प्रस्तुति का होना आवश्यक होता है। औपचारिक पत्रों के व्यावसायिक और कार्यालयी– दोनों रूपों के पत्रों में यह गुण अहम् भूमिका निभाता है।

6. **संपूर्णता**–पत्र लिखने वाले के लिए यह जरूरी होता है कि वह अपने कथ्य या मंतव्य को संपूर्ण ढंग से प्रस्तुत करे। उसे पढ़ने के उपरांत पत्र प्राप्तकर्ता के मन में किसी भी प्रकार की जिज्ञासा या शंका नहीं रहनी चाहिए।

7. **सहजता और सरलता**–सहजता का अर्थ है स्वाभाविकता। पत्र में लिखी हर बात सहज और अकृत्रिम होनी चाहिए। सरलता से अभिप्राय भाषा की सरलता से है। पत्र की भाषा में संप्रेषणीयता का गुण होना चाहिए।

8. **शालीनता**–शालीनता का गुण औपचारिक और अनौपचारिक दोनों प्रकार के पत्रों में आवश्यक है। इसमें पत्र लिखने वाले के व्यक्तित्व, प्रतिष्ठा, पद, व्यावहारिक आचरण और स्वभाव की झलक स्पष्ट दृष्टिगोचर होती है।

9. **प्रभावान्वित**–उत्कृष्ट पत्र-लेखन का महत्वपूर्ण गुण उसका समग्र प्रभावान्वित होना है। पत्र की भाषा, शैली और प्रस्तुतीकरण इस प्रकार होना चाहिए कि पत्र प्राप्तकर्ता के हृदय पर विशेष छाप छोड़े।

## पत्र–लेखन में विशेष उल्लेखनीय बातें

पत्र एक ऐतिहासिक दस्तावेज है, जो लिखने वाले के हाथ से छूटकर किसी अन्य के हाथ में जाता है। उसका सदुपयोग अथवा दुरुपयोग भी हो सकता है। किसी ने ठीक ही कहा है कि बोलते समय एक बार सोचो और लिखते समय तीन बार। भावावेश में कभी मत लिखो। क्रोध, द्वेष आदि के आवेश में लिखे गए पत्रों के लिए बड़े-बड़े दिग्गजों को क्षमा-याचना करते हुए देखा गया है। लिख चुकने के बाद संपूर्ण पत्र को एक बार सावधानी से पढ़ लेना चाहिए, जिससे शीघ्रता में लिखी गई वर्तनी आदि की अशुद्धियों को ठीक किया जा सके तथा फालतू बातों को पत्र से काट दिया जाए। एक सफल पत्र तैयार करने के लिए, उसे काट-छांट आदि से बचाने के लिए समझदार लोग पत्र की कच्ची रूपरेखा पहले तैयार कर लेते हैं। प्राप्तकर्ता का पता लिफाफे आदि पर सावधानीपूर्वक लिखा जाना चाहिए, जिसमें जनपद, प्रांत तथा पिन कोड आदि का उल्लेख पत्र को उसके गंतव्य तक पहुंचाने के लिए अत्यंत अनिवार्य है। यदि पत्र में प्रमाण स्वरूप कुछ प्रमाण-पत्र लगाने पड़ें, तो उन पर पहले क्रमांक डालें, फिर पत्र के अंत में बाईं ओर उनका उल्लेख करें, जैसे–

संलग्नक– 1. हाई स्कूल प्रमाण-पत्र, 2. चरित्र प्रमाण-पत्र आदि।

### 4.2.2 पत्र–लेखन के प्रकार

पत्र-लेखन के निम्न प्रकार हैं-

**1. कार्यालयी पत्र**

राजकीय सहायता प्राप्त संस्थाओं एवं कार्यालयों द्वारा किसी भी संस्था, व्यक्ति या अन्य कार्यालयों को जो पत्र लिखे जाते हैं उन्हें कार्यालयी पत्र कहते हैं। कार्यालयी पत्रों की निम्नलिखित विशेषताएं हैं–

(क) **स्पष्टता**– पत्र की विषय-वस्तु बिल्कुल स्पष्ट होनी चाहिए, जिससे पत्र को पाने वाला उसके सही रूप को ग्रहण कर सके। पत्र-लेखक को पत्र की स्पष्टता का ध्यान रखना चाहिए।

(ख) **अचूकता**– पत्र लिखने वाले को कार्यालयी पत्र लिखते समय उसमें प्रस्तुत विधान, अवतरण, संदर्भ और उसके तथ्य को ध्यान में रखना चाहिए। इसके लिए बहुत सावधानी से उसका मसौदा तैयार करना चाहिए।

(ग) **संक्षिप्तता**–पत्र लिखते समय अनावश्यक शब्द-प्रयोग, एक ही बात को बार-बार न लिखकर पत्र को संक्षिप्त व केवल आवश्यक जानकारी देते हुए लिखना चाहिए।

(घ) **परिपूर्णता**–परिपूर्ण पत्र हम उसे कहेंगे जिसमें पत्र के विषय और उद्देश्य से संबंधित सारी जानकारियां उस पत्र में आ जाएं। पूर्णता के लिए हस्ताक्षर, दिनांक, क्रमांक का होना आवश्यक है।

(ङ) **भाषा**–व्याकरण की दृष्टि से कार्यालयी पत्र की भाषा शुद्ध, सरल एवं स्पष्ट होनी चाहिए।

## कार्यालयी पत्र के रूप

केंद्र सरकार के विभिन्न कार्यालयों में अनेक स्तर पर पत्राचार होता है जिसके अनेक रूप होते हैं, जिनका संक्षिप्त रूप में विवरण किया जा रहा है। ये पत्र निम्न प्रकार के होते हैं-

1. **सरकारी पत्र**- कार्यालयी पत्रों में सरकारी पत्रों का प्रयोग सबसे अधिक किया जाता है। इन्हें आधिकारिक एवं नियमित पत्र भी कहते हैं। सरकारी पत्रों का प्रयोग एक सरकार द्वारा दूसरी सरकार को, उसके अधीन राज्य सरकार को, निर्वाचन आयोग को, संघ लोक सेवा आयोग, योजना आयोग, अर्ध-सरकारी आयोगों एवं निकायों को, विभिन्न अर्ध-सरकारी/गैर सरकारी संघों, संरचनाओं, प्रांतीय सरकारों के प्रमुख मामलों में भारत सरकार को तथा अपने क्षेत्र के उच्च न्यायालयों, आयोगों एवं निगमों, विभागीय अध्यक्षों एवं अधिकारियों को, सरकार से अलग सार्वजनिक प्रतिष्ठानों एवं स्वतंत्र कार्यालयों आदि के लिए किया जाता है।

   निम्नलिखित बातों का सरकारी पत्र लिखते समय ध्यान रखना चाहिए-

   1. पत्र की संख्या
   2. कार्यालय का नाम
   3. प्रेषक का नाम एवं पद

4. प्राप्तकर्ता का नाम, पद एवं पता
5. दिनांक
6. संबोधन
7. पत्र की मुख्य विषय वस्तु
8. स्वनिर्देश
9. हस्ताक्षर
10. संलग्नक, यदि हो तो

सरकारी पत्र के कुछ उदाहरण आगे दिए जा रहे हैं जो निम्न प्रकार से हैं-

**उदाहरण 1**

नई दिल्ली
दिनांक 6 जुलाई 2015

प्रेषक:

विनोद कुमार शर्मा
डेस्क अधिकारी
मानव संसाधन विकास मंत्रालय
नई दिल्ली।

सेवा में,

अध्यक्ष
महाराष्ट्र हिन्दी परिषद
पुणे-38

**विषय:** हिन्दी के प्रचार-प्रसार के लिए स्वैच्छिक संस्थाओं को आर्थिक सहायता योजना के तहत दिए जाने वाले अनुदान के संबंध में।

महोदय,

आपके दिनांक 12 मई, 2015 के पत्र संख्या 1/02/15 के संबंध में मुझे यह कहने का निर्देश हुआ है कि आप अपना प्रस्ताव निर्धारित प्रपत्र में सभी आवश्यक विवरण/दस्तावेज के साथ इस मंत्रालय को यथाशीघ्र प्रेषित करें, ताकि इस संबंध में कार्यवाही की जा सके।

संलग्न: योजना की प्रति

**भवदीय**
**विनोद कुमार शर्मा**
**डेस्क अधिकारी**

**उदाहरण 2**

**क्रम संख्या 02/102/9/05** **भारत सरकार**
**सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय**
**दिनांक: 5 जून, 2015**
सेवा में,

महानिदेशक
आकाशवाणी, नई दिल्ली।

**विषय: निदेशक के पद का स्थायीकरण**

महोदय,

उपर्युक्त विषय पर आपके दिनांक 10 अप्रैल, 2015 के पत्र संख्या 10/100/6 के संदर्भ में मुझे यह सूचित करने का निर्देश हुआ है कि राष्ट्रपति ने सूचना एवं प्रसारण सेवाओं के महानिदेशालय में विद्यमान अस्थायी निदेशक के पद को दिनांक 1 जुलाई 2015 से स्थायी बनाने हेतु स्वीकृति प्रदान कर दी है।

उक्त स्वीकृति हेतु वित्त मंत्रालय ने अपनी सहमति दिनांक 15 मई, 2015 की अपनी औपचारिक टिप्पणी संख्या 11/110 वि, के अनुसार प्रदान की है।

भवदीय

ह.
सूर्य प्रकाश शर्मा
अवर सचिव, भारत सरकार
नई दिल्ली

**उदाहरण 3**

दिनांक 10 जनवरी, 2015

**संदर्भ सं./षा.प्र.इ/900/84**

**प्रेषक :**

**शाखा प्रबंधक**
**इटावा**

**श्री रमेश मिश्र**
**16, कृष्ण कुंज**
**राजनाथ चौक, पाली**

**विषय:** जमाराशि-आपका बचत बैंक खाता सं. 1369

प्रिय महोदय,

आपको सादर सूचित किया जाता है कि हमने अपने बैंक की इस शाखा में उपरोक्त खाते में रुपए 1,60,768 (रुपए एक लाख साठ हजार सात सौ अड़सठ) की राशि जमा कर दी है। यह राशि आपकी भविष्य निधि की है।

भवदीय

ह.
शाखा प्रबंधक

2. **अर्ध-सरकारी पत्र**- सरकारी कार्यों के लिए अर्ध-सरकारी पत्रों का प्रयोग निम्नलिखित उद्देश्यों के लिए किया जाता है-

(क) पत्र पाने वाले का ध्यान किसी भी विषय की तरफ व्यक्तिगत रूप से आकर्षित करना।

(ख) किसी भी सरकारी कार्य को करने की विधि के बारे में अधिकारियों द्वारा बिना किसी औपचारिकता के आपस में विचार-विमर्श करना।

(ग) यदि कोई समस्या सरकारी अनुस्मारक देने पर भी नहीं सुलझती, तो उसे जल्दी निपटाने के लिए किसी विशेष अधिकारी का ध्यान आकर्षित करना।

अर्ध-सरकारी पत्र अधिकतर विशेष अधिकारी को ही लिखा जाता है। इसमें भेजने वाले की भाषा सरल, स्पष्ट एवं विनम्र होनी चाहिए। पत्र के अंत में भेजने वाले के केवल हस्ताक्षर ही होते हैं, उसके पद का नाम आदि नहीं लिखा जाता है।

उदाहरण 1

**भारतीय साधारण बीमा निगम**

**संदर्भ सं./6 ( अ.स.प. ) 2015**

प्रधान कार्यालय

मुंबई

दिनांक 25 जून, 2015

प्रिय श्री डॉ. सौरभ,

आपके आंचलिक प्रबंधक के पत्र से ज्ञात हुआ है कि आपने हाल ही में पीएच. डी. की उपाधि प्राप्त कर ली है। आपके द्वारा अर्जित इस उच्च स्तरीय शैक्षिक उपाधि पर हमें गर्व है। इस अवसर पर हमारे प्रबंधक महोदय एवं समस्त कर्मचारियों की ओर से हार्दिक बधाई स्वीकार करें। आशा है, आपका अर्जित ज्ञान निगम में हिन्दी के प्रयोग में वृद्धि के लिए सहायक सिद्ध होगा।

शुभकामनाओं सहित

आपका

ह.

(प्रहलाद शर्मा)

डा. सौरभ जोशी

राजभाषा अधिकारी

भारतीय साधारण बीमा निगम,

आंचलिक कार्यालय, पुणे-24

उदाहरण 2

(अर्ध-सरकारी पत्र)

अ. सं. पत्र संख्या 5-6/70-75

भारत सरकार
रेल मंत्रालय
नई दिल्ली

दिनांक 22 अप्रैल, 2015

प्रिय श्री नायडू जी,

आपका ध्यान इस मंत्रालय के पत्र दि. 3 मार्च, 2011 के क्रम संख्या 5/12/23-25 की ओर आकृष्ट किया जाता है। उक्त पत्र में कर्मचारियों को स्थायी करने के संदर्भ में विशिष्ट नियमावली की प्रतिलिपि मांगी गई थी, ताकि केंद्रीय मंत्रालय से संबंधित निर्देशों का अध्ययन किया जा सके, परंतु अभी तक नियमावली की प्रतिलिपि प्राप्त नहीं हुई है।

नियमावली के न मिलने के कारण, स्थायी न किए जाने वाले कर्मचारियों में असंतोष की भावना पनपती जा रही है, इसलिए शीघ्र ही नियमावली भेजने की व्यवस्था करें, ताकि इस संबंध में इस कार्यालय में उचित कार्यवाही की जा सके।

आपका
ह.
(कमल प्रसाद द्विवेदी)

श्री नायडू
संयुक्त सचिव, वित्त मंत्रालय
भारत सरकार, नई दिल्ली।

3. **कार्यालय ज्ञापन**—कार्यालय ज्ञापन का प्रयोग सरकार के विभिन्न मंत्रालयों के बीच आपस में संपर्क करने एवं सूचना देने के अलावा मंत्रालयों के अधीन कार्यालयों, विभागों तथा अधिकारियों के पास कोई सूचना भेजने के लिए किया जाता है। इस तरह के पत्र अन्य पुरुष में लिखे जाते हैं।

उदाहरण

भारत सरकार
रक्षा मंत्रालय
नई दिल्ली

सं. 10/12/75

दिनांक 10 नवम्बर 2015

**विषय:** राष्ट्रीय सैनिक स्कूल पूना में हिन्दी की पाठ्य-पुस्तकों का अभाव।

इस मंत्रालय के दिनांक 2 सितंबर, 2011 के पत्र संख्या 4/11/70 के संदर्भ में अधोहस्ताक्षरी को यह निवेदन करने का निर्देश हुआ है कि रक्षा मंत्रालय द्वारा संचालित सैनिक स्कूलों में शिक्षा मंत्रालय द्वारा तैयार की गई हिन्दी की पाठ्य-पुस्तकें समान रूप से निर्धारित की गई हैं। इस मंत्रालय को यह सूचना मिली है कि राष्ट्रीय सैनिक स्कूल, पूना को वे पाठ्य-पुस्तकें अभी प्राप्त नहीं हुई हैं।

अतः अनुरोध किया जाता है कि सैनिक स्कूल, पूना को हिन्दी की पाठ्य-पुस्तकें यथाशीघ्र भिजवाने की व्यवस्था की जाए, ताकि जनवरी में स्कूल खुलते ही छात्रों को पुस्तकें प्राप्त हो सकें।

ह.

भाग चंद

अवर सचिव, भारत सरकार

सेवा में

अपर सचिव, शिक्षा मंत्रालय

भारत सरकार, नई दिल्ली।

4. **ज्ञापन-** सरकारी कार्यालयों में ज्ञापन का प्रयोग कर्मचारियों की नियुक्तियों, अधिकारियों की नियुक्तियों, तैनातियों, स्थानांतरण, वेतनवृद्धि, प्रार्थनापत्रों, याचिकाओं, आवेदन-पत्रों की स्वीकृति के लिए किया जाता है। इसके अलावा, कार्यालयों को आवश्यक आदेश आदि भेजने के लिए भी ज्ञापन का प्रयोग किया जाता है। इसमें संबोधन और स्वनिर्देश नहीं होता तथा ज्ञापन के अंत में भेजने वाले का पद व हस्ताक्षर होते हैं।

**उदाहरण**

**भारत सरकार**

**स्वास्थ्य मंत्रालय**

**क्रम संख्या 27/13/86 अ.ब.** **नई दिल्ली 23 जून, 2015**

**विषयः प्राथमिक पाठशालाओं के छात्रों के स्वास्थ्य की जांच संबंधी व्यवस्था।**

भारत सरकार के स्वास्थ्य मंत्रालय ने यह निर्णय लिया है कि सभी राज्यों में प्राथमिक शाला में पढ़ने वाले छात्रों के स्वास्थ की जांच की जाए।

इसीलिए सभी राज्य सरकारों से यह अनुरोध है कि वे इस दिशा में शीघ्र कदम उठाएं।

पी.एल. माथुर

अवर सचिव, भारत सरकार

**प्रतिलिपि प्रेषितः**

भारत की सभी राज्य सरकारों को।

5. **अनुस्मारक-** जब किसी मंत्रालय या कार्यालय से, पूर्व पत्र में मांगी गई सूचना, निर्णय या टिप्पणी समय पर प्राप्त नहीं होती उस समय अनुस्मारक का प्रयोग किया जाता है। अनुस्मारक सरकारी और अर्ध-सरकारी पत्र के रूप में लिखा जा सकता है।

**उदाहरण 1**

**अ.स. पत्र संख्या 6/12/24**

**दिनांक 6 जुलाई 2015**

**सेंट्रल बैंक ऑफ इंडिया**

प्रधान कार्यालय, मुम्बई

**विषय** : बैंक की हिन्दी प्रयोग रिपोर्ट संबंधी

**सेवा में,**
श्री विकास गुप्ता
हिन्दी अधिकारी
क्षेत्रीय कार्यालय

महोदय,

हम आपका ध्यान इस कार्यालय के दिनांक 4 दिसंबर, 2011 के परिपत्र सं./प्र./हिन्दी/100 की ओर आकृष्ट कराते हैं, जिसमें बैंक की हिन्दी प्रयोग संबंधी रिपोर्ट तुरंत भेजने के निर्देश दिए गए थे। हमें खेद है कि आपके अंचल क्षेत्र की रिपोर्ट हमें अभी तक प्राप्त नहीं हुई है। कृपया उक्त रिपोर्ट तुरंत भेज दें।

भवदीय
संजय त्यागी
वरिष्ठ हिन्दी अधिकारी

**उदाहरण 2 (ज्ञापन)**

**संख्या-च-403/28/78** **दिनांक 3 मई, 2015**
**रेल सेवा आयोग**
**दक्षिण क्षेत्र, चेन्नई**

**सेवा में,**
**श्री विश्वनाथ शास्त्री**
**भरतपुर, राजस्थान**

**विषय:** टी. एक्स. आर. पद का चुनाव।

श्री विश्वनाथ शास्त्री को सूचित किया जाता है कि वे जनवरी, 2015 में ली गई उक्त पद की चयन-परीक्षा में उत्तीर्ण घोषित किए गए हैं, अत: वे 20 मई, 2015 को प्रात: 10.00 बजे डॉक्टरी जांच के लिए इस कार्यालय में उपस्थित हों।

विकास शर्मा
उपाध्यक्ष,
रेलवे सर्विस कमीशन

6. **परिपत्र**- परिपत्र के माध्यम से मंत्रालयों व विभिन्न विभागों द्वारा उनके अधीनस्थ कार्यालयों, विभागों तथा अनुभागों को सूचना, निर्देश और आदेश भेजे जाते हैं।

**उदाहरण 1.**

ओरिएंटल बैंक ऑफ कॉमर्स
विभागीय कार्यालय

दिनांक 25 मार्च, 2015

सेवा में,

शाखा प्रबंधक,
ओरिएंटल बैंक ऑफ कॉमर्स

**विषय:** प्रस्तावित शाखाओं के लिए कर्मचारियों से स्थानांतरण के आवेदन-पत्र की मांग।

सूचित किया जाता है कि निम्नलिखित स्थानों पर हमारे बैंक की शाखाएं खोलने का प्रस्ताव है-

1. हबीबगंज (लखनऊ)
2. सीतापुर
3. कटरा रामजस
4. भाटापारा

अत: बैंक के कार्यरत कर्मचारियों से टंकक, लिपिक, खजांची तथा अधीनस्थ पदों के लिए आवेदन-पत्र आमंत्रित किए जा रहे हैं। इच्छुक कर्मचारी अपना आवेदन-पत्र शाखा-प्रबंधक के माध्यम से निम्नलिखित बातों की जानकारी देते हुए भेज सकते हैं-

1. आवेदक का नाम व पता।
2. बैंक में सेवा आरंभ की तिथि।
3. वर्तमान कार्य का स्वरूप।
4. आहरित विशेष भत्ते, यदि हो।
5. चुने गए स्थानों के क्रम।

आवेदन पत्र इस कार्यालय में दो सप्ताह के अन्दर पहुंच जाने चाहिए।

भवदीय
सहायक विभागीय प्रबंधक
(प्रशासन)

**उदाहरण 2**

**संख्या मा./परि./100** नई दिल्ली, 28 जून 2015
भारतीय डाक तार विभाग,
डाक तार महानिदेशालय

7. **कार्यालय आदेश**-कार्यालय आदेश का प्रयोग किसी अधिकारी के द्वारा मंत्रालय, विभाग, प्रभाग, अनुभाग एवं कार्यालय के कर्मचारियों के लिए संबंधित कार्य करने के लिए किया जाता है। अधिकारी द्वारा दिए गए आदेशों का पालन करना संबंधित कर्मचारियों का कर्तव्य हो जाता है। अधिकतर ये कार्यालय आदेश कर्मचारियों को वेतन-वृद्धि जारी करने, पदोन्नति करने या उसे रोकने के लिए, छुट्टी मंजूर करने के लिए, प्रयोग किए जाते हैं।

उदाहरण-

भारत सरकार
रेल मंत्रालय
नई दिल्ली

क्रम संख्या 100/1

दिनांक 10 जुलाई 2015

**कार्यालय आदेश**

भारतीय रेल सेवा में अधीक्षक के पद पर नियुक्त डॉ. नरेंद्र को, उनकी पदवृद्धि पर दिनांक 1 अगस्त, 2010 से रेल मंत्रालय के सचिवालय से स्थानापन्न रूप में प्रशासन अधिकारी के पद पर नियुक्त किया गया है। अगले आदेश तक उनकी नियुक्ति सामान्य अनुभाग 'अ' में कर दी गई है।

रीना कुमारी
अपर सचिव, भारत सरकार

**प्रतिलिपि निम्नलिखित को सूचनार्थ भेजी जाती है-**

1. मंत्रालय के सभी विभाग, अनुभाग।
2. डॉ. सुरेशचंद्र, प्रशासन अधिकारी।
   सामान्य अनुभाग 'अ'

8. **सूचना**—कई बार सरकार जन-साधारण को या किन्हीं संबंधित व्यक्तियों को सूचित करने के लिए, नौकरी हेतु रिक्त स्थानों की, नीलामी की, निविदा की, न्यायालयीन नोटिस की, कार्यालय के स्थान परिवर्तन की सूचनाएं प्रायः समाचार-पत्रों में प्रकाशित करवाती है। लेकिन इन सूचनाओं का रूप प्रेस नोट व प्रेस विज्ञप्तियों से बिल्कुल अलग होता है। इसमें सूचना प्रकाशित करने वाले कार्यालयों का नाम और अंत में हस्ताक्षरकर्ता का नाम व पता लिखा जाता है। ये सूचनाएं संक्षिप्त, स्पष्ट व सुनिश्चित होती हैं।

**उदाहरण**

**दिनांक 8 जनवरी 2015**

**महाराष्ट्र सरकार**
**(पुलिस विभाग)**

**टेंडर सूचना**

महाराष्ट्र राज्य पुलिस विभाग द्वारा पुलिस कर्मचारियों की वर्दियां बनवाने के लिए स्वीकृत ठेकेदारों से 30 जनवरी, 2015 को दोपहर 2.00 बजे तक मुहर बंद टेंडर आमंत्रित किए जाते हैं।

विशिष्ट विवरणों की सूची प्रति सेट 5 रुपए अदा करने पर अधोहस्ताक्षरी के कार्यालय से प्राप्त की जा सकती है।

यदि कोई अन्य जानकारी अपेक्षित हो तो ठेकेदार 29 जनवरी, 2015 तक प्रतिदिन दोपहर 2.00 बजे से 3.00 तक अधोहस्ताक्षरी से व्यक्तिगत रूप से मिल सकते हैं।

ह.

पुलिस अधीक्षक

महाराष्ट्र राज्य पुलिस

9. **प्रेस विज्ञप्ति**- सरकार के किसी भी निर्णय को विस्तृत रूप में प्रचारित करने के लिए प्रेस विज्ञप्ति या प्रेस नोट का प्रयोग किया जाता है। इन्हें समाचार-पत्रों में ही प्रकाशित किया जाता है। प्रेस विज्ञप्ति किसी विषय पर सरकार का नपा-तुला बयान है और प्रेस नोट सरकार की ओर से दी जाने वाली जानकारी है।

उदाहरण

सोमवार, दिनांक 2 अगस्त, 2015 को सायंकाल 5.00 बजे से पूर्व प्रसारित, प्रकाशित न किया जाए।

**प्रेस विज्ञप्ति**

**विषयः भारत तथा पाकिस्तान के बीच राजनैतिक संबंध।**

भारत सरकार और पाकिस्तान की सरकार इस बात पर सहमत हो गई हैं कि दोनों के बीच मित्रतापूर्ण संबंध स्थापित किए जाएं। आशा है कि इस व्यवस्था से दोनों देशों में पारस्परिक संबंध और भी अधिक सुदृढ़ हो जाएंगे, जो दोनों के लिए लाभकारी होंगे।

मुख्य सूचना अधिकारी, प्रेस ब्यूरो, नई दिल्ली को प्रेस विज्ञप्ति जारी करने तथा उसे विस्तृत रूप से प्रसारित करने के लिए प्रेषित।

**ह.**

**ललित पांडे**

**अपर सचिव, भारत सरकार**

**विदेश मंत्रालय**

**नई दिल्ली,**

**दिनांक 15 जुलाई 2015**

(इसके प्रारंभ में यह निर्देश होता है कि इसे कब छापा जाए। यह निर्देश नकारात्मक होता है)

10. **अन्य कार्यालयों के पत्र**–सरकारी कार्यालयों के अलावा अन्य कार्यालय भी होते हैं। इनमें बस इतना ही अंतर होता है कि सरकारी कार्यालयों के पत्रों की एक निश्चित रूपरेखा होती है, जबकि अन्य कार्यालयों के पत्रों को लिखते समय आवश्यकतानुसार छूट ली जा सकती है। अन्य कार्यालयों में– सेवाभावी संस्थाओं के कार्यालय, विश्वविद्यालयों व महाविद्यालयों के कार्यालय तथा व्यावसायिक प्रचार/विस्तार/शतों आदि के लिए स्थापित किए गए कार्यालय आते हैं। इनमें अधिकतर सरकारी पत्र, अर्ध-सरकारी पत्र, ज्ञापन, परिपत्र, सूचना, तार आदि का प्रयोग किया जाता है।

उदाहरण 1

दिनांक 12 जून 2011

**विद्या बुक्स**

**(विद्यालयी एवं महाविद्यालयी पुस्तकों के वितरक व विक्रेता)**

58, नेताजी सुभाषचन्द्र मार्ग,

तार: विद्या, अहमदाबाद

दूरभाष 3517

सेवा में,

श्री सन्मार्ग प्रकाशन

दिल्ली-110007

प्रिय महोदय,

कृपया लौटती डाक से अपने प्रकाशनों का नवीनतम सूचीपत्र भिजवाने का कष्ट करें, साथ ही अपनी व्यावसायिक शर्तें भी लिखें। यदि आपकी शर्तें संतोषजनक और आकर्षक पाई गई तो आपके प्रकाशन की पुस्तकें हम अपनी दुकान में विक्रय के लिए रखना चाहते है।

आपका पत्र मिलने पर आपको पुस्तकों के लिए आदेश भेजा जाएगा।

धन्यवाद।

भवदीय

व्यवस्थापक

विद्या बुक्स

अहमदाबाद

## 2. व्यावसायिक पत्र

पत्र लिखना अपने आप में एक कला है। यह प्राचीन समय से चली आ रही है, व्यावसायिक जगत में मौखिक शब्दों की अपेक्षा लिखित शब्दों का महत्व अधिक है, क्योंकि व्यावसायिक क्षेत्रों में पत्र अपना अलग ही महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं। अत: इस क्षेत्र में भी पत्र लिखने की अपनी ही एक कला होती है, ऐसे पत्र बड़ी सूझ-बूझ के साथ लिखे जाते हैं। इस सूझ-बूझ के बिना हम अपनी समस्या और कार्य सही रूप में नहीं करवा सकते। व्यावसायिक क्षेत्र में मूल्य-पत्र, विज्ञापन-पत्र, क्रयादेश-पत्र, विक्रय-पत्र, अनुरोध-पत्र एवं निविदा पत्र आदि आते हैं। वर्तमान समय में व्यावसायिक क्षेत्र में पत्रों का अपना अलग ही महत्व है।

पत्र कई प्रकार के होते हैं। व्यक्ति, संदर्भ, विषय और क्षेत्र के अनुसार पत्रों को लिखने का तरीका भी अलग-अलग होता है। व्यावसायिक पत्रों को लिखते समय निम्नलिखित बातों का ध्यान रखना चाहिए–

(क) **प्रेषक का नाम व पता**–व्यावसायिक पत्रों में सबसे ऊपर प्रेषक का नाम व पता लिखा होता है, जिससे पत्र पाने वाले को पत्र देखते ही पता चल जाता है कि पत्र किसने भेजा है तथा कहा से आया है। प्रेषक का नाम व पता ऊपर दाएं कोने में लिखा जाता है। साथ में फोन नं. फैक्स नंबर तथा ई-मेल आदि भी लिखा जाता हैं।

(ख) **पत्र पाने वाले का नाम व पता**– पत्र के बायीं ओर पत्र प्राप्त करने वाले का नाम व पता लिखा जाता है तथा कभी-कभी उसका केवल नाम या पदनाम या दोनों भी दिए जाते हैं। जैसे-नाम, पदनाम, कार्यालय का नाम, स्थान, जिला, शहर व पिन कोड आदि।

(ग) **विषय संकेत**- व्यावसायिक पत्रों में यह आवश्यक है कि पत्र पाने वाले के नाम व पते के पश्चात बायीं ओर जिस विषय में पत्र लिखा गया हो, उस विषय को संक्षेप में लिखा जाए, ताकि जिससे पत्र को देखते ही पता चल जाए कि पत्र किस विषय में है और उसे आगे की कार्यवाही के लिए उससे संबंधित अधिकारी के पास भेजा जा सके। उदाहरण के लिए-विषय-नियुक्ति पत्र।

(घ) **संबोधन**–पत्र भेजने वाला सबसे पहले, पत्र पाने वाले के लिए आवश्यकतानुसार विभिन्न प्रकार के संबोधन सूचक शब्दों का प्रयोग करता है। जैसे- प्रिय महोदय, या प्रिय महोदया, माननीय/मानवीय, महामहिम आदि।

(ङ) **पत्र की मुख्य सामग्री**– संबोधन के बाद हम पत्र के मूल विषय पर आते हैं। यह नये पैराग्राफ से शुरू किया जाता है। यदि व्यावसायिक पत्रों में किसी विषय पर पहले पत्राचार हो चुका हो या हो रहा हो तो उसके संदर्भ में सबसे पहले संकेत दिया जाना चाहिए; जैसे- उपर्युक्त विषय पर कृपया दिनांक का अपना पत्र सं. देखें। कोई भी नया तथ्य, नवीन तर्क, नई मांग तथा नया स्पष्टीकरण अलग अनुच्छेद से ही शुरू करना चाहिए। व्यावसायिक पत्रों में विषयों को एक-दूसरे से अलग रखना चाहिए, आपस में मिलाना नहीं चाहिए।

(च) **अभिव्यक्ति शैली**- हमारे पत्र लिखने की शैली स्पष्ट होनी चाहिए, इसकी भाषा स्पष्ट, सरल व सहज होनी चाहिए। वाक्य छोटे होने चाहिए। पत्र पूरी तरह स्पष्ट होना चाहिए, जिससे प्राप्त करने वाले के मन में संदेह न रहे। अगर यह सब बातें पत्र में नहीं होंगी तो पत्र प्राप्त करने वाला पत्र पढ़कर संतुष्ट नहीं हो पाएगा। इससे उसे नाराजगी भी हो सकती है।

(छ) **समापन सूचक शब्द**– पत्र समाप्त होने पर भेजने वाला अपने हस्ताक्षर से पहले प्राप्तकर्ता से अपने संबंध के विषय में कुछ शब्दों का प्रयोग करता है। जैसे- आपका आज्ञाकारी, विनीत, शुभाकांक्षी आदि। व्यावसायिक पत्रों में अधिकतर 'भवदीय' शब्द का प्रयोग होता है। आज के समय में ऐसे पत्रों में बाएं कोने में यह सब लिखा जाता है। पहले दाहिने तरफ लिखा जाता था।

(ज) **हस्ताक्षर और नाम**– पत्र समाप्ति के बाद नीचे भेजने वाले के हस्ताक्षर और फिर उसका पूरा नाम कोष्ठक में दिया जाता है। कभी-कभी बड़े अधिकारी की ओर से कोई अन्य अधिकारी या कर्मचारी पत्र पर हस्ताक्षर करता है तो ऐसे में 'कृते' प्राचार्य, 'कृते' निदेशक आदि लिखा जाता है।

(झ) **संलग्नक**– मूल पत्र के साथ कभी-कभी जरूरी कागजात भी भेजने पड़ते हैं। उन्हें ही पत्र में 'संलग्न' या संलग्नक कहते हैं। 'संलग्नक' भवदीय शब्द के ठीक बायीं ओर लिखा जाता है। यहां पर 'संलग्न पत्र' शीर्षक लिखकर सब पत्रों या कागजों का विवरण संकेत के रूप में लिखा जाता है। ये संकेत संख्या 1, 2, 3 के द्वारा क्रमशः देनी चाहिए।

(ञ) **पुनश्च**– पुनश्च शब्द का अर्थ होता है- 'एक बार पुनः'। कभी-कभी पत्र लिखते समय कोई महत्वपूर्ण बात छूट जाती है। पत्र पूरा टाइप होकर आ जाता है। तब जो बात छूट गई है, उसको लिखने के लिए समापनसूचक शब्द, हस्ताक्षर, संलग्नक आदि लिखने के बाद अंत में सबसे नीचे 'पुनश्च' शीर्षक देकर छूटा हुआ अंश लिख दिया जाता है, फिर एक बार अपने हस्ताक्षर कर दिए जाते हैं।

## व्यावसायिक पत्र का नमूना

रबर स्टाम्प

प्रेषक का नाम:
पद नाम
पत्र संख्या/संदर्भ:.....

पता
फैक्स संख्या .....
टेलीफोन नं. .....
दिनांक:.....

पाने वाले का नाम
पद नाम
कार्यालय
पूरा पता

**विषय:** .....

**प्रिय महोदय/महोदया**

**पत्र की विषय-वस्तु**

आभार या धन्यवाद ज्ञापन

समापन सूचक शब्द

संलग्नक: 1.
2.
3.

भवदीय

हस्ताक्षर

(पूरा नाम)

पद नाम

सूचनार्थ प्रतिलिपि

1. नाम व पता.....
2. नाम व पता .....

पुनश्च: छूटा हुआ अंश लिखना

हस्ताक्षर

ऐसे पत्रों का संबंध व्यक्ति के अपने व्यवसाय से संबंधित होता है। एक व्यापारी/व्यापारिक संस्था की ओर से दूसरी व्यापारी संस्था के नाम लिखे जाने वाले पत्र को व्यावसायिक पत्र

कहते हैं। इसमें व्यापारी माल भेजने संबंधी निर्देश, नया माल मंगवाने के लिए, राशि के भुगतान के विषय में जानकारी देता है। इनकी भाषा सरल, सहज व स्पष्ट होती है।

व्यावसायिक पत्रों को हम निम्नलिखित भागों में बांट सकते हैं-

1. दर (मूल्य) जानने के लिए।
2. मूल्य-सूची मंगाने के लिए।
3. वस्तु-विशेष का नमूना मंगाने के लिए।
4. विक्रय-प्रस्ताव संबंधी पत्र।
5. क्रयादेश संबंधी पत्र।
6. व्यापारिक संदर्भ संबंधी पत्र।
7. भुगतान संबंधी पत्र।
8. बीमा-पत्र।
9. बैंक पत्र।
10. निविदा पत्र।
11. एजेंसी लेन-देन संबंधित पत्र।

व्यावसायिक पत्रों में संबोधन के लिए महोदय, प्रिय महोदय, मान्यवर व श्रीमान आदि का प्रयोग किया जाता है।

## व्यावसायिक पत्र

## बिजली के बिल की शिकायत संबंधी पत्र

पंजीकृत

51/10, शांति नगर, मेरठ

दिनांक -20-5-2015

सेवा में
अधिशासी अभियंता
मेरठ बिजली सप्लाई कंपनी
(वितरण शाखा)
मेरठ।

महोदय,

**विषय-मीटर-संख्या एम. एल. 1050**

निवेदन है कि इस बार उक्त मीटर संख्या के संबंध में मेरे पास अत्यधिक बढ़ा हुआ बिल भेजा है। पिछले दस वर्षों के अभिलेख द्वारा स्पष्ट हो जाएगा कि मेरा बिल 350 रुपए से अधिक कभी नहीं आया। परंतु इस बार के बिल की देय धनराशि 900 रुपए से अधिक दिखाई गई है। मेरी समझ में नहीं आता, इतना बिल क्यों भेजा गया है।

आपसे निवेदन है कि आप इस मामले में गंभीरतापूर्वक आवश्यक जानकारी प्राप्त करके पता लगाएं कि किस प्रकार से लापरवाही करके उपभोक्ता को परेशान करने का प्रयास किया गया है।

आशा है, आप आवश्यक कार्यवाही करके संशोधित बिल भिजवाने की कृपा करेंगे। मूल बिल संलग्न है।

सधन्यवाद

भवदीय

ह. महीपाल सिंह

संलग्नक-1

बिजली का मूल बिल

कुछ अन्य पत्रों का विवरण भी यहां दिया जा रहा है–

## नियुक्ति स्वीकृति-पत्र

**सेवा में,**

**प्रबंधक,**

**सर्वश्री जिंदल एंड कंपनी,**

**लाल डिग्गी सरदार शहर।**

25/15 नागर कॉलोनी

खतौली

दिनांक 15 मई, 2015

महोदय,

मेरी नियुक्ति की स्वीकृति संबंधी आपका दिनांक 28.6.2015 का पत्र संदर्भ एल/252/2014-15 प्राप्त हुआ। मैं दिनांक 3.7.2015 को पूर्वाह्न कार्यभार संभालने हेतु आपके कार्यालय में उपस्थित होऊंगा।

सधन्यवाद

भवदीय

ह.

सौरभ मिश्रा

## व्यावहारिक पत्र

पुत्र का माता के नाम पत्र

दिनांक-5 अप्रैल, 2015

बी.आर. अंबेडकर होस्टल

महाराजा कालेज, दिल्ली

आदरणीय माताजी,

सादर चरण स्पर्श।

आपका पत्र मुझे समय पर मिल गया था, लेकिन विश्वविद्यालय परीक्षा में व्यस्त होने के कारण मैं पत्र का उत्तर तुरंत नहीं दे पाया। मेरी चिंता बिलकुल भी न करें, मैं ठीक प्रकार से हूं। अब मेरा स्वास्थ्य भी ठीक है। यहां मेरी पढ़ाई ठीक चल रही है। सभी प्रोफेसर अच्छे

और छात्रों के शुभचिंतक हैं। वे खूब मन लगाकर पढ़ाते हैं और छात्रों की समस्याओं पर भी अच्छी तरह से ध्यान देते हैं।

होस्टल के वार्डन तो हम लोगों की फिक्र अपने बच्चों की तरह करते हैं। वे हमेशा इस बात का ध्यान रखते हैं कि छात्रों को किसी प्रकार का कष्ट न हो। मेरे कमरे का साथी भी बहुत अच्छा है और वह जयपुर का रहने वाला है। वहां उसके पिताजी का सोने-चांदी का कारोबार है। उसका व्यवहार मेरे प्रति भाई जैसा है। सायंकाल को हम लोग विश्वविद्यालय के क्रीड़ा मैदान पर हॉकी और वॉलीबाल खेलते हैं। विश्वविद्यालय की हॉकी की टीम में सदस्य के रूप में मेरा चयन हो गया है। टीम शीघ्र ही अंतर-विश्वविद्यालयी हॉकी प्रतियोगिता में भाग लेने के लिए कोलकाता जाएगी। आप आशीर्वाद दें कि हमारी टीम विजयी होकर लौटे। मैं दशहरे की छुट्टियों में घर आऊंगा।

आप अपने स्वास्थ्य का ध्यान रखें तथा पत्र का उत्तर शीघ्र देने की कृपा करें। गामू एवं राजी को आशीर्वाद। पिताजी को चरण स्पर्श।

आपका प्यारा बेटा

शिवाश

## परीक्षा में असफल हो जाने पर भाई को धैर्य बंधाने हेतु पत्र

125-डी, साकेत, जयपुर

दिनांक -3 मई, 2015

प्रिय चिरंजीव अनिल,

शुभ आशीर्वाद।

आशा है, तुम सकुशल होगे। मुझे पिताजी द्वारा भेजे गए पत्र से ज्ञात हुआ कि तुम विश्वविद्यालय की मुख्य परीक्षा में अनुत्तीर्ण हो गए हो। यह जानकर मुझे बहुत दु:ख हुआ। मैं कभी सोच भी नहीं सकता था कि तुम विश्वविद्यालय की परीक्षा में फेल हो सकते हो। अवश्य ही कोई विशेष कारण रहा होगा जो तुम उत्तीर्ण नहीं हो पाए।

खैर, जो हुआ उसे अब भूल जाओ। दु:खी होने की आवश्यकता नहीं है। मत भूलो कि 'गिरते हैं शहसवार ही मैदान-ए-जंग में'। इस बार मैं कुछ और किताबें भेज रहा हूं। विश्वविद्यालय की परीक्षा के फार्म अगले माह निकलने वाले हैं। अभी से पूर्ण मनोयोग के साथ पढ़ाई शुरू कर दो। यदि जरूरत समझो तो ट्यूशन ले लेना। अन्य किसी मदद की आवश्यकता हो तो लिखना। मैं शीघ्र ही एक सप्ताह की छुट्टी लेकर घर आऊंगा। तब इस बारे में विस्तार से बात करेंगे।

पिताजी व माताजी को चरण स्पर्श। सोनू व प्रीति को आशीर्वाद।

सस्नेह

तुम्हारा शुभचिंतक

रंजन गर्ग

## सामाजिक पत्र

### पुरस्कार प्राप्ति पर बधाई पत्र

55/35 रेलवे रोड सहारनपुर

दिनांक-3 अप्रैल, 2015

प्रिय योगेश,

आज के समाचार-पत्र में यह पढ़कर बहुत प्रसन्नता हुई कि तुम्हें अपनी श्रेष्ठ रचना 'क्षितिज के पार' पर वर्ष 2014 का 'साहित्य श्री' पुरस्कार प्रदान करने की घोषणा भाषा साहित्य सम्मेलन द्वारा की गई। मेरे विचार से हिन्दी-साहित्य जगत में यह श्रेष्ठ पुरस्कार है। इसे प्राप्त करना वास्तव में असामान्य प्रतिभा का द्योतक है। इस दृष्टि से यह स्पृहणीय भी है। यह तुम्हारे अनवरत अध्ययन एवं अध्यवसाय का सुफल है। इसके लिए हार्दिक बधाई स्वीकार करो। ईश्वर से प्रार्थना है कि भविष्य में तुम्हें इससे भी उच्चतर श्रेणी का पुरस्कार व सम्मान मिले।

तुम्हारे इस प्रकार पुरस्कृत होने पर हमारे समस्त मित्र एवं शुभचिंतक अपने आपको गौरवान्वित अनुभव करते हैं।

हिन्दी के प्रति की गई तुम्हारी सेवाएं चिरस्मणीय रहेंगी। हमारी हार्दिक कामना है कि तुम अधिकाधिक उत्साह से मां भारती के भंडार को भरने में संलग्न रहो।

तुम्हारा शुभेषी

मनोज

## वैवाहिक पत्र

मान्यवर,

श्रीमती एवं श्री.....

20/2, शास्त्री नगर, मेरठ

अपनी सुपुत्री

सौभाग्याकांक्षिणी.....

एवं

चिरंजीव.....

(सुपुत्र श्रीमती एवं श्री.....)

के

विवाह के शुभ अवसर पर

आपको सपरिवार सादर निमंत्रित करते हैं। कृपया कार्यक्रमानुसार सपरिवार सम्मिलित होकर उत्सव की शोभा बढ़ाएं और नव-युगल को आशीर्वाद प्रदान कर हमें कृतार्थ करें।

### वैवाहिक कार्यक्रम

दिनांक .....

स्वागत बारात.....6 बजे सायं

वर स्वागत ..... 10 बजे रात्रि

दिनांक .....

विदा.....तारों की छांव में

उत्तराकांक्षी

.....

.....

**दर्शनाभिलाषी**

.....

.....

## इकाई 5 अनुवाद –I

### 5.0

प्रयोजनमूलक हिन्दी आज की सबसे बड़ी भाषिक आवश्यकता है। प्रयोजनमूलक एक पारिभाषिक शब्द है। आधुनिक समय में विज्ञान, प्रौद्योगिकी, विधि और सरकारी कार्यालयों में भाषा प्रयोग का दायरा बहुत अधिक बढ़ा, जिसके कारण हिन्दी भाषा में प्रयोग के स्तर पर परिवर्तन की आवश्यकता महसूस की गई, और उसी के फलस्वरूप प्रयोजनमूलक हिन्दी का स्वरूप सामने आया। हिन्दी के इस नये स्वरूप प्रयोजनमूलक हिन्दी के मुख्य तीन तत्व हैं– पारिभाषिक शब्दावली, अनुवाद और भाषिक संरचना।

हम जिस दुनिया में रहते और स्वयं को अभिव्यक्त करते हैं, उस दुनिया की हमारी समझ भाषा और ज्ञान की परम्परा से बनती है। जैसे–जैसे दुनिया का स्वरूप परिवर्तित होता है, वैसे–वैसे उसे जानने–समझने की प्रविधि भी बदलती जाती है। दुनिया का स्वरूप अत्यधिक विस्तृत है। इसलिए इस दुनिया में भाषा और ज्ञान के स्तर पर भी अत्यधिक विविधता है। उन सबको जानना–समझना हमारी प्रगति के लिए आवश्यक है। अतः दुनिया भर की भाषाओं में उपलब्ध ज्ञान को समझने के लिए अनुवाद एक श्रेष्ठ माध्यम है। अनुवाद के द्वारा ही हम भिन्न–भिन्न भाषाओं में उपलब्ध ज्ञान को समझते हैं। आज दुनिया भर में अनुवाद की महत्ता बढ़ती जा रही है। ज्ञान, विज्ञान, विधि और न्यायालय, सरकारी

कार्यालय, शिक्षा, जनसंचार, साहित्य, संस्कृति, व्यापार और अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध के क्षेत्र में आज अनुवाद की अनिवार्यता एवं आवश्यकता को भुलाया नहीं जा सकता।

इसी प्रकार प्रयोजनमूलक हिन्दी के दूसरे तत्व 'पारिभाषिक शब्दावली' को देखा–समझा जा सकता है। पारिभाषिक शब्दावली को अंग्रेजी में 'टेक्निकल टर्मिनालॉजी' कहा जा सकता है। पारिभाषिक शब्दावली विशेष क्षेत्र में विशिष्ट एवं निश्चित अर्थ रखती है। पारिभाषिक शब्दावली किसी विशेष क्षेत्र की संकल्पनाओं और विचारों को सटीक अर्थ देने वाली होती है। पारिभाषिक शब्दावली निश्चित अर्थों में पारिभाषित होती है। इसकी सीमा बंधी होती है। ज्ञान के क्षेत्र मे पारिभाषिक शब्दावली का महत्व निर्विवाद है। पारिभाषिक शब्दावली द्वारा ही हम किसी विशिष्ट विचार, अर्थ को कम से कम शब्दों में व्यक्त कर पाते हैं। आज साहित्य, मानविकी, समाज विज्ञान, प्रौद्योगिकी, विज्ञान, कार्यालय, प्रशासन, जनसंचार, चिकित्सा, ज्योतिष, अंतरिक्ष, कम्प्यूटर, विधि और संगीत आदि क्षेत्रों में पारिभाषिक शब्दावली का सफलतापूर्वक प्रयोग हो रहा है।

प्रस्तुत इकाई में हम अनुवाद और पारिभाषिक शब्दावली के सन्दर्भ में विस्तार से समझेंगे साथ ही अनुवाद और पारिभाषिक शब्दावली के प्रयोग एवं महत्व से भी परिचित होंगे।

## 5.1 इकाई के उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप–

- अनुवाद की परिभाषा, अर्थ और स्वरूप से परिचित हो पाएंगे;
- अनुवाद के प्रकार और प्रक्रिया को जान पाएंगे;
- ज्ञान के सन्दर्भ में अनुवाद के महत्व को समझ पाएंगे;
- पारिभाषिक शब्दावली की परिभाषा, अर्थ एवं स्वरूप से परिचित हो पाएंगे;
- पारिभाषिक शब्दावली के प्रयोग और महत्व को समझ पाएंगे।

## 5.2 अनुवाद : सामान्य परिचय

अनुवाद भाषा की एक रचनात्मक प्रक्रिया है। आज जिस तरह से सारी दुनिया एक दूसरे के समीप आ रही है उसमें अनुवाद का महत्व बढ़ता जा रहा है। एक दूसरे की संस्कृति, इतिहास, भाषा और साहित्य से परिचित होने के लिए अनुवाद की आवश्यकता पड़ती है। भूमंडलीकरण की प्रक्रिया आरम्भ होने के बाद तो दुनिया के कई सारे देश एक दूसरे के साथ बड़े पैमाने पर व्यापारिक सम्बन्ध बना रहे हैं, जिसके लिए एक दूसरे की भाषा, सांस्कृतिक परम्पराओं आदि को जानने–समझने के लिए भी अनुवाद ही सबसे सशक्त माध्यम बन कर उभरा है।

भारत बहुभाषा–भाषी और कई संस्कृतियों का देश है। आपसी विभिन्नता के बाद भी प्राचीनकाल से ही भारतीय भाषाओं एवं संस्कृतियों में आदान–प्रदान अनुवाद के माध्यम से

चलता रहा है। केवल भारतीय साहित्य की बात करें तो पौराणिक महाकाव्यों में रामायण और महाभारत को लगभग सभी संस्कृतियों एवं भाषाओं में व्यापक प्रतिष्ठा प्राप्त है। राम–कथा का मूल आधार वाल्मीकि रामायण है। वाल्मीकि रामायण से ही राम–कथा को दूसरी भाषाओं और संस्कृतियों ने ग्रहण किया। जैसे, कम्ब रामायण (तमिल), असमिया रामायण (असम), पंजाबी रामायण (पंजाबी), रंगनाथ रामायण (तेलुगु) तथा अध्यात्म रामायण के आधार पर अध्यात्म रामायणम् (मलयालम), नेपाली रामायण (नेपाली) तथा रामकथा के अन्य विकसित रूपों के आधार पर बंगला रामायण (बंगला), उड़िया रामायण (उड़िया), तोखे रामायण, भावार्थ रामायण आदि ग्रन्थ लिखे गये। इसी तरह कृष्ण कथा को भी विभिन्न भारतीय भाषाओं में लिखा गया है। कृष्ण काव्य का आविर्भाव सबसे पहले तमिल में हुआ। कन्नड़ में 'जगन्नाथ–विजय ग्रंथ' में कृष्ण से सम्बन्धित लीलाओं का वर्णन है। 'कृष्णकीर्तन' कृष्ण काव्य की प्रथम रचना है। उड़िया में 'महाभारत', असमिया में शंकरदेव ने 'कृष्णकाव्य' का प्रचार–प्रसार किया। कृष्ण–कथा और रामकथा की परंपरा भारतवर्ष की लगभग सभी भाषाओं में पायी जाती है। बाह्य रूप–विधान में थोड़ा बहुत अन्तर होते हुए भी विभिन्न भारतीय भाषाओं में लिखे गये कृष्ण और रामकथा आपसी आदान–प्रदान के उदाहरण हैं। एक भाव–भूमि, एक चिन्तन–धारा, एक भक्ति–धारा, एक सांस्कृतिक सूत्र पूरे भारत की एकता को और अधिक मजबूत करती रही है। साहित्य और संस्कृति में एकता का यह सूत्र अनुवाद के द्वारा ही सम्भव हो सका।

प्राचीनकाल में अनुवादक को 'दोभाषिया' कहा जाता था। एक ऐतिहासिक तथ्य सिकन्दर और पोरस के युद्ध के बारे में यह है कि जब पोरस को सिकन्दर के सामने लाया गया तो सिकन्दर ने पोरस से पूछा कि 'आपके साथ कैसा व्यवहार किया जाय?' तो पोरस ने सिकन्दर से कहा कि 'जैसा एक राजा दूसरे राजा के साथ करता है।' इतिहास में दर्ज है कि पोरस के उस जबाब से सिकन्दर इतना प्रभावित हुआ कि वह अपने विश्वविजय के संकल्प को छोड़ वापस यूनान चला गया। इसमें एक रोचक बात यह है कि यूनान के सिकन्दर और भारत के पोरस के बीच यह पूरी बातचीत किस तरह हुई होगी? जबकि दोनों भिन्न भाषा–भाषी थे। तो यह तय है कि यह पूरी बातचीत किसी दोभाषिये (अनुवादक) के माध्यम से ही हुई होगी। इसका अर्थ है कि 326 ईसापूर्व दुनिया का इतिहास और एक विश्वविजेता के संकल्प की दिशा एक दोभाषिये (अनुवादक) ने बदल दी थी।

तात्पर्य यह है कि प्राचीन काल से लेकर आज तक दुनिया को पास लाने, भिन्न–भिन्न भाषाओं, संस्कृति को एक दूसरे से परिचित कराने, वैश्विक स्तर पर व्यापार आदि को संभव बनाने, आज के आधुनिक राष्ट्र–राज्यों के व्यापारिक, कूटनीतिक एवं विदेश नीति को संभव बनाने में अनुवाद का अभूतपूर्व योगदान रहा है, जिसकी जरूरत समय के साथ लगातार बढ़ रही है। उपर्युक्त तथ्यों के आधार पर कहा जा सकता है कि अनुवाद से भावनात्मक एकता, ज्ञान का विस्तार, दूसरी संस्कृतियों से परिचय और सम्बन्ध, सांस्कृतिक एकता, परम्पराओं और संस्कृतियों का संरक्षण, दूसरे राष्ट्रों एवं समुदायों के बारे में जानकारी, व्यापार आदि में विस्तार, शोध एवं अन्वेषण कार्य, दूसरी भाषा में लिखित सिद्धान्तों एवं साहित्य की प्रकृति का ज्ञान एवं अभिव्यक्ति में प्रसार आदि के उद्देश्यों को प्राप्त किया जा सकता है।

## 5.2.1 अनुवाद – अर्थ एवं स्वरूप

'अनुवाद' संस्कृत भाषा का एक यौगिक शब्द है। यह 'वाद' शब्द में 'अनु' उपसर्ग जोड़ने से निर्मित हुआ है। आगे बढ़ने से पहले 'वाद' शब्द की उत्पत्ति को भी समझ लेना चाहिए। संस्कृत के 'वद्' धातु का अर्थ 'बोलना' या 'कहना' होता है। इस 'वद्' धातु में 'घञ्' प्रत्यय जोड़ने पर इसका रूप बदल कर भाववाचक संज्ञा में 'वाद' हो जाता है। 'वद्' धातु का अर्थ 'बोलना या कहना' है तो इसमें 'घञ्' प्रत्यय जुड़ने के बाद 'वाद' बनता है, तो 'वाद' का अर्थ हुआ 'कहने की क्रिया' या 'कही हुई बात'। 'अनु' उपसर्ग यहां अनुवर्तिता के अर्थ में प्रयोग हुआ है। इस तरह 'अनुवाद' का अर्थ हुआ, 'प्राप्त कथन को पुनः कहना' या 'किसी के कहने के बाद कहना' या 'पुनः कथन'। अनुवाद के लिए छाया, टीका, उल्था, भाषान्तर जैसे शब्द भी प्रयोग किये जाते हैं। लगभग सभी भारतीय भाषाओं में अनुवाद होते रहे हैं। भारत की भाषाओं में अनुवाद के स्थान पर अलग–अलग शब्द प्रयोग किये जाते हैं, जैसे – संस्कृत, कन्नड़ और मराठी में 'भाषान्तर', कश्मीरी, सिंधी, उर्दू में 'तर्जुमा', मलयालम में 'विवर्तन' और 'तर्ज्जुमा', तमिल में 'मोशिये चर्य्यु', तेलुगु में 'अनुवादम' और हिन्दी के अतिरिक्त संस्कृत, असमिया, बांग्ला, कन्नड़, ओड़िया, गुजराती, पंजाबी, सिंधी में 'अनुवाद'।

अंग्रेजी में अनुवाद के लिए "Translation" शब्द का प्रयोग किया जाता है। अंग्रेजी का "Translation" शब्द लैटिन भाषा के "trans" एवं "lation" के मिलने से बना है। जिसका अर्थ है– 'पार ले जाना', अर्थात एक जगह से दूसरी जगह पर ले जाना। इसमें पहले को 'स्रोत–भाषा' (Source Language) और दूसरे को 'लक्ष्य–भाषा' (Target Language) कहते हैं। उदाहरण के लिए–

| Source Language | | Target Language |
|---|---|---|
| **मैं भूल चुका था** | **अनुवाद** | I have forgotten |

अनुवाद के अर्थ और स्वरूप को लेकर देश–विदेश के कई विद्वानों ने अपने–अपने विचार प्रकट किये हैं। जिसमें से कुछ प्रमुख विचारों को यहां देखा जा सकता है–

- भोलानाथ तिवारी : 'किसी भाषा में प्राप्त सामग्री को दूसरी भाषा में भाषान्तर करना अनुवाद है, दूसरे शब्दों में– एक भाषा में व्यक्त विचारों को यथा सम्भव और सहज अभिव्यक्ति द्वारा दूसरी भाषा में व्यक्त करने का प्रयास ही अनुवाद है।
- विनोद गोदरे : 'अनुवाद, स्रोत–भाषा में अभिव्यक्त विचार अथवा व्यक्त अथवा रचना अथवा सूचना साहित्य को यथासम्भव मूल भावना के समानान्तर बोध एवं सम्प्रेषण के धरातल पर लक्ष्य–भाषा में अभिव्यक्त करने की प्रक्रिया है।
- देवेन्द्रनाथ शर्मा : 'विचारों को एक भाषा से दूसरी भाषा में रूपान्तरित करना अनुवाद है।'
- जॉन कनिंगटन : 'लेखक ने जो कुछ कहा है, अनुवादक को उसके अनुवाद का प्रयत्न तो करना ही है, जिस ढंग से कहा, उसके निर्वाह का भी प्रयत्न करना चाहिए।'
- कैटफोर्ड : 'एक भाषा की पाठ्य सामग्री को दूसरी भाषा की समानार्थक पाठ्य सामग्री से प्रतिस्थापना ही अनुवाद है।'

- फॉरेस्टन : 'एक भाषा की पाठ्य सामग्री के तत्वों को दूसरी भाषा में स्थानान्तरित कर देना अनुवाद कहलाता है। यह ध्यातव्य है कि हम तत्व या कथ्य को संरचना (रूप) से हमेशा अलग नहीं कर सकते हैं।'

अनुवाद के सन्दर्भ में उपर्युक्त विचारों को देखने के बाद हम यह कह सकते हैं कि अनुवाद एक उद्देश्यपूर्ण सांस्कृतिक कर्म है। जिसमें 'मूल–भाषा' या 'स्रोत–भाषा' में निहित अर्थ, विचार और शैली को यथा सम्भव सहज और सरल रूप में लक्ष्य–भाषा की प्रकृति व शैली के अनुसार परिवर्तित किया जाता है।

## 5.2.2 अनुवाद के क्षेत्र

वर्तमान में वैश्विक स्तर पर अनुवाद की आवश्यकता बहुत बढ़ गयी है। इसलिए अनुवाद का क्षेत्र भी विस्तृत होता जा रहा है। आज लगभग प्रत्येक क्षेत्र में जानकारियों, सूचनाओं के आदान–प्रदान, शिक्षा और ज्ञान के प्रचार–प्रसार के लिए अनुवाद का प्रयोग हो रहा है। उनमें से कुछ क्षेत्र इस प्रकार हैं–

**न्यायालय** : अदालतों की भाषा प्रायः अंग्रेजी होती है। अतः उसको समझने के लिए अनुवाद का प्रयोग किया जाता है।

**सरकारी कार्यालय** : सरकारी कार्यालयों में अधिकतर अधिसूचना, आदेश आदि की भाषा अंग्रेजी होती है, उसे हिन्दी या अन्य किसी भारतीय भाषा में जारी करने के लिए अनुवाद का प्रयोग होता है।

**विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी** : वर्तमान समय में देश में और देश के बाहर विज्ञान और प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में बहुत सारे शोध हो रहे हैं। उनको दुनिया भर के लोगों तक पहुंचाने के लिए अनुवाद का प्रयोग होता है।

**शिक्षा** : ज्ञान के सभी अनुशासनों में अनुवाद की महत्वपूर्ण भूमिका है। अनुवाद के माध्यम से ही शिक्षा का प्रचार–प्रसार होता है।

**जनसंचार** : समाचार–पत्र, रेडियो, दूरदर्शन जनसंचार के लोकप्रिय माध्यम हैं। इन माध्यमों में भी अनुवाद का उपयोग होता है। आज आकाशवाणी एवं दूरदर्शन द्वारा भारत की लगभग 22 भाषाओं में समाचार प्रसारित किये जाते हैं। एक तरह की खबर को 22 भाषाओं में प्रसारित करने का कार्य अनुवाद के द्वारा ही सम्भव हो पाता है।

**साहित्य** : साहित्य की प्रगति और विस्तार के लिए अनुवाद का महत्व असंदिग्ध है। एक भाषा के साहित्य को दूसरी भाषा में प्रस्तुत करने के लिए अनुवाद का प्रयोग होता है। अनुवाद के द्वारा ही 'भारतीय साहित्य' या 'विश्व साहित्य' संकल्पना सम्भव हो पायी है।

**अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध** : वैश्विक स्तर पर एक देश दूसरे देश से अपने आर्थिक, व्यावसायिक एवं कूटनीतिक सम्बन्धों को मजबूत करने के लिए दूतावासों की स्थापना एवं राजदूतों की नियुक्ति करते हैं। इन दूतावासों में सारे काम–काज अनुवाद के ही माध्यम से होते हैं। अनुवाद के द्वारा ही एक देश अपने विचारों एवं नीतियों को दूसरे देश के समक्ष उसकी भाषा में रखता है। इस तरह अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति और सहयोग में भी अनुवाद की महत्वपूर्ण भूमिका है।

## 5.2.3 अनुवाद के स्वरूप

सन्दर्भ के आधार पर अनुवाद के स्वरूप को मुख्य रूप से दो भागों में बाटा जा सकता है–

1. भाषान्तरण सन्दर्भ (सीमित स्वरूप)

2. प्रतीकान्तरण सन्दर्भ (व्यापक स्वरूप)।

सीमित स्वरूप के अन्तर्गत एक भाषा से दूसरी भाषा के बीच 'अर्थ का अन्तरण' किया जाता है। इसके दो आयाम हैं– पाठधर्मी आयाम एवं प्रभावधर्मी आयाम।

पाठधर्मी आयाम के अनुसार होने वाले अनुवाद में स्रोत–भाषा का मूल पाठ ही मुख्य होता है। इसका प्रयोग तकनीकी एवं सूचना प्रधान तथ्यों के अनुवाद में किया जाता है। प्रभावधर्मी आयाम के अन्तर्गत होने वाले अनुवाद में स्रोत–भाषा के पाठ के उस प्रभाव को दिखाया जाता है, जो पाठकों पर पड़ता है। इस तरह का अनुवाद कविता, उपन्यास, कहानी जैसी विधाओं में किया जाता है।

अनुवाद के व्यापक स्वरूप को प्रतीकान्तरण सन्दर्भ कहते हैं। इसके बारे में छबिल कुमार मेहेर ने अपनी पुस्तक 'अनुवाद : प्रक्रिया एवं प्रयोग' में लिखा है कि "अनुवाद के व्यापक स्वरूप (प्रतीकान्तरण सन्दर्भ) में अनुवाद को दो भिन्न प्रतीक व्यवस्थाओं के मध्य होने वाला 'अर्थ' का अन्तरण माना जाता है। ये प्रतीकान्तरण तीन वर्गों में बांटे गए हैं :

1. अन्तःभाषिक अनुवाद (अन्वयान्तर)

2. अन्तरभाषिक अनुवाद (भाषान्तर)

3. अन्तरप्रतीकात्मक अनुवाद (प्रतीकान्तर)।"

यहां अन्तःभाषिक का अर्थ है एक ही भाषा के अन्तर्गत। जब एक ही भाषा के दो विधाओं के बीच अनुवाद किया जाता है, तो उसे अन्तःभाषिक अनुवाद कहते हैं। जैसे किसी भाषा में लिखी गयी कविता को उसी भाषा के गद्य की किसी विधा में किया जाए। अन्तःभाषिक अनुवाद के अन्तर्गत एक भाषा में उपलब्ध सामग्री का अनुवाद किसी अन्य भाषा में किया जा सकता है। अन्तरप्रतीकात्मक अनुवाद में किसी भाषा में उपलब्ध प्रतीक व्यवस्था से किसी अन्य भाषेतर प्रतीक व्यवस्था में अनुवाद किया जाता है। जैसे– बंगला के उपन्यासकार शरत्चन्द्र के उपन्यास 'देवदास' को इसी नाम की हिन्दी फिल्म में परिवर्तित किया जाना।

## 5.2.4 अनुवाद के प्रकार

अनुवाद बहुसंभावनाओं वाला कार्य है। इसके एक से अधिक पक्ष और आयाम होते हैं। इसीलिए अनुवाद के प्रकारों को लेकर विद्वानों ने भिन्न–भिन्न विचार प्रकट किए हैं। भिन्न–भिन्न आधारों पर अनुवाद के प्रकारों का उल्लेख किया जाता है–

**विषयवस्तु के आधार पर :** विषयवस्तु के आधार पर अनुवाद के दो प्रकार हैं–साहित्यिक अनुवाद और साहित्येतर अनुवाद। साहित्यिक अनुवाद के अंतर्गत साहित्य की विभिन्न विधाओं, जैसे– कविता, नाटक, उपन्यास, कहानी तथा अन्य गद्य विधाओं की रचनाओं का अनुवाद होता है। साहित्येतर अनुवाद में साहित्य से भिन्न, जैसे–विज्ञान, तकनीकी,

वाणिज्य, मानविकी, समाजविज्ञान, जनसंचार, विधि एवं प्रशासनिक क्षेत्रों का अनुवाद होता है।

**प्रकृति के आधार पर** : प्रकृति के आधार पर अनुवाद के प्रकार इस प्रकार हैं– शब्दानुसार, छायानुवाद, भावानुवाद, सारानुवाद, टीकानुवाद, वार्तानुवाद।

अनुवाद के प्रकारों के निर्धारण के लिए भोलानाथ तिवारी ने चार आधार माने हैं–

**गद्य–पद्य पर आधारित** : इसके अंतर्गत गद्य का गद्य में और पद्य का पद्य में अनुवाद किया जाता है। कभी–कभी पद्य का गद्य में भी अनुवाद किया जाता है, जैसे– कालिदास के 'मेघदूतम्' का नागार्जुन ने गद्यानुवाद किया है।

**साहित्य विद्या पर आधारित** : इसके अंतर्गत विभिन्न साहित्यिक विधाओं, कविता, नाटक, उपन्यास, कहानी, निबन्ध आदि का दूसरी भाषाओं में अनुवाद किया जाता है।

**विषय आधारित अनुवाद** : इसमें विभिन्न विषयों के अनुवाद किये जाते हैं। इसके लिए उस विषय की प्रकृति का ध्यान रखा जाता है, जैसे– न्याय एवं विधि, वैज्ञानिक एव तकनीकी, धार्मिक एवं पौराणिक, प्रशासनिक अनुवाद, मानविकी एवं समाजशास्त्र, जनसंचार आदि विषयों का अनुवाद करते समय सम्बन्धित विषय की शब्दावली का प्रयोग किया जाता है।

**अन्य प्रकृति पर आधारित अनुवाद** : इसके दो प्रमुख उपभेद हैं– मूलनिष्ठ और मूलमुक्त। मूलनिष्ठ अनुवाद में मूल कृति के कथ्य, शिल्प और विचारों को लगभग वैसे–वैसे रखने की कोशिश की जाती है, तो वहीं मूलमुक्त अनुवाद में अनुवादक को इस बात की स्वतंत्रता रहती है कि वह मूल कृति के भाव को पकड़ कर उससे भिन्न शैली में भिन्न ढंग से प्रस्तुत कर सकता है।

इन सभी विचारों में निहित भावों को आधार बनाते हुए छबिल कुमार मेहेर ने अपनी पुस्तक 'अनुवाद : प्रकृति एवं प्रयोग' में अनुवाद के आठ प्रकार बताए हैं, जो संक्षेप में इस प्रकार से हैं–

**शब्दानुवाद** : स्रोत–भाषा के शब्द एवं क्रम को उसी प्रकार लक्ष्य–भाषा में रूपान्तरित करना शब्दानुवाद कहलाता है।

**भावानुवाद** : इसमें मूल–भाषा में निहित भावों, विचारों एवं सन्देशों को लक्ष्य–भाषा में रूपान्तरित किया जाता है। भावानुवाद का प्रयोग मुख्य रूप से साहित्यिक कृतियों में किया जाता है।

**छायानुवाद** : इस तरह के अनुवाद में मूल पाठ की अर्थ–छाया को ग्रहण कर अनुवाद किया जाता है। छायानुवाद में शब्दों, भावों तथा संकल्पनाओं के प्रभाव को लक्ष्य–भाषा में बदला जाता है।

**सारानुवाद** : सारानुवाद में किसी विस्तार वाली सामग्री, लम्बे आख्यान आदि के भावों को संक्षेप में रूपान्तरित किया जाता है। इसमें पंक्ति दर पंक्ति अनुवाद न कर पूरे लक्ष्य–भाषा के सारांश को प्रस्तुत किया जाता है।

**व्याख्यानुवाद** : इसे भाष्यानुवाद भी कहा जा सकता है। इस तरह के अनुवाद के साथ मूल–पाठ के अनुवाद के साथ ही उसकी व्याख्या भी की जाती है।

**आशु अनुवाद** : आशु अनुवाद को वार्तानुवाद भी कहते हैं। अलग–अलग भाषाओं, भावों एवं विचारों का तात्कालिक अनुवाद ही आशु अनुवाद कहा जाता है। वर्तमान में इस तरह के अनुवाद का अधिक महत्व है।

**आदर्श अनुवाद** : इसे सटीक अनुवाद भी कहते हैं। इसमें स्रोत–भाषा की मूल–सामग्री का अनुवाद उसके आशय, अभिव्यक्ति एवं शिल्प को सुरक्षित रखते हुए सटीक ढंग से लक्ष्य–भाषा में किया जाता है। इसमें अनुवादक को अपनी ओर से कुछ नहीं जोड़ना होता है।

**रूपान्तरण** : एक भाषा में लिखी गई किसी साहित्यिक विधा का रूपान्तरण किसी अन्य साहित्यिक विधा में किया जाता है। वर्तमान में यह बहुत अधिक लोकप्रिय हो रहा है। कविता, कहानियों का नाट्य मंचन तथा किसी कहानी या उपन्यास का फिल्म–धारावाहिक में रूपान्तरण इसके उदाहरण हैं।

## 5.2.5 अनुवाद के गुण

अनुवाद एक जटिल प्रक्रिया है। क्योंकि एक भाषा के पाठ में निहित अर्थ एवं विचार को दूसरी भाषा के पाठ में प्रामाणिक रूप से व्यक्त करना होता है। चूंकि भाषाओं की प्रकृति, संरचना, संस्कृति आदि में भिन्नता होती है, इसलिए एक भाषा से दूसरी भाषा में अनुवाद के लिए अनुवादक को दोनों भाषाओं का ज्ञाता, विशेषज्ञ होना चाहिए। साथ ही उसे दोनों भाषाओं की प्रकृति, संरचना, व्याकरण, शब्द संपदा, संस्कृति से पूर्ण परिचित होना चाहिए। इसी तरह अच्छे अनुवाद से भी कुछ अपेक्षाएं होती हैं, उन्हीं को अनुवाद के गुण भी कहते हैं। एक अच्छे अनुवाद के निम्नलिखित गुण होते हैं–

- अनुवाद में स्पष्टता एवं बोधगम्यता होनी चाहिए।
- अनुवाद को मूल पाठ के भाव के समकक्ष होना चाहिए।
- अनुवाद में मूल कृति सा प्रवाह होना चाहिए।
- किया गया अनुवाद न लग कर मूल कृति सा ही लगना चाहिए।
- अनुवाद में स्रोत पाठ की शैली की रक्षा होनी चाहिए।
- अनुवाद में मूल–पाठ की ही तरह तारतम्यता होनी चाहिए।
- अनुवाद में इस बात का ध्यान रखा जाना चाहिए कि मूल–पाठ में जो बात जिस क्रम में कही गयी हो अनुवाद में भी उस क्रमबद्धता का पालन करना चाहिए।

## 5.2.6 अंग्रेजी से हिन्दी में अनुवाद

अंग्रेजी से हिन्दी में अनुवाद करते समय सबसे पहले मूल पाठ के भाव को समझना चाहिए। तदुपरान्त कठिन शब्दावलियों की सूची तैयार कर सन्दर्भानुसार लक्ष्य भाषा में उसके पर्याय चुनना चाहिए। उल्लेखनीय बात यह है कि चुने गये पर्याय विषय के सन्दर्भानुसार हो जिससे कि मूल पाठ के अर्थ–सन्दर्भ की रक्षा हो सके। अनुवाद में मूल–पाठ के विचार को

यथा संभव लक्ष्य–भाषा में प्रस्तुत करने का प्रयास किया जाना चाहिए। अनुवाद की प्रकृति मूल–पाठ के विषय से संबंधित होती है। साहित्य, कार्यालय की भाषा और विधि से संबंधित विषयों के अनुवाद के लिए उन विषयों की ही शब्दावली का प्रयोग किया जाता है।

उदाहरण के लिए भिन्न–भिन्न प्रकृति के अनुवाद द्रष्टव्य हैं–

**साहित्यानुवाद (पद्य)**

No, all the things once left unuttered
Our duty bids must now be said,
Once falsehood is a loss to us
And only truth can be accepted;
Who zealously conceals the past
Will hardly get on the future.

(Alexander Tvardovsky from 'By Right of Memory' poem written in 1968 and published in1986)

**हिन्दी अनुवाद**

नहीं, वो सबकुछ जो रह गया अनकहा
फर्ज का तकाजा है हम आज सब कहें
हर झूठ से हम कितना कुछ खोते हैं
इसलिए सच, केवल सच हमें मान्य है
जो जबर्दस्ती अतीत पर पर्दा डालते हैं
उनके हाथ भविष्य एकदम सुरक्षित नहीं।

(अलेक्जेंडर वारडेस्की, 'स्मृति के दायरे से' 1968 में लिखी और 1986 मे प्रकाशित कविता से उद्धृत)

**साहित्यानुवाद (गद्य)**

Only the real and the living can survive here-conventional morality withers beneath the burning contempt of the people. Civilisation-culture- decency: these polite myths lose all meaning. The beast rules untamed and unashamed and calls to the beast that is an everyman. It does not matter how deeply hidden the latter may be. You have buried him beneath mounds of inhibition and convention to hibernate. Rampant and alert he will come forth. Only if you are human through and through can you hope to survive the ordeal and such as come through are the chosen of the Lord.

**हिन्दी अनुवाद**

यहां खरा कंचन ही टिक सकता है, क्योंकि उसे जरूरत ही नहीं कि वह कहे कि मै पीतल नहीं हूं। यहां कंचन की मांग नहीं है, पीतल से घबराहट नहीं है। इसमें भीतर पीतल रह

कर ऊपर कंचन दिखने वाला लोभ यहां क्षण भर नहीं टिकता है। बल्कि यहां पीतल का मूल्य है। इसीलिए सोने के धैर्य की यहां परीक्षा है। सच्चे कंचन की पक्की परख यही होगी। यह यहां की कसौटी है। मैं मानती हूं कि जो इस कसौटी पर खरा हो सकता है, वही खरा है। और वही प्रभु का प्यार पा सकता है।

(जैनेन्द्र के उपन्यास 'त्यागपत्र' का अज्ञेय द्वारा किये गये अनुवाद का एक अंश।)

## कार्यालयी अनुवाद

'It is unfortunate that inspite of our clarification that the matter regarding applicability of group incentive scheme to the non-essential indirect classified staff is actively under consideration of government, the newly registered office staff association has served fourteen days strike on 02.08.2014 without following the provision of code of discipline.'

## हिन्दी अनुवाद

'यह स्पष्ट किया जा चुका है कि अप्रत्यक्ष वर्गीकृत कर्मचारियों पर भी प्रोत्साहन योजना लागू करने के प्रकरण द्वारा सक्रियता से विचार किया जा रहा है। यह बहुत दुर्भाग्यपूर्ण है कि हमारे इस स्पष्टीकरण के बावजूद हाल ही में पंजीकृत ऑफिस स्टॉफ एसोसियशन के 'अनुशासन संहिता' के प्रावधानों को अनदेखा करते हुए दिनांक 02.08.2014 को 14 दिन की हड़ताल का नोटिस दिया है।'

## विधिक अनुवाद

Appeals - any person aggrieved by-

(a) an order of the registering authority rejecting his application for registration or requiring him to furnish any security or to comply with any term or condition (not being a prescribed term or condition) specified in the certificate issued to him or suspending or cancelling or refusing to renew the certificate issued to him; or

(b) an order of the competent authority rejecting his application for a permit or requiring him to comply with any terms or conditions (not being a prescribed term or condition) specified in the permit issued to him, or suspending or cancelling or refusing to extend the period of the validity of the permit issued to him; may prefer an appeal against such order to the central government within such period as may be prescribed.

## हिन्दी अनुवाद

**अपीलें** – कोई ऐसा व्यक्ति जो

(अ) रजिस्ट्रीकरण के लिए उसके आवेदन को अस्वीकृत करने वाले या कोई प्रतिभूति देने के लिए उससे अपेक्षा करने वाले या उसको जारी किए गए प्रमाणपत्र में विनिर्दिष्ट किसी निबंधन या शर्त का (जो विहित निबंधन या शर्त नहीं है) अनुपालन करने की अपेक्षा करने वाले अथवा उसको जारी किए गए प्रमाणपत्र को निलंबित या रद्द करने वाले या उसका नवीकरण करने से इन्कार करने वाले रजिस्ट्रीकर्ता प्राधिकारी के किसी आदेश से, या

(ख) किसी अनुज्ञापत्र के लिए उसके आवेदन को अस्वीकृत करने वाले या उसको जारी किए गए अनुज्ञापत्र में विनिर्दिष्ट किन्हीं निबन्धनों या शर्तों का (जो विहित निबंधन या शर्तें नहीं हैं) अनुपालन करने की अपेक्षा करने वाले अथवा उसको जारी किए गए अनुज्ञापत्र को निलंबित या रद्द करने वाले या उसकी विधिमान्यता की अवधि का विस्तार करने से इन्कार करने वाले सक्षम अधिकारी के किसी आदेश से व्यथित है, वह ऐसे आदेश के विरुद्ध अपील ऐसी अवधि के भीतर, जो विहित की जाए, केन्द्रीय सरकार को करेगा।

## सामान्य अनुवाद

Navodaya Vidyalaya

The Government of India launched in 1985-86 a scheme to establish Navodaya Vidyalayas on an overage of one in each district to provide good quality modern education to the talented children predominantly from rural areas. The Admission to Navodaya Vidyalaya is at the level of class VI based on admission test conducted by NCERT. The medium of test is the mother tongue or regional language of the children. The Vidyalayas are fully residential and co-education to which admission to the children from urban areas is generally restricted to 25 per cent of the seats. Efforts are made to ensure that at least one-third of the students in each Vidyalaya are girls. Reservation of seats in favour of children belonging to SC and ST is provided in proportion of their population in the concern district provided that in no district such reservation is less than that of the national level. The Vidyalayas provide education in the stream of Humanitics, Commerce, Science and Vocational up to +2 level and are affiliated to CBSE. There are at present 389 sanctioned Vidyalayas in the country operating in 30 states/UTs.

## हिन्दी अनुवाद

नवोदय विद्यालय

भारत सरकार ने 1985–86 में प्रत्येक जिले में औसतन एक नवोदय विद्यालय स्थापित करने का कार्यक्रम शुरू किया। इसका उद्देश्य मुख्य रूप से ग्रामीण क्षेत्रों के प्रतिभाशाली बच्चों को अच्छे स्तर की आधुनिक शिक्षा उपलब्ध कराना था। नवोदय विद्यालय में दाखिला राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद की प्रवेश परीक्षा के आधार पर छठी कक्षा में होता है। प्रवेश परीक्षा बच्चों की मातृभाषा या क्षेत्रीय भाषा में होगी। नवोदय विद्यालय पूरी तरह से आवासीय विद्यालय है और इसमें सह–शिक्षा की व्यवस्था है। आम तौर पर इसमें शहरी क्षेत्रों के विद्यार्थियों का दाखिला अधिक से अधिक 25 प्रतिशत तक सीमित होता है। प्रत्येक नवोदय विद्यालय में कम से कम एक तिहाई लड़कियों की भर्ती सुनिश्चित करने के प्रयास भी किए जाते हैं। इन विद्यालयों में अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के विद्यार्थियों को सम्बन्धित जिले में उनकी जनसंख्या के अनुपात में आरक्षण की व्यवस्था है। लेकिन आरक्षण राष्ट्रीय औसत से कम नहीं हो सकता। ये

विद्यालय कला, वाणिज्य, विज्ञान और व्यावसायिक शिक्षा के क्षेत्र में +2 स्तर तक शिक्षा प्रदान करते हैं और केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड से सम्बद्ध हैं। इस समय देश के 30 राज्यों और केन्द्रशासित प्रदेशों में 389 विद्यालय चल रहे हैं।

(अनुवाद के सभी उदाहरण छबिल कुमार मेहेर की पुस्तक 'अनुवाद : प्रक्रिया एवं प्रयोग', अनन्य प्रकाशन दिल्ली से साभार)

# Institute of Distance Education
# Rajiv Gandhi University

A Central University

Rono Hills, Arunachal Pradesh


**Contact us:**

+91-98638 68890 | Ide Rgu | Ide Rgu | helpdesk.ide@rgu.ac.in